श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी—चतुर्थ पुष्प

भट्टारक रत्नकीर्ति एवं कुमुदचन्द्र व्यक्तित्व एवं कृतित्व

□

[संवत् १६३१ से १७०० तक होने वाले ६८ कवियों का परिचय, मूल्यांकन तथा उनकी कृतियों का मूल पाठ]

लेखक एवं सम्पादक
डॉ० कस्तूरचन्द कासलीवाल

प्रकाशक :
श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी, जयपुर

प्रथम संस्करण १९८१ कार्तिक २०३८ प्रतियां — १०००

प्रकाशक— श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी
८६७ अमृत कलश मूल्य — ४० रुपये
बरकत कालोनी, किसान मार्ग
टोंक फाटक, जयपुर ३०२०१५

मुद्रक— कपूर आर्ट प्रिन्टर्स, जयपुर

श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी—एक परिचय

प्राकृत एव संस्कृत के पश्चात् राजस्थानी एव हिन्दी भाषा ही एक ऐसी भाषा है जिसमें जैन आचार्यों, भट्टारको, सन्तो एव विद्वानो ने सबसे अधिक लिखा है। वे गत ८०० वर्षों से उसके भण्डार को समृद्ध बनाने में लगे हुए हैं। उन्होंने प्रबन्ध काव्य लिखे, खण्ड काव्य लिखे, चरित लिखे, रास, फागु एव वेलिया लिखी। और न जाने कितने नामो से काव्य लिखकर हिन्दी साहित्य के भण्डार को समृद्ध बनाया। राजस्थान, मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, एव देहली के सैकडो जैन शास्त्र भण्डारो में जैन कवियो की रचनाओ का विशाल सग्रह मिलता है। जिसमें से किन्ही का नामोल्लेख राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारो की ग्रन्थ सूचियो के पाँच भागो में हुआ है। इधर श्री महावीर क्षेत्र से ग्रथ सूचियो के अतिरिक्त, राजस्थान के जैन सन्त व्यक्तित्व एव कृतित्व, महाकवि दौलतराम कासलीवाल तथा टोडरमल स्मारक भवन से महापडित टोडरमल पर गत कुछ वर्षों में पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं लेकिन हिन्दी के विशाल साहित्य को देखते हुए ये प्रकाशन बहुत थोडे लग रहे थे। इसलिये किसी ऐसी सस्था की कमी खटक रही थी जो जैन कवियो द्वारा निबद्ध समस्त हिन्दी कृतियो को उनके मूल्यॉकन के साथ प्रकाशित कर सके। जिससे हिन्दी साहित्य के इतिहास में जैन कवियो को उचित स्थान प्राप्त हो तथा हाईस्कूल एव कालेज के पाठ्यक्रम में इन कवियो की रचनाओ को भी कही स्थान प्राप्त हो सके।

स्वतन्त्रता संस्था की योजना—

इसलिये सम्पूर्ण हिन्दी जैन कवियो की कृतियो को 20 भागो मे प्रकाशित करने के उद्देश्य से सन् 1977 मे श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी नाम से एक स्वतन्त्र सस्था की स्थापना की गयी। साथ मे यह भी निश्चय किया गया कि हिन्दी कवियो के 20 भागो की योजना पूर्ण होने पर सस्कृत, प्राकृत एव अपभ्रश के आचार्यों पर भी इसी प्रकार की सिरीज प्रकाशित की जावे। जिससे समस्त जैनाचार्यों एव कवियो की साहित्यिक सेवाओ से जन सामान्य परिचित हो सके तथा देश के विश्व-विद्यालयो में जैन विद्या पर जो शोध कार्य प्रारम्भ हुआ है उसमे और भी गति आ सके।

श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी की हिन्दी योजना के अन्तर्गत निम्न २० भाग प्रकाशित करने की योजना बनायी गयी।

१ महाकवि ब्रह्म रायमल एवं भट्टारक त्रिभुवनकीर्ति (प्रकाशित)
२ कविवर बूचराज एव उनके समकालीन कवि ,,
३ महाकवि ब्रह्म जिनदास व्यक्तित्व एव कृतित्व ,,
४. भट्टारक रत्नकीर्ति एव कुमुदचन्द्र ,,
५ आचार्य सोमकीर्ति एव ब्रह्म यशोधर प्रेस में
६. महाकवि वीरचन्द एव महिचद
७ विद्याभूषण, ज्ञानसागर एव जिनदास पाण्डे
८. कविवर रूपचन्द, जगजीवन एव ब्रह्म कपूरचन्द
९ महाकवि भूधरदास एव बुलाकीदास
१० जोधराज गोदीका एव हेमराज
११ महाकवि द्यानतराय
१२ प० भगवतीदास एव भाउ कवि
१३ कविवर खुशालचन्द काला एव अजयराज पाटनी
१४ कविवर किशनसिंह, नथमल बिलाला एव पाण्डे लालचन्द
१५ कविवर बुधजन एव उनके समकालीन कवि
१६. कविवर नेमिचन्द्र एव हर्षकीर्ति
१७ भैय्या भगवतीदास एव उनके समकालीन कवि
१८ कविवर दौलतराम एव छत्तदास
१९ मनराम, मन्नासाह, लोहट कवि
२० २०वी शताब्दि के जैन कवि

योजना तैयार होने के पश्चात् उसके क्रियान्वय का कार्य आरम्भ कर दिया गया। एक ओर प्रथम भाग "महाकवि ब्रह्मरायमल एव भट्टारक त्रिभवनकीर्ति" के लेखन एव सम्पादन का कार्य प्रारम्भ किया गया तो दूसरी ओर अकादमी की योजना एव नियम प्रकाशित करवा कर समाज के साहित्य प्रेमी महानुभावो के पास सस्था सदस्य बनने के लिये भेजे गये। कितने ही महानुभावो से साहित्य प्रकाशन की योजना के सम्बन्ध मे विचार विमर्श किया गया। मुझे यह लिखते हुए प्रसन्नता है कि समाज के सभी महानुभावो ने अकादमी की स्थापना एव उसके माध्यम से साहित्य प्रकाशन योजना का स्वागत किया है और अपना आर्थिक सहयोग देने का आश्वासन दिया। सर्व प्रथम अकादमी की प्रकाशन योजना को जिन महानुभावो का

समर्थन प्राप्त हुआ उनमें सर्व श्री स्व० साहू शान्तिप्रसाद जी जैन, श्री गुलाबचन्द जी गगवाल रेनवाल, श्री अजितप्रसाद जी जैन ठेकेदार देहली, श्रीमती सुदर्शन देवी जी छाबडा जयपुर, प्रोफेसर अमृतलालजी जैन दर्शनाचार्य एव डा० दरबारीलाल जी कोठिया वाराणसी, श्रीमती कोकिला सेठी जयपुर, श्रीमान् हनुमान बक्सजी गगवाल कुली, प० अनूपचन्द जी न्यायतीर्थ जयपुर के नाम उल्लेखनीय है। योजना की क्रियान्विति, प्रथम भाग के लेखन एवं प्रकाशन एव अकादमी के प्रारम्भिक सदस्य बनने के अभियान मे कोई १॥ वर्ष निकल गया और हमारा सबसे पहिला भाग जून १६७८ मे ज्येष्ठ शुक्ला पचमी के शुभ दिन प्रकाशित होकर सामने आया। उस समय तक अकादमी के करीब १०० सदस्यो की स्वीकृति प्राप्त हो चुकी थी।

"महाकवि ब्रह्म रायमल्ल एव भट्टारक त्रिभुवनकीर्ति" के प्रकाशित होते ही अकादमी की योजना मे और भी अधिक महानुभावो का सहयोग प्राप्त होने लगा। जुलाई १६७६ में इसका दूसरा भाग "कविवर बूचराज एव उनके समकालीन कवि" प्रकाशित हुआ जिसका विमोचन एक भव्य समारोह में हिन्दी के वरिष्ठ विद्वान् डा० सत्येन्द्र जी द्वारा किया गया गया प्रस्तुत भाग मे ब्रह्म बूचराज, ठक्कुरसी, छीहल, गारवदास एव चतरूमल का जीवन परिचय, मूल्याकन एव उनकी ४४ रचनाओ के पूरे मूल पाठ दिये गये है।

अकादमी का तीसरा भाग महाकवि ब्रह्म जिनदास व्यक्तित्व एव कृतित्व का विमोचन मई ८० मे पाचवा (राजस्थान) मे आयोजित पच कल्याण प्रतिष्ठा समारोह मे पूज्य क्षु० सिद्धसागर जी महाराज लाडनू वालो ने किया था। इस भाग के लेखक डा० प्रेमचन्द रावका है जो युवा विद्वान हैं तथा साहित्य सेवा मे जिनकी विशेष रूचि है। तीसरे भाग का समाज मे जोरदार स्वागत हुआ और सभी विद्वानो ने उसकी एव अकादमी के साहित्य प्रकाशन योजना की सराहना की।

अकादमी का चतुर्थ भाग "भट्टारक रत्नकीर्ति एव कुमुदचन्द्र" पाठको के समक्ष प्रस्तुत है। इस भाग मे सवत् १६३१ से १७०० तक होने वाले भट्टारक रत्नकीर्ति एव कुमुदचन्द्र के अतिरिक्त ६६ अन्य हिन्दी कवियो का भी परिचय एव मूल्याकन प्रस्तुत किया गया है। यह युग हिन्दी का स्वर्णयुग रहा और उसमे कितने ही ख्याति प्राप्त विद्वान हुये। महाकवि बनारसीदास, रूपचन्द, ब्रह्म गुलाल, ब्रह्म रायमल्ल, भट्टारक, अभयचन्द, समयसुन्दर जैसे कवि इसी युग के कवि थे।

पंचम भाग

अकादमी का पचम भाग आचार्य सोमकीर्ति एव ब्रह्म यशोधर "प्रेस मे प्रकाशनार्थ दिया जा चुका है। तथा जिसके नवम्बर ८१ तक प्रकाशन की सभावना

है। सोमकीर्ति एव यशोधर दोनो ही १६ वीं शताब्दि के उद्भट् विद्वान तथा रास्थानी के कट्टर समर्थक थे।

सम्पादन में सहयोग

अकादमी के प्रत्येक भाग के सम्पादन मे लेखक एव प्रधान सम्पादक के अतिरिक्त तीन-तीन विद्वानो का सहयोग लिया जाता है। प्रस्तुत भाग के सम्पादक तीर्थंकर के यशस्वी सम्पादक डा० नेमीचन्द जैन इन्दौर, युवा विद्वान डा० भाग चन्द भागेन्दु दमोह एव उदीयमान विदुषी श्रीमती सुशीला बाकलीवाल हैं। इस भाग के सम्पादन मे तीनो विद्वानो का जो सहयोग मिला है, उसके लिए हम उनके पूर्ण आभारी है। अब तक अकादमी को जिन विद्वानो का सम्पादन मे सहयोग प्राप्त हो चुका है उनमे डा० सत्येन्द्र जी, डा० दरबारीलालजी कोठिया वाराणसी, प० अनूप चन्द जी न्यायतीर्थ जयपुर, डा० ज्योतिप्रसाद जी लखनऊ, डा० हीरालाल जी महेश्वरी जयपुर, प० मिलापचन्द जी शास्त्री जयपुर, डा० नरेन्द्र भानावत जयपुर, प० भवरलाल जी न्यायतीर्थ जयपुर के नाम उल्लेखनीय हैं।

नवीन सदस्यों का स्वागत

अब तक अकादमी के ३०० सदस्य बन चुके हैं। जिनमे ७० सचालन समिति मे तथा २३० विशिष्ट सदस्य है। तीसरे भाग के प्रकाशन के पश्चात् सम्माननीय श्री रमेशचन्द्र जी सा० जैन पी०एस० मोटर कम्पनी देहली एव आदरणीय श्री वीरेन्द्र हेगडे धर्मस्थल ने अकादमी सरक्षक बनने की कृपा की है। श्री रमेशचन्दजी उदीयमान युवा उद्योगपति हैं। ये उदारमना है तथा समाज सेवा मे खूब मनोयोग से कार्य करते है। समाज को उनसे विशेष आशाए हैं। उन्होने अकादमी का सरक्षक बन प्राचीन साहित्य के प्रकाशन मे जो योग दिया है उसके लिये हम उनके पूर्ण आभारी हैं। अकादमी के चौथे सरक्षक धर्मस्थल के प्रमुख धर्माधिकारी श्री वीरेन्द्र हेगडे है। जो बीसवी शताब्दि के अभिनव चामुडराय हैं, तथा समाज एव साहित्य की सेवा करने मे जिनकी विशेष रूचि रहती है। जो दक्षिण एव उत्तर भारत की जैन समाज के लिये सेतु का कार्य करते है। उनके सरक्षक बनने से अकादमी गौरवान्वित हुई है।

इसी तरह गया (बिहार) के प्रमुख समाज सेवी श्री रामचन्द्रजी जैन ने उपाध्यक्ष बन कर साहित्य प्रकाशन मे जो सहयोग दिया है उसके लिये हम उनके विशेष आभारी है। इनके अतिरिक्त सगीतरत्न श्री ताराचन्दजी प्रेमी फिरोजपुर झिरका, श्री हीरालालजी रानीवाले जयपुर, राजस्थानी भाषा समिति के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री नाथूलाल जी जैन एडवोकेट श्री नन्दकिशोर जी जैन जयपुर, प० गुलाब

चन्द जी दर्शनाचार्य जबलपुर ने सचालन समिति का सदस्य बन कर अकादमी के के कार्य सचालन मे जो सहयोग दिया है उसके लिये हम इन सभी महानुभावो के आभारी है। इसी तरह करीब ५० से भी अधिक महानुभावों ने अकादमी की विशिष्ट सदस्यता स्वीकार की है। उन सब महानुभावों के भी हम पूर्ण आभारी है। आशा है भविष्य में सदस्य बनाने की दिशा मे और भी तेजी आवेगी जिससे पुस्तक प्रकाशन रहे कार्य मे और भी गति अधिक आ सके।

सहयोग

अकादमी के सदस्य बनाने मे वैसे तो सभी महानुभावो का सहयोग मिलता रहता है लेकिन यहा हम श्री ताराचन्द जी प्रेमी के विशेष रूप मे आभारी है जिन्होंने अकादमी के साहित्यिक गतिविधियो मे रूचि लेते हुए नवीन सदस्य बनाने के अभियान मे पूरा सहयोग दिया है। इनके अतिरिक्त प० मिलापचन्द जी शास्त्री जयपुर, डा० दरबारीलाल जी कोठिया वाराणसी, पं० सत्यन्धर कुमार जी सेठी उज्जैन, डा० भागचन्द जी भागेन्दु दमोह आदि का विशेष सहयोग प्राप्त होता रहता है जिनके हम विशेष रूप से आभारी है।

सन्तो का शुभाशीर्वाद

अकादमी को सभी जैन सन्तो का शुभाशीर्वाद प्राप्त हैं। परम पूज्य आचार्य विद्यासागर जी महाराज, एलाचार्य श्री विद्यानन्दजी महाराज, आचार्य कल्प श्री श्रुतसागर जी महाराज, १०८ मुनि श्री वर्धमान सागर जी महाराज, पूज्य क्षुल्लक श्री सिद्धसागर जी महाराज लाडनू वाले, भट्टारक जी श्री चारूकीर्ति जी महाराज मूडबिद्री एव श्रवणबेलगोला आदि सभी सन्तो का शुभाशीर्वाद प्राप्त है।

अन्त मे समाज के सभी साहित्य प्रेमियो से अनुरोध है कि वे श्री श्री महावीर ग्रथ अकादमी के स्वय सदस्य बन कर तथा अधिक से अधिक सख्या मे दूसरो को सदस्य बनाकर हिन्दी जैन साहित्य के प्रकाशन मे अपना योगदान देने का कष्ट करे।

डा० कस्तूरचन्द कासलीवाल
निदेशक एव प्रधान संपादक

कार्याध्यक्ष की कलम से

श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी के चतुर्थ भाग-भट्टारक रत्नकीर्ति एवं कुमुदचन्द्र को माननीय सदस्यो एव पाठको के हाथो मे देते हुए मुझे अतीव प्रसन्नता है। प्रस्तुत भाग मे प्रमुख दो राजस्थानी कवियो का परिचय एव उनकी कृतियो के पाठ दिये गये हैं लेकिन उनके साथ साठ से भी अधिक तत्कालीन कवियो का भी सक्षिप्त परिचय दिया गया है। इससे पता चलता है कि सवत् १६३१ से १७०० तक जैन कवियो ने हिन्दी मे कितने विशाल साहित्य की सर्जना की थी। प्रस्तुत भाग के प्रकाशन से इतने अधिक कवियो का एक साथ परिचय हिन्दी साहित्य के इतिहास के लिये एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि मानी जावेगी। इस प्रकार जिस उद्देश्य को लेकर अकादमी की स्थापना की गई थी उसकी ओर वह आगे बढ रही है। सन् १६८१ के अन्त तक इसके अतिरिक्त दो भाग और प्रकाशित हो जावेंगे ऐसा मुझे पूर्ण विश्वास है। २० भाग प्रकाशित होने के पश्चात् सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य के अधिकाश अज्ञात, अल्प ज्ञात एव महत्त्वपूर्ण जैन कवि प्रकाश मे ही नही आवेंगे किन्तु सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य का क्रमबद्ध इतिहास भी तैयार हो सकेगा जो अपने आप मे एक महान् उपलब्धि होगी।

प्रस्तुत भाग के लेखक डा० कस्तूर चन्द कासलीवाल हैं जो अकादमी के निदेशक एव प्रधान सम्पादक भी है। डा० कासलीवाल समाज के सम्माननीय विद्वान् है जिनका समस्त जीवन साहित्य सेवा मे समर्पित है। यह उनकी ४१वी कृति है।

अकादमी की सदस्य सख्या मे निरन्तर वृद्धि हो रही है। तीसरे भाग के प्रकाशन पश्चात् श्रीमान् रमेशचन्द जी सा० जैन देहली ने अकादमी के सरक्षक बनने की महती कृपा की है उनका हम हृदय से स्वागत करते है। श्री रमेशचन्द जी समाज एव साहित्य विकास मे जो अभिरुचि ले रहे हैं अकादमी उन जैसा उदार सरक्षक पाकर स्वय गौरवान्वित है। धर्मस्थल के आदरणीय श्री डी० वीरेन्द्र हेगडे ने भी अकादमी का सरक्षक बन कर हमे जो सहयोग दिया है उसके लिये हम उनका अभिनन्दन करते हैं। इसी तरह गया निवासी श्री रामचन्द्रजी जैन ने उपाध्यक्ष बन कर अकादमी को जो सहयोग दिया है हम उनका भी हार्दिक स्वागत करते है। सचालन समिति के नये सदस्यो मे सर्वश्री ताराचन्द जी सा० फिरोजपुर झिरका, महेन्द्रकुमार जी पाटनी जयपुर, हीरालाल जी रानीवाला जयपुर, नाथूलाल

जी जैन ऐडवोकेट जयपुर एव श्री नन्दकिशोर जी सा० जैन जयपुर के नाम उल्लेखनीय है। हम सभी का हार्दिक स्वागत करते है। इसी तरह करीब ४० महानुभाव अकादमी के विशिष्ट सदस्य बने हैं। सभी माननीय सदस्यो का मैं हार्दिक स्वागत करता हू। इस तरह ८०० सदस्य बनाने की हमारी योजना मे हमें ३५ प्रतिशत सफलता मिली है। मैं आशा करता हूँ कि भविष्य मे अकादमी को समाज का और भी अधिक सहयोग मिलेगा।

हम चाहते हैं कि अकादमी के करीब १०० सेट देश-विदेश के विभिन्न विश्वविद्यालयो के हिन्दी विभागाध्यक्षो को नि शुल्क भेंट किये जावें जिससे उन्हे जैन कवियो द्वारा निबद्ध साहित्य पर शोध कार्य कराने के लिये सामग्री मिल सके। इसलिये मैं समाज के उदार एव साहित्यप्रेमी महानुभावो से प्रार्थना करूगा कि वे अपनी ओर से पाँच-पाँच सेट भिजवाने की स्वीकृति भिजवाने का कष्ट करें।

प्रस्तुत भाग के माननीय सम्पादको—डा० नेमीचन्द जी जैन इन्दौर, डा० भागचन्द जी भागेन्दु दमोह एव श्रीमती सुशीला जी बाकलीवाल जयपुर का भी आभारी हूँ जिन्होने प्रस्तुत भाग का सम्पादन करके उसके प्रकाशन मे अपना अमूल्य सहयोग दिया है। अन्त मे मैं अकादमी के सरक्षको श्री अशोककुमार जी जैन देहली, पूनमचन्द जी सा० जैन भरिया एव रमेशचन्द जी सा० जैन देहली, अध्यक्ष माननीय सेठ कन्हैयालाल जी सा० जैन मद्रास, सभी उपाध्यक्षो, सचालन समिति के सदस्यो एव विशिष्ट सदस्यो का आभारी हूँ जिनके सहयोग से अकादमी द्वारा साहित्यिक कार्य सम्भव हो रहा है। डा० कासलीवाल सा० को मे किन शब्दो मे धन्यवाद दूँ, वे तो इसके प्राण है और जिनकी सतत साधना से यह कष्ट साध्य कार्य सरल हो सका हैं।

८ लोवर राउडन स्ट्रीट
कलकत्ता २०

रतनलाल गंगवाल

संपादकीय

अब यह लगभग निर्विवाद हो गया है कि हिन्दी-साहित्य के विकास का अध्ययन/अनुसधान जैन साहित्य के अध्ययन के बिना सभव नहीं है। इस शताब्दी के तीसरे दशक मे जब आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास लिख रहे थे तब, और आज जब भी कोई साहित्येतिहास के लेखन का प्रयत्न करता है तब उसके लिये यह असभव ही होता है कि वह जैन साहित्य की अनदेखी करे और इस क्षेत्र में अपने कदम आगे रखे। राजस्थान कहने को मरुभूमि है; किन्तु यहाँ रस की जो अजस्र/मधुर धारा प्रवाहित हुई है, वह अन्यत्र देखने को नही मिलती। जैन साहित्य की दृष्टि से राजस्थान के शास्त्र-भण्डार बहुत समृद्ध माने जाते हैं। इन भण्डारो मे से बहुत सारे ग्रन्थो को तो सामने लाया जा सका है, किन्तु बहुत सारे हमारी असावधानी/प्रमाद के कारण नष्ट हो गये हैं। यह नष्ट हुआ या विलुप्त साहित्य हमारे सास्कृतिक और आँचलिक रिक्त की दृष्टि से कितना महत्त्वपूर्ण था, यह कह पाना तो सभव नहीं है, किन्तु जो भी पर्त-दर-पर्त उघड़ता गया है, उससे ऐसा लगता है कि उसके बने रहने से हमे हिन्दी साहित्य के विकास की कई महत्त्व की कडियाँ मिल सकती थी। इस दृष्टि से डॉ० कस्तूरचन्द कासलीवाल का प्रदेय उल्लेखनीय और अविस्मरणीय है। जैसे कोई नये टापू या द्वीप की खोज करता है और वहाँ के क्वारे खनिज-धन की जानकारी देता है ठीक वैसे ही डॉ० कासलीवाल जैसे मनीषी ने जैन शास्त्रागारो में जा-जा कर वहाँ की दुर्लभ/अस्तव्यस्त/बहुमूल्य पाण्डुलिपियो को सूचीबद्ध किया है और दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी से प्रकाशित कराया है। ये सूचिया न केवल जैन साहित्य के लिए अपितु सपूर्ण भारतीय वाङ्मय के लिए बहुमूल्य धरोहर है। पूरा काम इतनी भारी-भरकम है कि इसे किसी एक या दो आदमियो ने सपन्न किया है इस पर एकाएक भरोसा करना सभव नही होता तथापि यह हुआ है और बडी सफलता के साथ हुआ है। अत हम सहज ही कह सकते हैं कि डा० कासलीवाल की भूमिका जैन साहित्य और हिन्दी साहित्य के मध्य सीधे सबन्ध बनाने की ठीक वैसी ही है जैसी कभी वास्कोडिगामा की रही थी, जिसने 15 वी सदी के अन्त में भारत और यूरोप को समुद्री मार्ग से जोडा था।

हिन्दी साहित्य की भाँति ही हिन्दी भाषा की सरचना तथा उसके विकास का अध्ययन भी प्राकृत/अपभ्रश कीअनुपस्थिति मे करना संभव नही है। ये दोनो भाषा-

ईतर जैन साहित्य से संबंधित हैं। इनके अध्ययन का मतलब होता है हिन्दी की आर्थिक पृष्ठभूमि को समझने का वस्तुनिष्ठ प्रयास। अभी इस दृष्टि से हिन्दी भाषा का व्युत्पत्तिक अध्ययन शेष है, जिसके अभाव में उसके बहुत सारे शब्दो को देशज आदि कह कर अव्याख्यायित छोड दिया जाता है *, किन्तु जब प्राकृत/अपभ्रंश /राजस्थानी के विविध व्यावर्तनो का उनमें उपलब्ध जैन साहित्य का, शैली/भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन किया जायेगा और कुछ प्रशिक्षित व्यक्ति इस दायित्व को सपन्न करेंगे तब हम यह जान पायेगे कि एक निवृत्तमूलक चिन्तन–परम्परा ने प्रवृत्तिपरक इलाके को क्या कितना योग दिया है ? किस तरह हिन्दी–साहित्य के विधा–वैविध्य का विकास हुआ और किस तरह हिन्दी-भाषा अभिवृद्ध हुई। इतना ही नहीं बल्कि मानना पडेगा कि द्राविड भाषाओ के विकास में भी जैन रचनाकारो ने–विशेषत. साधुओं और भट्टारको ने-विस्मयजनक योगदान किया था। एक तो हम इन सारे तथ्यो की सूक्ष्म छानबीन कर नही पाये, हैं, दूसरे कई बार हम अनुसधान के क्षेत्र में भरपूर वस्तुनिष्ठा से काम करने/निष्कर्ष लेने मे चूक जाते है। हमारे इस सलूक से साहित्य के विकास को भलिभाँति समझने मे कठिनाई होती है।

जहाँ तक इतिहास का सबध है उसके सामने कोई घटना इस या उस जाति अथवा इस या उस सप्रदाय की नही होती। उसका सीधा सरोकार घटना के व्यत्तित्व और उसके प्रभाव से होता है, इसलिए जो लोग साहित्य के वस्तुन्मुख समीक्षक होते हैं वे किसी एक कालखण्ड को सिर्फ एक अकेला अलहदा कालखण्ड मान कर नही चल पाते वरन् तथ्यो का 'इन डेप्थ' विश्लेषण करते हैं और उनके सापेक्ष सबधो/अन्त सबधों को खोजने का अनवरत यत्न करते हैं। कोई बीता 'कल' किसी उपस्थित 'आज' की ही परिणति होता है, और कोई प्रतीक्षित 'आज' किसी आगामी 'कल' मे मे ही जनमता है। आनेवाले कल की खोज-प्रक्रिया बडी कठिन होती है। एक तो जब तक हम वर्तमान को सापेक्ष नहीं देखते तब तक आगामी कल की सही अगवानी नही कर पाते, दूसरे हम अपने अतीत यानी विगत कल की ठीक से व्याख्या भी नही कर पाते। प्राय हमने माना है कि ये तीनो परस्पर विच्छिन्न चलते हैं, किन्तु दिखाई देते हैं कि ये वैसा कर रहे है, कर वैसा सकते नही है। कल/आज/कल एक तिकोन है बल्कि कहे, समत्रिभुज है जिसकी आधार-भुजा आज है। जो कौम अपने 'आज' को नही समझ पाती, वह न तो अपने विगत 'कल' मे से कुछ ले पाती है और न ही प्रतीक्षित 'कल' को कोई स्पष्ट आकार दे पाती है।

धर्म/दर्शन/सस्कृति ही ऐसे आधार हैं, जो आगामी कल को एक सश्लिष्ट आकृति प्रदान करने मे समर्थ होते हैं। साहित्य अक्षर के माध्यम से आगामी कल

---

* राजस्थान के शास्त्र–भण्डारों की ग्रन्थ–सूची, चतुर्थ भाग, डा० वासुदेव शरण अग्रवाल, पृष्ठ 4

को आज में रूपान्तरित करता है। मान कर चलें कि जो कृति आज आपको एक वेष्टन मे अस्त-व्यस्त मिल रही है, उसका भी कभी कोई आज था और वह भी कभी किसी शिल्पी के भावना-गर्भ मे कोई प्रतीक्षित कल रही थी। कितना रोमांचक है यह सब ! ! ऐसी हजारो हजार कृतियों को छुआ है डा० कासलीवाल ने और जाना है उनके "आज" को अपनी सवेदनशील अ गुलियो के जरिये ' फिर भी कहना होगा कि अभी काम अधूरा है और उसकी परिपूर्णता के लिए किसी ऐसे समीक्षक/पाठालोचक की आवश्यकता है, जो सवेदनशील होने के साथ ही एक निर्मम भाषाविज्ञानी भी हो - ऐसा, जो तथ्य को तथ्य मानने के अलावा और कुछ मानने को ही सहज तैयार न हो। सापेक्ष दृष्टि से अभी साहित्य/भाषा के विविध स्तरीन अन्त सबधो के विश्लेषण/समीक्षण की जरूरत से भी हम मुह नही मोड सकते।

श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी, जयपुर ने इस दिशा मे मात्र रचनात्मक कदम ही नही उठाये हैं अपितु 3 बहुमूल्य ग्रन्थो के प्रकाशन द्वारा कुछ ऐसे ठोस आधार प्रस्तुत कर दिये है, जो भारतीय वाड्मय को अधिक गहराई में/से समझने की दिशा मे बहुत उपयोगी भूमिका निभायेंगे। जब तक चारो ओर से हमारे पास इस तरह की सामग्री एकत्र/आकलित नही हो जाती तब तक कोई निश्चित शक्ल हम इतिहास को नही दे सकते। इतिहास भी एक 'जेनरेटिव्ह' अस्तित्व है। इस सदर्भ मे डा० कासलीवाल/महावीर ग्रन्थ अकादमी की भूमिका ऐतिहासिक है, और इसलिए अविस्मरणीय है।

हिन्दी/साहित्य का दुर्भाग्य रहा है कि उसका कोई एकीकृत/सश्लिष्ट अध्ययन अभी तक नही हो पाया है। उसके इस अध्ययन को-यदि कही शुरू हुआ भी है तो अ ग्रेजी या राजनीति ने छिन्नभिन्न/बाधित किया है और उसे एक धारावाहिक प्रक्रिया नही बनने दिया है हिन्दी- कोश- -रचना का इतिहास इसका एक जीवन्त उदाहरण है। भारत की लोकभाषाओ का, वस्तुत, अध्ययन/ अनुसधान जैसा होना चाहिए था' वैसा हो नही पाया है और कई दुर्लभ स्रोत अब नष्ट हो गए हैं। आंचलिक बोलियो के सुर (टोनेशन) का अध्ययन तो अब इसलिए असभव हो गया है कि इनमे से बहुतो के प्रयोक्ता ही अब नही रहे हैं। लगता है यही हल अब हमारी पाण्डुलिपियो का होने वाला है।

हमारे शास्त्र- भण्डारो मे सदियो से सुरक्षित साहित्य भी अब जीर्णोद्धार के लिए उद्ग्रीव/उत्कण्ठित है। डा० कासलीवाल ने तो अभी लिफाफे पर लिखे जाने वाले पतों की सूचियाँ दी हैं, असली पत्र लिखाने का काम तो उनके अकादमी ने शुरु किया है। सूचियाँ मात्र इन्फर्मेशन' हैं, ग्रन्थ-सपादन उनके बाद का सोपान है। अकादमी की मुश्किलें बहुत स्पष्ट है। एक तो लोगो की मनोवृत्ति ग्रन्थो

पर से अपना कब्जा छोडने की नहीं है, दूसरे उनके साथ अब एक खतरनाक व्यावसायिकता भी जुड़ गयी है। इन/ऐसी कठिनाइयों से जूझते हुए अकादमी ने जो कुछ किया है और जो कुछ वह अपने सीमित साधनों में करने के लिए सकल्पित है, उससे भारतीय संस्कृति और साहित्य का मस्तक गौरव से ऊँचा उठेगा इतना ही नहीं बल्कि राजस्थानी/हिन्दी साहित्य समृद्ध भी होगा ।

विज्ञान की कृपा से आज ऐसे साधन उपलब्ध हैं कि हम दुष्प्राप्य पाण्डुलिपियों को अध्ययन के लिए सुरक्षित/ व्यवस्थित प्राप्त कर सकते हैं, किन्तु मेरी समझ में अभी ऐसा कोई सुसमृद्ध अनुसधान-केन्द्र जैनों का नहीं हैं जहाँ सारे ग्रन्थ एक साथ उपलब्ध हों या उनके उपलब्ध कर दिये जाने की कोई कारगर व्यवस्था हो ताकि कोई शोधार्थी बिना किसी बाधा/असुविधा के कोई तुलनात्मक अध्ययन कर सके। श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, हमें विश्वास है, जल्दी ही उस अभाव को पूरा करेगी और हमारे इस स्वप्न को यथार्थ में बदल सकेगी।

प्रस्तुत ग्रन्थ अकादमी का चतुर्थ प्रकाशन है। प्रथम में महाकवि ब्रह्म रायमल्ल एव भट्टारक त्रिभुवनकीर्ति, द्वितीय मे कविवर बूचराज एव उनके समकालीन कवि और तृतीय मे महाकवि ब्रह्म जिनदास, के व्यक्तित्व एव कृतित्व पर विचार किया गया है। ये तीनो ग्रन्थ क्रमश 1978, 79, और 1980 मेप्रकाशित हुए हैं। इन ग्रन्थों में जो बहुमूल्य सामग्री सकलित/सपादित है, उससे साहित्य का भावी अध्येता/ अनुसधित्सु अनुगृहीत हुआ है। प्रस्तुत ग्रन्थ मे भट्टारक रत्नकीर्ति एव भट्टारक कुमुदचन्द्र के व्यक्तित्व एव कृतित्व पर व्यापक/गहन अभिमन्थन हुआ है। कहा गया है कि 1574-1643 ई० का समय भारतीय इतिहास मे शान्ति समृद्धि का था। इस समय भट्टारको ने साहित्य/समाज-रचना के क्षेत्र मे एक विशिष्ट भूमिका का निर्वाह किया। भ रत्नकीर्ति गुजरात के थे, किन्तु उन्होंने हिन्दी की उल्लेखनीय सेवा की। उनके प्रमुख शिष्य कुमुदचन्द्र हुए जिन्होंने जैन साहित्य/धर्म को तो समृद्ध किया ही, किन्तु हिन्दी साहित्य को भी विभूषित किया। ग्रन्थान्त मे उनकी कृतियाँ सकलित हैं, जिनसे उन दिनो के हिन्दी-रूप पर तो प्रकाश पडता ही है दोनो गुरु-शिष्य की साहित्य सेवाओ का भी भलीभाति द्योतन हो जाता है। कुल मिलाकर महावीर ग्रन्थ अकादमी जो ऐतिहासिक कार्य कर रही है नागरी प्रचारिणी सभा' वाराणसी, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग; और हिन्दुस्तानी अकादमी, इलाहाबाद जैसी साधन-सपन्न संस्थाओ के समान, उससे उसकी सुगध दिगदिगन्त तक फैलेगी और उसे समाज का/सरकार का/जन-जन का सहयोग सहज ही मिलेगा।

—डा० नेमीचन्द्र जैन
सपादक "तीर्थंकर"
कृते सम्पादक मडल

इन्दौर,
21 सितम्बर 1981

लेखक की ओर से

राजस्थानी एव हिन्दी साहित्य इतना विशाल है कि सैकड़ो वर्षों की साधना के पश्चात् भी उसके पूरे भण्डार का पता लगाना कठिन है। उसकी जितनी अधिक खोज की जाती है, साहित्य सागर मे से उतने ही नये नये रत्नो की प्राप्ति होती रहती है। जैन कवियो की कृतियो के सम्बन्ध मे मेरी यह धारणा और भी सही निकलती है। राजस्थान, मध्यप्रदेश, देहली, एव गुजरात के शास्त्र भण्डारो मे अब भी ऐसी सैकड़ो रचनाओ की उपलब्धि होने की सम्भावना है जिनके सम्बन्ध मे हमे नाम मात्र का भी ज्ञान नही है। पता नही वह दिन कब आवेगा जब हम पूरी तरह से ऐसी कृतियो की खोज कर चुके होगें।

चतुर्थ भाग मे सवत् १६३१ से १७०० तक की अवधि मे होने वाले जैन कवियो की राजस्थानी कृतियो को लिया गया है। ये ७० वर्ष हिन्दी जगत के लिये स्वर्ण युग के समान थे जब उसे महाकवि सूरदास, तुलसीदास, बनारसीदास, रत्नकीर्ति, कुमुदचन्द्र, ब्रह्म रायमल्ल जैसे कवि मिले। जिनका समस्त जीवन हिन्दी विकास के लिये समर्पित रहा। उन्होने जीवन पर्यन्त लिखने लिखाने एव उसका प्रचार करने को सबमे अधिक महत्त्व दिया तथा नवीन काव्यो के सृजन के युग का निर्माण किया।

रत्नकीर्ति एव कुमुदचन्द्र इसी युग के कवि थे। वे दोनो ही भट्टारक पद पर सुशोभित थे। समाज के आध्यात्मिक उपदेष्टा थे। स्थान स्थान पर विहार करके जन जन को सुपथ पर लगाना ही उनके जीवन का ध्येय था। स्वय का एक बड़ा सघ था जो शिष्य प्रशिष्यो से युक्त था। लेकिन इतना सब होते हुये भी उनके हृदय मे साहित्य सेवा की प्यास थी और उसी प्यास को बुझाने मे वे लगे रहते थे। जब देश मे भक्ति रस की धारा बह रही हो। देश की जनता उसमे झूम रही हो तो वे कैसे अपने आपको अछूता रख सकते थे इसलिये उन्होने भी समाज मे एक नये युग का सूत्रपात किया। राधा कृष्ण की भक्ति गीतो के समान नेमि राजुल के गीतो का निर्माण किया और उनमे इतनी अधिक सरलता, विरह प्रवणता एव करुण भावना भर दी कि समाज उन गीतो को गाकर एक नयी शक्ति का अनुभव करने लगा। जैन सन्त होते हुए भी उन्होने अपने गीतो मे जो दर्द भरा है, राजुल की विरह वेदना एव मनोदशा का वर्णन किया है। वह सब उनकी काव्य प्रतिभा का परिचायक है। जब राजुल मन ही मन नेमि से प्रार्थना करती है तथा एक घड़ी के

लिये ही सही, माने की कामना करती है तो उस समय उसकी तड़फन सहज ही में समझ में आ सकती हैं। रत्नकीर्ति एव कुमुदचन्द्र ने नेमि राजुल से सम्बन्धित कृतिया लिख कर उस युग में एक नयी परम्परा को जन्म दिया। उन्होंने नेमिनाथ का बारहमासा लिखा, नेमिनाथ फाग लिखा, नेमीश्वर हमची लिखी और राजुल की विरह वेदना को व्यक्त करने वाले पद लिखे।

लेकिन भट्टारक कुमुदचन्द्र ने नेमि राजुल के अतिरिक्त और भी रचनायें निबद्ध कर हिन्दी साहित्य के भण्डार को समृद्ध बनाया। उन्होने 'भरत बाहुबली छन्द' लिख कर पाठको के लिये एक नये युग का सूत्रपात किया। भरत-बाहुबलि छन्द वीर रस प्रधान काव्य है और उसमें भरत एवं बाहुबली दोनो की वीरता का सजीव वर्णन हुआ है। इसी तरह कुमुदचन्द्र का ऋषभ विवाहलो है। जिसमे आदिनाथ के विवाह का बहुत सुन्दर वर्णन दिया गया है। उस युग मे ऐसी कृतियो की महती आवश्यकता थी। वास्तव में इन दोनो कवियो की साहित्य सेवा के प्रति समस्त हिन्दी जगत सदा आभारी रहेगा।

इन दोनो सन्त कवियो के समान ही उनके शिष्य प्रशिष्य थे। जैसे गुरु वैसे ही शिष्य। इन्होंने भी अपने गुरु की साहित्य रुचि को देखा, जाना और उसे अपने जीवन मे उतारा। ऐसे शिष्य कवियों मे भट्टारक अभयचन्द्र, शुभचन्द्र, गणेश, ब्रह्म जयसागर, श्रीपाल, सुमतिसागर एव सयमसागर के नाम विशेषत उल्लेखनीय है। इन कवियो ने अपने गुरु के समान अन्य विषयक पद एव लघु काव्यो के निर्माण मे गहरी रुची ली। साथ मे अपने गुरु के सम्बन्ध मे जो गीत लिखे वे भी सब हिन्दी साहित्य के इतिहास मे निराले हैं। वे ऐसे गीत है जिनमे इतिहास एव साहित्य दोनो का पुट है। इन गीतो मे रत्नकीर्ति, कुमुदचन्द्र, अभयचन्द्र, एव शुभचन्द के बारे मे महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक सामग्री मिलती है। ये शिष्य प्रशिष्य भट्टारको के साथ रहते थे और जैसा देखते वैसा अपने गीतो में निबद्ध करके जनता को सुनाया करते थे। प्रस्तुत भाग मे ऐसे कुछ गीतो को दिया गया है।

भट्टारक रत्नकीर्ति, कुमुदचन्द्र, अभयचन्द्र एव शुभचन्द के सम्बन्ध में लिखे गये गीतो मे पता चलता है कि उस समय इन भट्टारको का समाज पर कितना व्यापक प्रभाव था। साथ ही समाज रचना मे उनका कितना योग रहता था। वे आध्यात्मिक गुरु थे। धार्मिक क्रियाओ के जनक थे। वे जहा भी जाते धार्मिक उत्सव आयोजित होने लगते और एक नये जीवन की धारा बहने लगती। मगलगीत गाये जाते तोरण और वन्दनवार लगाये जाते। उनके प्रवेश पर भव्य स्वागत किया जाता। और ये जैन सन्त अपनी अमृत वाणी से सभी श्रोताओ को सरोबार कर देते। सच ऐसे सन्तो पर किस समाज को गर्व नहीं होगा

हिन्दी जैन कवियो की साहित्यिक सेवा का हिन्दी जगत के सामने प्रस्तुत करने के लिये जितना अधिक व्यापक अभियान छेड़ा जावेगा हिन्दी के विद्वानों, शोधार्थियो एव विश्व विद्यालयो में उतना ही अधिक इनका अध्ययन हो सकेगा। इन कवियो की साहित्यिक सेवाओ के व्यापक प्रचार की दृष्टि से साहित्यिक गोष्ठियां होना आवश्यक है जिसमे उनके कृतित्व पर खुल कर चर्चा हो सके साथ ही मे विभिन्न कवियो से उनका तुलनात्मक अध्ययन किया जा सके।

भट्टारक रत्नकीर्ति, कुमुदचन्द्र आदि कवियो की रचनायें राजस्थान के विभिन्न भण्डारो मे संग्रहीत हैं। जिनमे ऋषभदेव, डूगरपुर, उदयपुर, जयपुर, अजमेर, आदि के शास्त्र भण्डार उल्लेखनीय हैं। छोटी रचनाये होने से उन्हे गुटकों अधिक स्थान मिला है। जो उनकी लोकप्रियता का द्योतक है। तत्कालीन समाज मे इनका व्यापक प्रचार था, ऐसा लगता है। इसलिये अभी बागड एव गुजरात के शास्त्र भण्डारो मे सग्रहीत गुटको की विशेष खोज की आवश्यकता है जिससे उनकी और भी कृतियो की उपलब्धि हो सके।

आभार

पुस्तक के सम्पादन मे डॉ० नेमीचन्द जैन इन्दौर, डॉ० भागचन्द भागेन्दु दमोह एव श्रीमती सुशीला बाकलीवाल जयपुर ने जो सहयोग दिया है उसके लिये मैं उनका पूर्ण आभारी हूँ। इसी तरह मैं प० अनूपचन्द जी न्यायतीर्थ का भी आभारी हूँ जिनके सहयोग के अभाव मे पुस्तक का लेखन नही हो सकता था।

पुस्तक के कुछ पृष्ठो को जब मैंने परम पूज्य आचार्य विद्यासागर जी महाराजा को जबलपुर मे दिखलाया तो उन्होने अपनी हार्दिक प्रसन्नता प्रकट करते हुए भविष्य मे इस ओर बढने का आशिर्वाद दिया। इसलिये मैं उनका पूर्ण आभारी हूँ। मै परम पूज्य एलाचार्य विद्यानन्द जी महाराज का भी आभारी हूँ जिन्होने अपना शुभाशीर्वाद देने की महती कृपा की है। अन्त मे मैं श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी के सभी माननीय सदस्यो एव पदाधिकारियो का आभारी हूँ जिन्होने अकादमी की स्थापना मे अपना आर्थिक सहयोग देकर समस्त हिन्दी जैन साहित्य को प्रकाशित करने मे अपना महत्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया है।

जयपुर ८-६-८१ डा० कस्तूरचन्द कासलीवाल

विषयानुक्रमणिका

क्र० स०　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　पृष्ठ सख्या

पूर्व पीठिका

स० १६२१ से १७०० तक का काल देश के इतिहास मे शाति एव समृद्धि का काल माना जाता है। इन वर्षों में तीन मुगल सम्राटो का शासन रहा। स० १६३१ से १६६२ तक अकबर बादशाह ने, स० १६६२ से १६८५ तक जहागीर ने, तथा शेष स० १६८५ से १७०० तक शाहजहा ने देश पर शासन किया। राजनीतिक सगठन, शान्ति तथा सुव्यवस्था की दृष्टि से अकबर का शासन देश के इतिहास में सर्वथा प्रशसनीय माना जाता है। इसी तरह जहागीर एव शाहजहा के शासन काल में भी देश मे शान्ति एव पारस्परिक सद्भाव का वातावरण बना रहा। अकबर का राज-दरबार कवियो, विद्वानो, सगीतज्ञो एव कला प्रेमियो से अलकृत था। उस युग मे कला की सर्वांगीण उन्नति होने के साथ साथ हिन्दी कविता भी अपने उत्कृष्ट विकास को प्राप्त हुई। महाकवि सूरदास एव तुलसीदास दोना ही अकबर के शासन काल मे हुए। इनके अतिरिक्त स्वय अकबर के दरबार मे भी कितने ही हिन्दी के प्रसिद्ध कवि थे जिनमे नरहरी, तानसेन एव रहीम के नाम उल्लेखनीय है। हिन्दी के प्रसिद्ध जैन कवि बनारसीदास अकबर एव जहागीर के शासन काल मे हुए। जिन्होने अपनी अर्धकथानक नामक जीवन कथा में दोनो ही बादशाहो के शासन की प्रशसा की है। वे अकबर के शासन से इतने प्रभावित थे कि जब उन्हे बादशाह की मृत्यु के समाचार मिले तो वे स्वय मूर्छित हो गये और सम्राट के प्रति अपनी गहरी सवेदना प्रकट की।

इन ७० वर्षों मे देश में भट्टारक युग भी अपने चरमोत्कर्ष पर था। राजस्थान मे एक ओर भट्टारक चन्द्रकीर्ति तथा भट्टारक देवेन्द्रकीर्ति के आमेर, अजमेर, नागौर, आदि नगरो मे केन्द्र थे तो बागड प्रदेश भट्टारक सकलकीर्ति की परम्परा मे होने वाले भट्टारक सुमतिकीर्ति, गुणकीर्ति तथा भट्टारक लक्ष्मीचन्द की परम्परा मे होने वाले भट्टारक रत्नकीर्ति, कुमुदचन्द्र अपने समय के प्रमुख जैन सन्त माने जाते थे। इन भट्टारको के कारण सारे देश मे एव विशेषत उत्तर भारत मे जैनधर्म की प्रभावना एव उसके सरक्षण को विशेष बल मिला। उस समय के वे सबसे बड़े सन्त थे जिनका समाज पर तो पूर्ण प्रभाव था ही किन्तु तत्कालीन शासन पर भी उनका अच्छा प्रभाव था। शासन की ओर से उनके विहार के अवसर पर उचित प्रबन्ध ही नही किया जाता था किन्तु उनका सम्मान भी किया जाता था। शासन

मे उनके इस प्रभाव ने भट्टारक सस्था के प्रति जन साधारण मे श्रद्धा एव आदर के भाव जागृत करने में गहरा योग दिया। इन भट्टारको के प्रत्येक नगर या गाव मे केन्द्र होते थे जिनमे या तो उनके प्रतिनिधि रहते थे या जब कभी वे विहार करते तो वहा कुछ दिन ठहर कर समाज को धार्मिक एव सामाजिक क्षेत्र मे दिशा निर्देशन देते थे। वे धार्मिक विधि विधान कराते एव पच कल्याणक प्रतिष्ठा के प्रतिष्ठाचार्य बन कर उसकी पूरी विधि सम्पन्न कराते। धार्मिक क्षेत्र मे उनका अखण्ड प्रभाव था। समाज के सभी वर्गों मे उनके प्रति सहज भक्ति थी। राजस्थान, गुजरात, दिल्ली, हरियाणा, मध्यप्रदेश के अधिकाश क्षेत्र मे भट्टारक सस्था का पूर्ण प्रभाव था। वास्तव मे समाज पर उनका पूर्ण वर्चस्व था। जब वे किसी ग्राम या नगर मे प्रवेश करते तो सारा समाज उनके स्वागत मे पलक पावडे बिछा देता था और गद्गद् होकर उनकी भक्ति एव अर्चना मे लग जाता था।

१७वी शताब्दी अर्थात् स० १६३१ से १७०० तक का ७० वर्षों का काल हमारे देश मे भक्ति काल के रूप मे माना जाता है। उस समय देश के सभी भागो मे भक्ति रस की धारा बहने लगी थी। इस काल मे होने वाले महाकवि सूरदास एव तुलसीदास ने भी सारे देश को भक्ति रूपी गगा मे डुबोया रखा और अपना सारा साहित्य भक्ति साहित्य के रूप मे प्रसारित किया। एक ओर सूरदास ने अपनी कृतियो मे भगवान कृष्ण के गुणो का व्याख्यान किया तो दूसरी ओर तुलसीदास ने राम काव्य लिखकर देश मे भगवान राम के प्रति भक्ति भावना को उभारने मे योग दिया। ये दोनो ही महाकवि समन्वयवादी कवि थे। इसलिये तत्कालीन समाज ने इनको खूब प्रश्रय दिया और राम एव कृष्ण की भक्ति मे अपने आपको डुबोया रखा।

जैनधर्म निवृत्ति प्रधान धर्म है। उसे त्याग धर्म माना जाता है। इसलिये जैनधर्म मे जितनी त्याग की प्रधानता है उतनी ग्रहण की नही है। उसमे आत्मा को परमात्मा बनाने का लक्ष्य ही प्रत्येक मानव का प्रमुख कर्त्तव्य माना जाता है। तीर्थंकर मानव रूप मे जन्म लेकर परम पद प्राप्त करते है उनके साथ हजारो लाखों सन्त उन्ही के मार्ग का अनुसरण कर निर्वाण प्राप्त करके जीवन के अन्तिम लक्ष्य को प्राप्त करते हैं। इसलिये जैनधर्म मे भक्ति को उतना अधिक उच्च स्थान प्राप्त नही हो सका। यद्यपि अर्हद् भक्ति से अपार पुण्य की प्राप्ति होती है और फिर स्वर्ग की उत्तम गति मिलती है। ससारिक वैभव प्राप्त होना है लेकिन निर्वाण प्राप्ति के लिये तो भक्ति के स्थान निवृति मार्ग को ही अपनाना पडेगा और तभी जाकर ससारिक बन्धनो से मुक्ति मिलेगी।

17वी शताब्दि मे जब सारा उत्तर भारत राम व कृष्ण की भक्ति मे समर्पित

था, तब ऐसे समय मे जैन समाज भी कैसे अछूता रहता। उस समय समाज में दो धारायें बहने लगी। एक अध्यात्म की ओर दूसरी भक्ति की। एक धारा के अगुआ थे महाकवि बनारसीदास जिन्होने समयसार नाटक के माध्यम से अध्यात्म की लहर को जीवन दान दिया। स्थान-स्थान पर अध्यात्म सैलिया स्थापित होने लगी जिनमे बैठ कर आत्म-चर्चा करने मे समाज का युवा वर्ग अत्यधिक रस लेने लगा। सागानेर, आगरा, मुलतान जैसे नगर इन अध्यात्म सैलियों के प्रमुख केन्द्र थे। इन शैलियों में भेद-विज्ञान, आत्म रहस्य, निमित्त उपादान आदि विषयों पर चर्चायें होती थी। वास्तव मे ये सैलिया सामाजिक सगठन की भी एक प्रकार से केन्द्र बिन्दु बन गई थी। दूसरी ओर मेवाड, बागड एव राजस्थान के अन्य नगरो मे अर्हद् भक्ति की गगा भी बहने लगी। तत्कालीन जैन कवि नेमिनाथ को लेकर उसी तरह के भक्ति एव शृ गार परक पदो की रचना करने लगे जिस तरह सूरदास एव मीरा के पद रचे गये। इस तरह के साहित्य के निर्माण करने मे भट्टारक रत्नकीर्ति एव भट्टारक कुमुदचन्द्र का विशेष योगदान रहा। इन्होंने अर्हद् भक्ति की गगा बहायी तथा आगे होने वाले कवियो के लिये दिशा निर्देश का कार्य किया।

हिन्दी जैन साहित्य के लिये सवत् १६३१ से १७०० तक का समय अत्यधिक प्रगतिशील रहा। इस ७० वर्षों मे राजस्थानी एव हिन्दी भाषा के जितने जैन कवि हुए है उतने इसके पहिले कभी नही हुए। ढूढाहड, बागड, आगरा, आदि क्षेत्र इनके प्रमुख केन्द्र थे। ऐसे राजस्थानी एव हिन्दी जैन कवियो की सख्या साठ से भी अधिक है जिनके नाम निम्न प्रकार हैं—

१ महाकवि बनारसीदास	२ ब्रह्म गुलाल
३ मनराम	४. पाण्डे रूपचन्द
५ हर्षकीर्ति	६ कल्याणकीर्ति
७ ठाकुर कवि	८ देवेन्द्र
९ जैनन्द	१० वर्धमान कवि
११ आचार्य जयकीर्ति	१२ प० भगवतीदास
१३ ब्र० कपूरचन्द	१४ मुनि राजचन्द
१५ पाण्डे जिनदास	१६ पाण्डे राजमल्ल
१७. छीतर ठोलिया	१८. भट्टारक वीरचन्द्र
१९, खेनसी	२० ब्रह्म अजित
२१ आ० नरेन्द्र कीर्ति	२२. ब्र० रायमल्ल
२३ जगजीवन	२४ कुअरपाल
२५ सालिवाहन	२६ सुन्दरदास
२७ परिहानन्द	२८ परिमल्ल

२९ वादिचन्द्र	३० कनककीर्ति
३१ विष्णुकवि	३२. हीरकलश
३३ समयसुन्दर	३४ जिनराज सूरी
३५ दामो	३६ कुशललाभ
३७. मानसिंह मान	३८ उदयराज
३९ श्रीसार	४० गणि महानन्द
४१ सहजकीर्ति	४२ हीरानन्द मुनीम
४३ हेमविजय	४४ पदमराज
४५ जयराज	४६. भट्टारक रत्नकीर्ति
४७ भट्टारक कुमुदचन्द्र	४८ शातिदास
४९ भ० अभयचन्द	५० भ० शुभचन्द
५१. भ० रत्नचन्द	५२ श्रीपाल
५३. ब्र० जय सागर	५४. गणेश
५५ सुमतिसागर	५६ दामोदर
५७ कल्याण सागर	५८ आणन्द सागर
५९ विद्यासागर	६० ब्रह्म धर्मरुचि
६१. आचार्य चन्द्रकीर्ति	६२ संयमसागर
६३ धर्मचन्द्र	६४ राघव
६५ मेघसागर	६६ धर्मसागर
६७ गोपालदास	६८ पाण्डे हेमराज

इस प्रकार ७० वर्ष मे ६८ हिन्दी जैन कवियो का होना किसी भी जाति समाज एव देश के लिये गौरव की वस्तु है। वास्तव मे जैन कवियो ने देश मे हिन्दी कृतियो का धुआधार प्रचार किया और हिन्दी भाषा मे अधिक से अधिक लिखने का प्रयास किया। इन कवियो मे महाकवि बनारसीदास, रूपचन्द, पाण्डे जिनदास, पाण्डे राजमल्ल, भट्टारक रत्नकीर्ति, एव कुमुदचन्द्र तथा श्वेताम्बर कवि समयसुन्दर एव हीरकलश तथा कुशललाभ के अतिरिक्त शेष कवि समाज के लिये एव हिन्दी जगत के लिये अज्ञात से है। एक बात और महत्वपूर्ण है कि भट्टारक रत्नकीर्ति एव कुमुदचन्द्र जैसे सन्त गुजरात वासी होने पर भी उन्होने हिन्दी को अपनी रचनाओ माध्यम बनाया। यही नही इस भट्टारक परम्परा के अधिकाश विद्वान् शिष्य प्रशिष्यो ने भी इसी भाषा को अपनाया और उसमें पद, गीत जैसे सरल एव लघु रचनाओ को प्राथमिकता दी। भट्टारक रत्नकीर्ति एव कुमुदचन्द्र की परम्परा मे होने वाले कवियो के अतिरिक्त शेष कवियो का सक्षिप्त परिचय निम्न प्रकार है —

१–महाकवि बनारसीदास

बनारसीदास का जन्म सवत् १६४३ माघ शुक्ला ग्यारस रविवार को हुआ था। इनके पिता का नाम खरगसेन था। प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात वे कभी कपड़े का, कभी जवाहरात का और कभी दूसरी चीजो का व्यापार करने लगे। लेकिन व्यापार मे इन्हें कभी सफलता नही मिली। इसीलिये डा० मोतीच द ने इन्हे असफल व्यापारी के नाम से सम्बोधित किया है। दरिद्रता ने इनका कभी पीछा नही छोडा और अन्त तक वे उससे जूझते रहे।

साहित्य की ओर इनका प्रारम्भ से ही झुकाव था। सर्व प्रथम वे शृ गार रस की कविता करने लगे और इसी चक्कर मे वे इश्कबाजी मे भी फ्रस गये। अचानक ही इनके जीवन मे मोड आया और उन्होने शृ गार रस पर लिखी हुई "नवरस पद्यावली" की पूरी पाण्डुलिपि गोमती मे बहा दी। इसके पश्चात् वे अध्यात्मी बन गये और जीवन भर अध्यात्मी ही बने रहे। ये अपने समय मे ही प्रसिद्ध कवि हो गये थे और समाज मे इनकी रचनाओ की माग बढने लगी थी।

रचनाए

बनारसीदास की निम्न रचनाए मानी जाती हैं —

१–नाममाला	२–नाटक समयसार
३–बनारसी विलास	४–अर्द्ध कथानक
५–माझा	६–मोह विवेक युद्ध
७–नवरस पद्यावली	

इनमे नवरस पद्यावली के अतिरिक्त सभी रचनाये प्राप्त होती है।

१ नाममाला

बनारसीदास ने धनजय कवि की सस्कृत नाममाला और अनेकार्थकोश के आधार पर इस ग्र थ की रचना की थी। यह पद्य बद्ध शब्द कोश १७५ दोहो में लिखा गया है। इसका रचनाकाल सवत् १६७० आश्विन शुक्ला दशमी है। नाम माला कवि की मौलिक रचना मानी जाती है।

२ नाटक समयसार

कवि की समस्त कृतियो मे नाटक समयसार अत्यधिक महत्वपूर्ण रचना मानी जाती है। पाण्डे राजमल्ल ने समयसार कलशो पर बालाबोधिनी नामक हिन्दी टीका

लिखी थी। उसी टीका ग्रथ के आधार पर बनारसीदास ने नाटक समयसार की रचना की थी जिसका रचनाकाल सवत् १६९३ आश्विन शुक्ला त्रयोदशी है। इस ग्रथ मे ३१० दोहा सोरठा, २४५ इकतीसाकवित्त ८६ चौपाई ३७ तईसा सवैया २० छप्पय १८ घनाक्षरी ७ अडिल और ४ कुडलिया इस प्रकार सब मिलाकर ७२७ पद्य हैं। नाटक समयसार मे अज्ञानी की विभिन्न अवस्थाए, ज्ञानी की अवस्थाए ज्ञानी का हृदय, ससार और शरीर का स्वप्न दर्शन, आत्म जागृति, आत्मा की अनेकता मनकी विभिन्न दौड एव सप्त व्यसनो का सच्चा स्वरूप प्रतिपादित करने के साथ जीव, अजीव, आस्रव, बध, सवर, निर्जरा और मोक्ष इन सात तत्वो का काव्य रूप मे चित्रण किया गया है।

३ **बनारसी विलास**

इस ग्रथ मे महाकवि बनारसीदास की विभिन्न रचनाओ का सग्रह हैं। यह सग्रह आगरा निवासी जगजीवन द्वारा बनारसीदास के कुछ समय पश्चात् विक्रम सवत १७०१ चैत्र शुक्ला द्वितीया को किया गया था। बनारसीदास की अन्तिम कृति "कर्म प्रकृति विधान" र का स १७०० चैत्र शुक्ला द्वितीया भी इस विलास मे मिलती है। विलास मे सग्रहीत रचनाओ के नाम निम्न प्रकार है —

१ जिनसहस्रनाम, २ सूक्ति मुक्तावलि, ३ ज्ञान बावनी, ४ वेद निर्णय पचासिका, ५ शलाका पुरुषो की नामावली, ६ मार्गणा विचार, ७ कर्म प्रकृति विधान, ८ कल्याण मन्दिर स्तोत्र, ९ साधु वन्दना, १० मोक्ष पैडी, ११ करम छत्तीसी, १२ ध्यान बत्तीसी, १३ अध्यात्म बत्तीसी, १४ ज्ञान पच्चीसी १५ शिव पच्चीसी, १६ भवसिन्धु चतुर्दशी, १७ अध्यात्म फाग, १८ सोलह तिथि १९ तेरह काठिया २० अध्यात्म गीत, २१ पचपद विधान, २२ सुमति देवी का अष्टोत्तर शत नाम, २३ शारदाष्टक, २४ नवदुर्गा विधान, २५ नाम निर्णय विधान, २६ नवरत्न कवित्त, २७ अष्ट प्रकारी जिनपूजा, २८ दश दान विधान, २९ दश बोल ३० पहेली, ३१ प्रश्नोत्तर दोहा, ३२ प्रश्नोत्तर माला, ३३ अवस्थाष्टक, ३४ षटदर्शनाष्टक, ३५ चातुर्वर्ण, ३६ अजितनाथ के छद, ३७ शातिनाथ जिनस्तुति, ३८ नवसेना विधान, ३९ नाटक समयसार के कवित्त, ४० फटकर कवित्त, ४१ गोरखनाथ के वचन, ४२ वैद्य आदि के भेद, ४३ परमार्थ वचनिका, ४४ उपादान निमित्त की चिट्ठी, ४५ निमित्त उपादान के दोहे, ४६ अध्यात्म पद, ४७ परमार्थ हिंडोलना ४८ अष्टपदी मल्हार, ४९ चार नवीन पद।

उक्त समस्त रचनाओ मे हमे महाकवि बनारसीदास की बहुमुखी प्रतिभा काव्य कुशलता एव अगाध विद्वता के दर्शन होते हैं। विलास की अधिकाश रचनाए

किसी न किसी रूप मे अध्यात्म विषय से ओत प्रोत हैं। कवि आत्मा और परमात्मा के गुणगान मे इतने विभोर हो गये थे कि उनका प्रत्येक शब्द अध्यात्म की छाया लेकर निकलता था।

४ अर्द्धकथानक

यह कवि द्वारा लिखा हुआ स्वय का जीवन चरित्र है। कवि ने इसमे अपने ५५ वर्ष की जीवन घटनाओ को सही रूप मे उपस्थित किया है। इसमे सवत् १६९८ तक की सभी घटनायें आ गई हैं। अर्द्धकथानक मे तत्कालीन शासन व्यवस्था एव सामाजिक स्थिति का भी अच्छा परिचय मिलता है। इसमे सब मिला कर ६७३ चौपई तथा दोहे हैं।

५ मोहविवेक युद्ध

यह एक रूपक काव्य है जिसका नायक विवेक एव प्रति नायक मोह है। दोनो मे विवाद होता है और दोनो ओर की सेवाये सजकर युद्ध करती हैं। अन्त मे विवेक की जीत होती है। वर्णन करने की शैली एव नायक प्रतिनायक का सवाद सरल किन्तु गम्भीर अर्थ लिये हुए हैं।

६ मांझा

माझा कवि की ऐसी कृति है जिसका सग्रह बनारसी विलास मे नही मिलता है। यह उपदेशात्मक कृति है जिसमे केवल १३ पद्य है। कवि ने अपन नाम का प्रथम, चतुथ एव तेरहवे पद्य मे उल्लेख किया है। रचना नवीन है इस लिये पाठको के रसास्वादन के लिये पूरी रचना ही दी जा रही है।

माया मोह के तु मतवाला तू विपया विषहारी
राग दोष पयो बान ठगो चार कषायन मारी
कुरम कुटुम्ब दीफा ही फायो मात तात सुत नारी
कहत दास बनारसी, अलप सुख कारने तो नर भव बाजी हारी ॥१॥
तू नर भो हार अकारज कीतो समझन रहीलयो पासा।
मानम जनम अमोलिक हीरा, हार गवायो खासा।
दसं दृष्टा ते मिलन दहेला, नर भव गत विचवासा ॥२॥

बासा मिलें न नरभव गति विच, अरण र गत विच जासी।
बाजीगर दे बाँदरवा गए, मे मैं कर विलवासी।

नहीं सुजोनि जनम कुल कोइ, जित वल ग्राती पासी,
जो जग लेष सोइ घर नचसी, नाव ग्रनेक धरासी ॥३॥

झूठी माया क्या लपटाया ना कर झूठा माणा।
कूचा कोटि मवासा कब लग, इक दिन परभव जाना।
जो जम ग्रसे प.र ले जावे, चलै न जोर धिगाणा।
दास बनारसी दुवे भारवे, जम वस ग्रमर रग न राणा ॥४॥

राणा रक ग्रमर चिर नाही, सब कोई चलन हारा।
भरी साह परभोले खाली जो जग चलसी सारा।
जो घरि ग्रासो इक दिन भजसो, ग्रायो ग्रपनी वारा।
तेनु सोच नही पर भवरा, पाय बैठो पसारा ॥५॥

पाय पसारी बैठ न जूठी, तू भी चलण भाइ।
मात पिता सुत बन्धु तेरी ग्रन्त न कोई सहाइ।
सुख विच खावण देस बसेगी, दुख विच कोन धुराइ।
भली बुरी सगति के लकती, जीतो झोली पाइ ॥६॥

झोली पाय चल्यौ कछु करनी, छिनह तूफा जेहा।
कचन छाड के कचविडाजो, तू वियारी केहा।
खोटा खरा परख न जानो लखे न लाहा देता।
ग्रगे खाली चलीयो ईवे, पिछे ग्राहो जेहा ॥७॥

सुनहो बानी सुतगुरुबानी, तै बसत ग्रमोलह पाइ।
बीरज 'फोर' भयो बडभागी, कर परमाद न राइ।
जव लग पथ न साधे, सिबदा, तेडी पुरी पर न काइ।
चेतन चेत समाचेतन का, सद्गुरु यो समुझाइ ॥८॥

सद्गुरु समुझावे तेरे हित कारन, मूरख समझ कि माही।
जिन राहे लोक लुटीदा, पवे तिना ही राही।
राग दोष पयो बान ठगी, रा सीधा उघाही ॥
बहु चिरकाल लुटायी सेया, कुण मूरख समझ कि माही ॥९॥

कदी न समझो सो कित कारन, मोह चमारा लाया
झूठी झूठी मे मे करदा, ग्रन्ध ले जनम गवायो।
कामिन कनक दुहु सिर तेरे कोई मन्त्र भलेरा पाया।
चुग चुण कनक ते गलीया विच, कमला नाव धराया ॥१०॥

कमला होय केहृा सान होया, सुरति नरहृा काइ।
चोदह लाख चुरासी जोन बिच, दर दर करे सगाइ।
हिक जोके हिक नवे सहेरे, मूरख दी मुरखाइ।
पाप पुण्य कर पोष कबीला, अन्त न कोई सहाइ।।१३।।

अन्त न कोई सहाइ नेरे, तू क्या पच पच मरवा।
नरक निगोद दुख सिर पर, अहमक मूल - मरवा।
जनम जनम विच होय बिकाना, हृथ विषया देवरदा।
कोई अमर मरवेसी भोदू मेरी मेरी करदा।।१२।।

गज सुकुमाल सुणी जिणवाणी, सकल विषय तिनैं त्यागी।
नमसकार कर नेमिनाथ को, भए मसान विरागी।
तन बुसरा आमन बच कामा, सिघा पर तब कागी।
कहृत दाम बनारसी अन्त गढ, केवली सुनत बुध के रागी।।१३।।

२ ब्रह्म गुलाल

ब्रह्म गुलाल १७वी शताब्दि के हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वान थे। उनके गुरु का नाम भट्टारक जगभूषण था जो उस समय के विद्वान एव लोकप्रियता प्राप्त भट्टारक थे। ब्रह्म गुलाल को उन्ही की प्रेरणा से काव्य निर्माण मे रुचि जाग्रत हुई और उन्होने "कृपण जगावनहार" जैसी रचना लिखी।[1]

ब्रह्म गुलाल का जन्म रपरी और चन्दवार गाव के समीप टापू नामक गाव मे हुआ था। डा प्रेमसागर जैन ने इस गाव को वर्तमान मे आगरा जिले मे होना लिखा है।[2] इस गाव के तीन ओर नदी बहती है। उस समय वहा का राजा कीरतसिह था। उसी के राज्य मे ब्रह्म गुलाल के घनिष्ट मित्र मथुरामल रहते थे जो अपने कुल के सिरमौर एव दान देने मे सुदर्शन के समान थे।

ब्रह्म गुलाल भेष बदल कर लोगो को प्रसन्न किया करते थे। एक बार जब उन्होने सिह का भेष धारण किया तो वे शेर की क्रिया करने लगे और एक राजकुमार को मार दिया। लेकिन जब राजकुमार के पिता को मुनि बन कर सम्बोधने

---

१ जगभूषण भट्टारक पाइ, करौ ध्यान-अन्तरगति आइ।
ताको सेवगु ब्रह्म गुलाल, कीजो कथा कृपन उर साल

२ हिन्दी जैन भक्ति काव्य और कवि

गये तो फिर सदा के लिये ही मुनि बन गये। इनकी अब तक निम्न रचनायें उपलब्ध हो चुकी है।

१	त्रेपन क्रिया[1] (स १६६५)	२	कृपण जगावन हार
३	धर्म स्वरूप	४	समवसरण स्तोत्र[2]
५.	जलगालन क्रिया	६	विवेक चौपई
७	कक्का बत्तीसी (१६९५)	८	गुलाल पच्चीसी
९	चौरासी जाति की जयमाल	१०	वर्धमान समोसरन वर्णन
११	फुटकर कवित्त		

उक्त सभी रचनाये राजस्थान के विभिन्न शास्त्र भण्डारो मे उपलब्ध होती है। डा प्रमसागर जैन ने इनकी केवल ६ रचनाओ के ही नाम गिनाये हैं।

१ वर्धमान समोसरण वर्णन[3]—यह इनकी प्रथम रचना मालूम देती है जिसको उन्होने सवत् १६२८ मे हस्तिनापुर मे समाप्त की थी जैसा कि निम्न पाठ मे उल्लेख मिलता है—

> सोलहसै अठबीस मे माघ दसै सुदी पेख।
> गुलाल ब्रह्म भनि गीत इती जयौ नद को सीख।
> कुस देश हथनापुरी राजा विक्रम साह
> गुलाल ब्रह्म जिनधम जय उपमा दीजे काह

2 **त्रेपन क्रिया**—इसका दूसरा नाम त्रेपन क्रिया कोश भी मिलता है। इस काव्य मे जैनो की त्रेपन क्रियाओ का वर्णन मिलता है। इसकी रचना स्थान ग्वालियर एव रचना सवत् १६६५ कार्तिक बुदी ३ है। रचना सामान्यत अच्छी है। इसमे कवि ने अपने गुरू भट्टारक जगभूषण का भी उल्लेख किया है।[4]

१　ग्रन्थ सूची भाग २ पृष्ठ सख्या ७

२　वही पृष्ठ सख्या ९८

३　शास्त्र भण्डार दिगम्बर जैन मन्दिर वैर (राजस्थान)

४　ए त्रेपन विधि करहू क्रिया भवि पाप समूह चूरै हो
　सोरहसै पैसठि सबच्छर कातिग तीज अधियारो हो।
　भट्टारक जग भूषण चेला ब्रह्म गुलाल विचारी हो
　ब्रह्म गुलाल विचारि बनाई गढ गोपाचल थानै
　छत्रपती चहु चक्र विराजै साहि सलेम मुगलाने ॥
　　　　　　　　　　　प्रशस्ति सग्रह पृष्ठ २२०

३ कृपण जगावन हार—इस लघु काव्य मे क्षयकरी एव लोभदत्त दो कृपणो की कथा है जिन्हे जिनेन्द्र भक्ति के कारण अपने पूर्व भव मे किये हुए दुष्कर्मों से छुटकारा प्राप्त हो गया था। इसकी एक प्रति अलीगज के शातिनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर के शास्त्र भण्डार मे सग्रहीत है। कवि ने कहा है कि प्रतिमा पूजन पुण्य का निमित्त कारण बनता है उससे आत्मा ज्ञानरूप मे परिणमित होती है यही नही उसके दर्शनमात्र से ही क्रोध मान माया लोभ कषाय नष्ट हो जाती है।[1]

४ चौरासी जाति जयमाला—इसमे चौरासी जातियो का वर्णन दिया हुआ है। इसकी पाण्डुलिपि भट्टारकीय शास्त्र भण्डार अजमेर के गुटका सख्या १०१ मे सग्रहीत है। जयमाला का प्रारम्भिक भाग निम्न प्रकार है—

जैन धर्म त्रेपन क्रिया दया धर्म सयुक्त
इश्वाक के कुल बस मे तीन ज्ञान उतपन्न।
भया महोछव नम को जनागढ गिरनार
जात चोरासी जैनमत जुर छोहनी चार॥

५ ककका बत्तीसी—ककारादि बत्तीस पद्यो मे छन्दोबध्द प्रस्तुत रचना सवत् १६६७ मे समाप्त हुई थी। यह शास्त्र भण्डार दि जैन मन्दिर पाटोदियान जयपुर के एक गुटके मे ३०-३४ पृष्ठ पर सग्रहीत है।[2]

इस प्रकार कवि की अधिकाश रचनाये चारित्र धर्म पर जोर देने वाली है। कवि का विस्तृत अध्ययन आगामी किसी भाग मे किया जावेगा।

३ मनराम

मनराम अथवा मन्ना साह १७वी शताब्दी के प्रमुख हिन्दी कवि थे। वे कविवर बनारसीदासजी के समकालीन थे। मनराम विलास के एक पद्य मे उन्होने बनारसीदास का स्मरण भी किया है। उनकी रचनाओ के आधार से यह कहा जा सकता है कि मनराम एक उच्च अध्यात्म-प्रेमी कवि थे। उन्होने या तो अध्यात्म रसकी गगा बहाई या फिर जन साधारण के लिये उपदेशात्मक, अथवा नीति-

१ प्रतिमा कारण पुण्य निमित बिनु कारण कारज नहिं सित।
प्रतिमा रूप परिणवै आपु, वोषाबिक नहीं व्यापै पापु।
क्रोध लोभ माया बिनु मान, प्रतिमा कारण परिणवै ज्ञान।
पूजा करत होई यह भाउ, दर्शन पाए गयै कषाउ॥

२ राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारो की ग्रन्थ सूची भाग-४-पृष्ठ ६७९

वाक्य लिखे हैं। कवि की अब तक अक्षरमाला, बडा कक्का, धर्म-सहेली, बत्तीसी, मनाराम-विलास एव अनेक फुटकर पद आदि रचनाए उपलब्ध हो चुकी है।

कवि हिन्दी के प्रौढ विद्वान थे इसीलिये इन की रचनाए शुद्ध खडी बोली मे मिलती है। जान पडता है कि कवि सस्कृत के भी अच्छे विद्वान थे, क्योकि इन रचनाओ मे सस्कृत शब्दो का भी प्रयोग मिलता है और वह भी बडे चातुर्य के साथ।

"मनराम विलास" कवि के स्फुट सवैयो एव छन्दो का सग्रहमात्र है जिनकी सख्या ९६ है। इनके सग्रह कर्त्ता विहारीदास थे। वे लिखते है कि विलास के छन्दो को उन्होने छाट करके तथा शुद्ध करके सगह किये है। जैसा कि विलास के निम्न छन्द से जाना जा सकता है—

यह मनराम किये अपनी मति अनुसारि।
बुधजन सुनि कीज्यौं छिमा लीज्यो अबं सुधारि ॥९३॥

जुगति पुराणी ढू ढ कर, किये कवित्त बनाय।
कछु न मेली गाठिकी, जानहु मन वच काय ॥९४॥

जो इक चित्त पढै परुष, सभा मध्य परवीन।
बुद्धि बढै सशय मिटै, सबै होवे आधीन ॥९५॥

मेरे चित्त मे ऊपजी, गुन मनराम प्रकास।
सोधि बीनए एकठे, किये विहारीदास ॥९६॥

अक्षरमाला

इसमे ४० पद्य है जो सभी उपदेशात्मक है। भाव, भाषा एव शैली की दृष्टि से रचना उत्तम कोटि की है। इसकी एक प्रति जयपुर मे ठोलियो के मन्दिर के शास्त्र भण्डार के गुटका सख्या १३१ मे सग्रहीत है। स्वय कवि ने प्रारम्भ मे अपनी लघुता प्रकट करते हुए अक्षरमाला प्रारम्भ की है—

मन बच कर या जोडिकैरे वदो सारद माय रे।
गुण अछिर माला कहु सुणौ चतुर सुख पाइ रे॥
भाई नर भव पायौ मिनखको रे

अन्त मे कवि बिना भगवद् भक्ति के हीरा के समान मनुष्य जन्म को यो ही गवा देने पर दुःख प्रकट करता है तथा यह भी कहता है कि इस कृति मे उसने जो

कुछ लिखा है वह स्वय के लिये हैं किन्तु दूसरे भी चाहे तो उससे कुछ शिक्षा ले सकते हैं—

हा हा हासी जिन करै रे, करि करि हासी आनौ रे।
हीरौ जनम निवारियो, बिना भजन भगवानौ रे ॥३७॥

पढै गुणै अर सरदहै रे, मन वच काय जो पी हारे।
नीति गहै अति सुख लहै दु ख न व्यापे ताही रे ॥३८॥
भाई नर भव पायौ मिनख कौ ॥

निज कारण उपदेश मेरे, कीयौ बुधि अनुसार रे
कवियण कारण जिनघरो लीज्यौ मब सुधारी रे।

कवि का विस्तृत परिचय अकादमी के आगामी किसी भाग मे दिया जावेगा।

४ पाण्डे रूपचन्द

पाण्डे रूपचन्द १७वी शताब्दि के प्रसिद्ध आध्यात्मिक विद्वान थे। कविवर बनारसीदास ने अर्द्धकथानक मे रूपचन्द नाम के चार व्यक्तियो का उल्लेख किया है। एक रूपचन्द के साथ वे अध्यात्म विषय पर चर्चा किया करते थे। दूसरे रूपचन्द से इन्होने गोम्मटसार जीवकाड पढा था। तीसरे रूपचन्द ने सस्कृत मे समवसरण पाठ की रचना की थी तथा चौथे रूपचन्द ने नाटक समयसार की भाषा टीका लिखी थी। इन चारो मे से दूसरे रूपचन्द ही पाण्डे रूपचन्द हैं। कविवर बनार ीदास ने उन्हे अपना गुरु स्वीकार किया है तथा पाण्डे शब्द से अभिहित किया है। पाडे एक उपाधि है जो पडित शब्द का ही बिगडा हुआ शब्द है। भट्टारको के शिष्य प्रशिष्य पाडे उपाधि से समाघ्त होते थे।

रूपचन्द की अधिकाश रचनाए अध्यात्मपरक है। उनकी कृतियो मे परमार्थी दोहा शतक, गीत परमार्थी, मगलगीत, नेमिनाथरास, खटोलना गीत के नाम उल्लेखनीय है। कवि का विस्तृत परिचय अकादमी के अगले किमी भाग मे दिया जावेगा।

हर्षकीर्ति

हर्षकीर्ति १७वी शताब्दि के चतुर्थ पाद के कवि थे। ये राजस्थानी सत थे तथा भट्टारको से प्रभावित थे। इन्होने अपनी अधिकाश रचनायें राजस्थानी भाषा

मे निबद्ध की है। चतुर्गतिवेलि इनकी अत्यधिक लोकप्रिय रचना है। इस कृति का दूसरा नाम पचमगीत वेलि भी मिलता है एक अन्य गुटके मे इसका नाम छहलेस्या वेलि भी दिया हुआ है। इसकी रचना सवत १६८३ की है। नेमिराजुलगीत, नेमीश्वर गीत, मोरडा, कर्म हिन्डोलना, बीस तीर्थकर जखडी, नेमिनाथ का बारहमासा, पार्श्वनाथ छन्द आदि के नाम उल्लेखनीय है। कवि के शास्त्र भडारो मे सग्रहीत गुटको मे कितने ही पद भी मिलते हैं जिनका सग्रह कर प्रकाशन होना आवश्यक है। कवि की एक और रचना त्रेपनक्रिया रास मिली है जो इन्दरगढ (कोटा) के शास्त्र भडार मे सग्रहीत है। रास का रचना काल सवत् १६८४ दिया हुआ है।

हर्षकीर्ति का विशेष परिचय कही नही मिलता। लेकिन इनका चादनपुर महावीर जी के सबध मे एक पद मिलता है इसलिये सम्भावना है कि इनका सम्बन्ध आमेर गादी के भट्टारको से था। "चहु गति वेलि" मे इन्होने अपने आपको मुनि लिखा है। इनकी रचनाये भक्ति परक एव आध्यात्मिक दोनो ही तरह की है।

६ कल्याणकीर्ति

कल्याणकीर्ति १७वी शताब्दी के प्रमुख जैन सत देवकीर्ति मुनि के शिष्य थे। कल्याणकीर्ति भीलोडा ग्राम के निवासी थे। वहा एक विशाल जैन मन्दिर था। जिसके बावन शिखर थे और इन पर स्वर्ण कलश सुशोभित थे। मन्दिर के प्रागण मे एक विशाल मानस्तम्भ था। इसी मन्दिर मे बैठकर कवि ने "चारुदत्त प्रबन्ध" की रचना की थी जो सवत् १६९२ आसोज शुक्ला पचमी को समाप्त हुई थी। कवि ने रचना का नाम "चारुदत्तरास" भी दिया है। इसकी एक प्रति जयपुर के दि० जैन मन्दिर पाटोदी के शास्त्र भडार मे सग्रहीत है। प्रति सवत् १७३३ की लिखी हुई है।

चारुदत्त राजानि पुन्यि भट्टारक सुखकर सुखकर सोभागि अति विचक्षण
वादिवारण केशरी भट्टारक श्री पद्मनदि चरण रज सेवि हारि ॥१०॥

ए सहु रे गच्छनायक प्रणमि करि, देवकीरति मुनि निज गुरु मन्य धरी।
धरि चित चरणे नमि "कल्याण कीरति" इमि भणि।
चारुदत कुमर प्रबन्ध रचना रचिमि आदर घणि ॥११॥

राय देश मध्यि रे भिलोडउ वसि, निज रचनासि रे हरिपुरिनि हसो।

---

१ म्हारो रे मन मोरडा तू तो गिरनार्‌या उडि आय रे।
नेमिजी रस्यो यु कहिज्यो राजमती दुक्ख ये सौसे॥ म्हारो

हस भ्रमर कुमारनि, तिहा धनपति विलिसए ।
प्राशाद प्रतिमा जिन नुति करि सुकृत सचए ।।१२।।

सुकृति सचिरे व्रत बहु ग्राचरि, दान महोछव रे जिन पूजा करि ।
करि उछव गान गध्रव चद्र जिन प्रसादए ।
बावन सिखर सोहामणा ध्वज कनक कलश विसालए ।।१३।।

मडप मध्यि रे समवसरण सोहिं, श्री जिनबिंब रे मनोहर मन मोहि ।
मोहि जन मन ग्रति उन्नत मानस्थम्भ विसालए ।
तिहा विजयभद्र विख्यात सुन्दर जिन सासन रक्ष पालए ।।१४।।

तिहा चोमासि के रचना करि सोलबाणुगिरे ,१६६२ ग्रासो ग्रनुसरि ।
ग्रनुसरि ग्रासो शुक्ल पचमी श्री गुरुचरण हृदयधरि ।
कल्याणकीरति कहि सज्जन भणो सुणो ग्रादर करि ।।१५।।

दूहा

ग्रादर ब्रह्म सघजीतणि विनयमहित सुखकार ।
ते देखि चारुदत्तनो प्रबध रच्यो मनोहर ।।१।।

कवि की एक ग्रौर रचना "लघु बाहुबलि वेलि" तथा कुछ स्फुट पद भी मिले हैं। इसमे कवि ने ग्रपने गुरु के रूप मे शान्तिदास के नाम का उल्लेख किया है। यह रचना भी ग्रच्छी है तथा इसमे त्रोटक छन्द का उपयोग हुग्रा है। रचना का ग्रन्तिम छन्द निम्न प्रकार है—

भरतेश्वर ग्रावीया नाम्यु निज वर शशि जी ।
स्तवन करी इम जपए, हू किकर तु ईस जी ।
ईश तुमनि छाडी राज मझनि ग्रापीउ ।
इम कहीइ मदिर, गया सुन्दर ज्ञान भुवने व्यापीउ ।
श्री कल्याणकीरति सोममूरति चरण सेवक इम भणि ।
शातिदास स्वामी बाहुबलि मरण राखु मझ तह्म तणि ।।१।।

कवि की दूसरी बडी रचना श्रेणिक प्रबन्ध है जिसका रचना काल सवत १७०५ है। जैसा कि रचना का नाम दिया हुग्रा है यह एक प्रबन्ध काव्य है जिसमे महाराजा श्रेणिक का जीवन चरित्र निबद्ध है। इसकी पाण्डुलिपि शास्त्र भडार दि० जैन मन्दिर फतेहपुर (शेखावटी) मे सग्रहीत है। इसका रचना स्थान बागड देश का

कोट नगर था जहा भगवान आदिनाथ का दि० जैन मन्दिर था जिसमे बैठकर ही कवि ने इसका निर्माण किया था । प्रबन्ध का प्रारम्भिक अश निम्न प्रकार है ।

श्री मूल सघ उदयाचलि, प्रभाचद्र रविराय ।
श्री सकलकीरति गुरू अनुक्रमि, नमश्री रामकीरति शुभकाय ॥४॥

तस पद कमल दीवाकर नमू, श्री पदमनदी सुखकार ।
वादि वारण केशरि अकलक एह अवतार ॥५॥

तीज गुरू देवकीरति मुनि प्रणमू चित धर नेह ।
मडलीक महा श्रेणीकनो प्रबन्ध रचु गुण गेह ॥६॥

+ + + + +

नमी देवकीरति गुरु पाय ॥
जिन देव रे भावि जिन पद्नाभ जाणज्यो ।
कल्याण कीरति सूरीवर रच्या रे ॥
ए श्रेणिक गुण मणिहार ॥
बागड विमल देश शोभतो रे । तिहा कोट नयर सुखकार ॥६॥
धनपति विमन्न बसे धणा रे । धनवत चतुर दयाल ॥
तिहो आदि जिन भवन साहामणू रे तशिका तोरण विशाल ॥
उत्सव होयि गावि माननी रे वाजे ढाल मृदग कशाल ॥ जिन भावि ॥
आदर ब्रहमसिध जी तणोरे । तहा प्रबध रच्यो गुणमाल
सबत सतर पन्नोतरि रे । आसा सुदि त्रीज रवि ॥

ए साभलि गायि लिखि भावसु रे । ते तहि मगलाचार ॥
जिन देवेरे भावि जिन पद्मनाभ जाणज्यो ॥१३॥

इनके अतिरिक्त बाहुबलिगीत, नेमिराजुलसवाद, आदीश्वर बधावा तोर्थकर विनती एव पार्श्वनाथ रासो है । पार्श्वनाथ रास का रचनाकाल सवत १६१७ है तथा इसकी पाण्डुलिपि जयपुर के पाण्डे लूणकरण जी के शास्त्र भण्डार मे सग्रहीत हैं ।[1]

कवि का विस्तृत मूल्याकन किसी दूसरे भाग मे किया जावेगा ।

---

१ राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारो की ग्रन्थ सूची भाग–२–पृष्ठ–७४

७ **ठाकुर कवि**

साह ठाकुर राजस्थानी कवि थे । अब तक इनकी तीन रचनाए उपलब्ध हुई है जिनके नाम हैं "शान्तिनाथ चरित, महापुराण कलिका, सज्जन प्रकाश दोहा । इनमे शातिनाथ चरित अपभ्र श काव्य है जो पाच सधियो मे पूण होता है । प्रस्तुत काव्य मे सोलहवें तीर्थकर शातिनाथ का जीवन चरित वर्णित है । इसका रचना काल सवत् १६५२ भाद्रपद शुक्ला पचमी है । आमेर इसका रचना स्थान है । उस समय आमेर पर राजा मानसिह एव देहली पर बादशाह अकबर का शासन था।

कवि के पितामह साहु सील्हा और पिता का नाम खेता था । **जाति खण्डेल-वाल एव गोत्र लुहाडिया था** । वे "लुवाउणिपुर" लवाण के निवासी थे । वह नगर जन धन मे सम्पन्न था । वहा चन्द्रप्रभस्वामी का मन्दिर था । कवि की धर्मपत्नी गुरुभक्त और गुणग्राहिणी थी । इनके धर्मदास एव गोविन्ददास दो पुत्र थे इनमे धर्म-दास विद्याविनोदी एव सब विद्याओ का ज्ञाता था ।

ग्रथकर्ता ने प्रशस्ति मे अपनी जो गुरु परम्परा दी है उसके अनुसार वे भट्टारक पद्मनन्दि की आम्नाय मे होने वाले भट्टारक विशालकीर्ति के शिष्य थे ।

कवि की दूसरी रचना महापुराण कलिका है जिसमे २७ सधिया है तथा जिसमे ६३ शलाका पुरुष चरित्र वर्णित है । इसका रचना काल सवत् १६५० दिया हुआ है । "सज्जन प्रकाश दोहा" सुभाषित रचना है ।

८ **देवेन्द्र**

यशोधर के जीवन पर सभी भाषाओ मे कितने ही काव्य लिखे गये है । राजस्थानी एव हिन्दी मे भी विभिन्न कवियो ने इस कथा को अपने काव्यो का आधार बनाया है । इन्ही काव्यो मे देवेन्द्र कृत यशोधर चरित भी है जिसकी पाण्डु-लिपि डूगरपुर के शास्त्र भण्डार मे उपलब्ध हैं । काव्य वृहद् है । इसका रचना काल स १६८३ है । देवेन्द्र विक्रम के पुत्र थे जो स्वय भी सस्कृत एव हिन्दी के अच्छे कवि थे । कवि ने महुआ नगर मे यशाधर की रचना समाप्त की थी ।

सवत् १६ आठ त्रीसि आसो सुदी बीज शुक्रवार तो ।
रास रच्यो नवरस भर्यो महुआ नगर मझार ता ।।

९ **जैनन्द**

सुदर्शन के जीवन पर महाकवि नयनन्दि ने अपभ्र श मे सवत् ११०० मे

महाकाव्य लिया था। उसी को देख कर जैनन्द ने सवत १६६३ मे आगरा नगर मे प्रस्तुत काव्य को पूर्ण किया था। जैनन्द ने भट्टारक यशकीर्ति क्षेमकीर्ति तथा त्रिभुवनकीर्ति का उल्लेख किया है। इसी तरह बादशाह अकबर एव जहागीर के शासन का भी वर्णन किया है काव्य यद्यपि अधिक बडा नही है किन्तु भाषा एव वर्णन की दृष्टि से काव्य अच्छा है।

काव्य की छन्द सख्या २०६ है। काव्य के प्रमुख छन्द दोहा, चौपई एव सोरठा है। कवि ने निम्न छन्द लिखकर अपनी लघुता प्रकट की है।

छद भेद पद हो, तो कछु जाने नाहि।
ताको कियो न खेद, कथा भई निज भक्ति बस ॥

१० वर्धमान कवि

कवि की रचना वर्धमान रास है जो भगवान महावीर पर प्राचीनतम रास कृति है जिसका रचना काल सवत् १६६५ है। काव्य की दृष्टि से यह अच्छी रचना है। वर्धमान कवि ब्रह्मचारी थे और भट्टारक वादिभूषण के शिष्य थे। रास की एकमात्र पाण्डुलिपि उदयपुर के अग्रवाल दिगम्बर जैन मन्दिर मे सग्रहीत है।

११ आचार्य जयकीर्ति

आचार्य जयकीर्ति हिन्दी के अच्छे कवि थे। इन्होने भट्टारक सकलकीर्ति की परम्परा मे होने वाले भ रामकीर्ति के शिष्य ब्रह्म हरखा के आग्रह से "सीता शील पताका गुण बेलि" की रचना सवत् १६७४ ज्येष्ठ सुदा १३ बुधवार के दिन समाप्त की थी। स्वय कवि द्वारा लिखी हुई मूल पाण्डुलिपि दि० जैन अग्रवाल मन्दिर उदयपुर मे सग्रहीत है।[1] इसका रचना स्थान गुजरात प्रदेश का कोट नगर था। जहा के आदिनाथ चैत्यालय मे इन्होने सीताशील पताका गुण बेलि की रचना समाप्त की थी। कवि की अन्य रचनाओ मे अकलकयति रास अमरदत्तमित्रानन्द रासो, रविव्रत कथा, वसुदेव प्रबन्ध, शील सुन्दरी प्रबन्ध, बकचूलरास के नाम उल्लेखनीय है जयकीर्ति के कुछ पद भी मिलते हैं।

जयकीर्ति पहिले आचार्य थे लेकिन बाद मे काष्ठासघ की सोमकीर्ति की परम्परा मे रत्नभूषण के बाद मे भट्टारक बन गये थे। बकचूलरास की रचना

१ सवत् १६७४ आषाढ सुदी ७ गुरौ श्री कोटनगरे स्वज्ञानावरणी कर्मक्षयाय आ श्री जयकीर्तिना लिखितेय। ग्र थ सूची पचम भाग–पृष्ठ सख्या ६४५

उन्होंने भट्टारक रहते हुए ही की थी। इसका रचनाकाल सवत् १६८५ है। इस सम्बन्ध मे ग्रंथ की प्रशस्ति पठनीय है—

कथा सुणी बकचूलनी श्रेणिक धरी उल्लास।
वीरनि वादी भावसु पुहुत राजग्रह वास ॥१॥

सवत सोल पच्यासीइ गूर्ज्जर देस मझार।
कल्पवल्लीपुर सोभती इन्द्रपुरी अवतार ॥२॥

नरसिंधपुरा वाणिक वसि दया धर्म सुखकद।
चैत्यालि श्री वृषभवि आवि भवीयण वृन्द ॥३॥

काष्ठासघ विद्यागणे श्री सोमकीर्ति मही सोम।
विजयसेन विजयाकर यशकीर्ति यशस्तोम ॥४॥

उदयसेन महीमोदय त्रिभुवकीर्ति विख्यात।
रत्नभूषण गछपती हवा भुवनरयण जेह जात ॥५॥

तस पट्टि सूरीवर भलु जयकीर्ति जयकार।
जे भवियन भवि साभली ते पामी भवपार ॥६॥

रूपकुमर रलीया मणु बकचूल बीजु नाम।
तेह रास रच्यु रूवडु जयकीर्ति सुखधाम ॥७॥

नीम भाव निर्मल हुई गुरूवचने निधार।
साभलता सपद् मलि ये भणि नरतिनार ॥८॥

यादुसायर नव महीचद सूर जिनभास।
जयकीर्ति कहिता रहु बकचूलनु रास ॥९॥
इति बकचूलरास समाप्त।

१२. प० भगवतीदास

प भगवतीदास १७वी शताब्दी के हिन्दी के कवि थे। उनका जन्म अम्बाला जिले के बुढिया नामक ग्राम मे हुआ था लेकिन बाद मे आगरा एव देहली इनकी साहित्यिक गतिविधियो का प्रमुख केन्द्र बन गये थे। देहली मे मोती बाजार के पार्श्वनाथ मन्दिर के पास ही इनका निवास था। आगरा मे रहते हुए इन्होने "अर्गल-

पुर जिन वदना" निबध्द की थी । इसमे आगरा के सभी जैन मन्दिरो का परिचय दिया हुआ है । रचना इतिहास की दृष्टि से भी उल्लेखनीय है ।

भगवतीदास अग्रवाल जाति के बसल गोत्रीय श्रावक थे । उनके पिता का नाम किशनदास था जिन्होने वृद्धावस्था मे मुनिव्रतधारण कर लिया था । भगवतीदास भट्टारकीय पडित थे तथा भ. महेन्द्रसेन के शिष्य थे । महेन्द्र सेन दिल्ली गादी के काष्ठासघ माथुर गच्छीय भट्टारक गुणचन्द्र के प्रशिष्य एव सकलचन्द्र के शिष्य थे । कवि ने अपनी अधिकाश रचनाओ मे महेन्द्रसेन का स्मरण किया है ।

कवि की अब तक २५ से भी अधिक कृतिया प्राप्त हो चुकी हैं । अजमेर के भट्टारकीय शास्त्र भडार मे एक गुटका है जिसमे कवि की अधिकाश रचनाओ का सग्रह मिलता है । इनमे सीतासतु, अर्गलपुर जिन वन्दना, मुगति रमणी चूनडी, लघुसीतासतु, मनकरहारास, जोगीरास, टडाणारास, मृगाकलेखाचरित, आदित्यव्रतरास, पखवाडारास, दशलक्षणरास, खिचडीरास आदि के नाम उल्लेखनीय है ।

कवि का विस्तृत परिचय एव मूल्याकन अकादमी के किसी अगले भाग मे किया जावेगा ।

१३ ब्रह्म कपूरचन्द

ब्रह्म कपूरचन्द मुनि गणचन्द्र के शिष्य थे । ये १७वी शताब्दी के अन्तिम चरण के विद्वान थे । अब तक इनके पार्श्वनाथरास एव कुछ हिन्दी पद उपलब्ध हुये हैं । इन्होने रास के अन्त मे जो परिचय दिया है, उसमे अपनी गुरु-परम्परा के अतिरिक्त आनन्दपुर नगर का उल्लेख किया है, जिसके राजा जसवन्तसिंह थे तथा जो राठौड जाति के शिरोमणि थे । नगर मे 36 जातिया सुखपूर्वक निवास करती थी । उसी नगर मे ऊचे ऊचे जैन मन्दिर थे । उनमे एक पार्श्वनाथ का मन्दिर था । सम्भवत उसी मन्दिर मे बैठकर कवि ने अपने इस रास की रचना की थी ।

पार्श्वनाथरास की हस्तलिखित प्रति मालपुरा, जिला टोंक (राजस्थान) के चौधरियो के दि० जैन मन्दिर के शास्त्र भडार मे उपलब्ध हुई है । यह रचना एक गुटके मे लिखी हुई है, जो उसके पत्र १४ से ३२ तक पूर्ण होती है । रचना राजस्थानी-भाषा मे निबद्ध है, जिसमे १६६ पद्य हैं । "रास" की प्रतिलिपि बाई रत्नाई की शिष्य श्राविका पारवती गगवाल ने सवत् १७२२ मिती जेठ बुदी ५ को समाप्त की थी ।

श्रीमूल जी सघ बहु सरस्वती गछि ।
भयो जी मुनिवर बहु चारित स्वछ ।।

तहा श्री नेमचन्द गछपति भयो।
तास के पाट जिन सोभे जी भाण ।।
श्री जसकीरति मुनिपति भयो।
जाणो जी तर्क अति शास्त्र पुराण ।।श्री।।१५९।।

तास को शिष्य मुनि अधिक (प्रवीन)।
पच महाव्रतस्यो नित लीन ।।
तेरह विधि चारित्र धरै।
व्यजन कमल विकासन चन्द ।।
ज्ञान गौ हम जिसौ अवि ले।
मुनिवर प्रगट सुमि श्री गुणचन्द ।।श्री।।१६०।।

तासु तणु सिषि पडित कपूर जी चन्द।
कीयो राम चिति धरिवि आनन्द ।।
जिनगुण कहु मुझ अल्प जी मति।
जसि विधि देख्या जी शास्त्र-पुराण ।।
बुधजन देखि को मति हसै।

तैसी जी विधि मे कीयो जी बखाण ।।श्री।।१६१।।
सोलासै सत्तावणवे मासि वैसाखि।
पचमी तिथि सुभ उजला पाखि ।।
नाम नक्षत्र आद्रा भलो।
बार बृहस्पति अधिक प्रधान ।।
राम कीयो वामा सुत तणो।

स्वामीजी पारसनाथ के थान ।।श्री।।१६२।।
अहो देस को राजाजी जाति राठौड।
सकल जी छत्री याके सिरिमोड ।।
नाम जसवन्तसिघ तसु तणो।
तास आनन्दपुर नगर प्रधान ।।
पोणि छत्तीस लीला करे।
सोमै जी तहा जीण उत्त ग।
मडप वेदी जी अधिक अभग ।।
जिण तणा बिंब सोभै भला।
जो नर वदे मन वचकाई ।।

दुख कलेस न सचरे :
तीस घरा नव निघि थिति पाइ ।।श्री।।१६४।।

रास सवत् १६९७, वैशाख सुदी ५ के दिन समाप्त हुआ था ।

रास मे पार्श्वनाथ के जीवन का पद्य-कथा के रूप मे वर्णन है। कमठ ने पार्श्वनाथ पर क्यों उपसर्ग किया था, इसका कारण बताने के लिये कवि ने कमठ के पूर्व-भव का भी वर्णन कर दिया है। कथा मे कोई चमत्कार नही है। कवि को उसे अति सक्षिप्त रूप मे प्रस्तुत करना था सम्भवत', इसीलिए उसने किसी घटना का विशेष वर्णन नही किया।

१४ मुनि राजचन्द्र

राजचन्द्र मुनि थे लेकिन ये किसी भट्टारक के शिष्य थे अथवा स्वतन्त्र रूप से विहार करते थे इसकी अभी कोई जानकारी प्राप्त नही हो सकी है। ये १७वी शताब्दी के विद्वान थे। इनकी अभी तक एक रचना "चम्पावती सील कल्याणक" ही उपलब्ध हुई है जो सवत् १६८४ मे समाप्त हुई थी। इस कृति की एक प्रति दि जैन खण्डेलवाल मन्दिर उदयपुर के शास्त्र भण्डार मे सग्रहीत है। रचना मे १३० पद्य हैं।[1]

१५ पाण्डे जिनदास

पाण्डे जिनदास ब्र शान्तिदास के शिष्य थे। डा प्रेमसागर ने शान्तिदास को जिनदास का पिता भी लिखा है जिसका आधार बडौत के सरस्वती भण्डार की जम्बूस्वामी चरित की पाडुलिपि है जिसमे शिष्य के स्थान पर सुन पाठ मिलता है। जिनदास आगरा के रहने वाले थे। बादशाह अकबर के प्रसिद्ध मन्त्री टोडरशाह इनके आश्रयदाता थे तथा टोडरशाह के पुत्र थे दीपाशाह जिनके पढने के लिये इन्होने प्रस्तुत काव्य का निर्माण किया था। टोडरशाह के परिवार मे रिखबदास, मोहनदास, रूपचन्द, लक्ष्मणदास, आदि और भी व्यक्ति थे जो सभी धार्मिक प्रवृत्ति वाले थे तथा कवि पर उनकी विशेष कृपा थी।

---

१ सुविचार धरी तप करि, ते ससार समुद्र उत्तरि।
नरनारी सामलि जे रास, ते सुख पामि स्वर्ग निवास ।। १२९ ।।
सवत सोल चुरासीयि एह, करो प्रबन्ध श्रावण वदि तेह।
तेरस दिन आदित्य सुद्ध बेलावही, मुनि राजचन्द्रकहि हरखज लहि ।। १३० ।।
इति चपावती सील कल्याणक समाप्त ।।

पांडे जिनदास के जम्बू स्वामी चरित काव्य के अतिरिक्त और भी कृतियाँ उपलब्ध होती है जिनमे नाम है चेतनगीत, जखडी, मालीरास, जोगीरास मुनीश्वरो की जयमाल, धर्मरासगीत, राजुलसज्झाय, सरस्वती जयमाल, आदित्यवार कथा, दोहा बावनी, प्रबोध बावनी, बारह भावना आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

कवि का विस्तृत परिचय अकादमी के किसी अगले भाग मे दिया जावेगा।

१६ पाण्डे राजमल्ल

पाडे राजमल्ल उपलब्ध राजस्थानी गद्य के सबसे प्राचीन दिगम्बर जैन लेखक हैं ये विराट नगर (बैराठ) के रहने वाले थे। इनकी शिक्षा दीक्षा कहा हुई इसकी तो अभी खोज होना शेष है लेकिन ये प्राकृत एव सस्कृत के अच्छे विद्वान थे। इन्होने आचाय कुन्दकुन्द के समयसार की बालावबोध टीका लिखी थी। इसी टीका के आधार पर महाकवि बनारसीदास ने समयसार नाटक की रचना की थी।[1] इसी बालावबोध टीका का उल्लेख महाकवि बनारसीदास ने अपने अर्धकथानक मे किया है।[2]

श्री नाथूराम प्रेमी ने इनकी जम्बूस्वामी चरित, लाटी सहिता, अध्यात्म-कमलमार्तन्ड, छन्दोविघा एव पचाध्यायी रचनाये होना लिखा है।[3] (अर्धकथानक पृष्ठ सख्या ८५)

१७ छीतर ठोलिया

छीतर ठोलिया मौजमाबाद के निवासी थे। इनकी जाति खडेलवाल एव गोत्र ठोलिया था। इनकी एकमात्र रचना होली की कथा सवत् १६५० की कृति है जिसको उन्होने अपने ही ग्राम मौजमाबाद मे निबद्ध की थी। उस समय नगर पर आमेर के राजा मानसिह का शासन था।[4] होली की कथा सामान्य रचना है।

---

१ पाण्डे राजमल्ल जिनधरमी, समयसार नाटक के मरमी।
तिन गिरथ की टीका कीनी बालाबोध सुगम कर दीनी॥

२ वि स १६८४ मे अध्यात्म चर्चा के प्रेमी अरथमल ढोर मिले और उन्होने समयसार नाटक की राजमल्ल कृत टीका का ओर कहा कि तुम इसे पढो इसमे सत्य क्या है सो तुम्हारी समझ मे आ जावेगा।

३ अर्ध कथानक—पृष्ठ संख्या ४७

४ शाकम्भरी के विकास में जैन धर्म का योगदान—डा कासलीवाल, पृष्ठ ४७

१८ भट्टारक वीरचन्द्र

वीरचद्र १७वी शताब्दी के प्रतिभा सम्पन्न विद्वान थे। व्याकरण एव न्यायशास्त्र के काण्ड वेत्ता थे। सस्कृत प्राकृत, गुजराती एव राजस्थानी पर इनका पूर्ण अधिकार था। ये भ० लक्ष्मीचद्र के शिष्य थे। अब तक इनकी आठ रचनायें उपलब्ध हो चुकी है जिनके नाम निम्न प्रकार हैं—

(१) वीर विलास फाग, (२) सबोध सत्तायु (३) जम्बू स्वामी बेलि, (४) नेमिनाथ रास, (५) जिन आतरा (६) चित्तनिरोध कथा (४) सीमधर स्वामी गीत एव (८) बाहुबलि बेलि। वीर विलास फाग एक खन्ड काव्य है जिसमे २२वें तीर्थंकर नेमिनाथ की जीवन घटना का वर्णन किया गया है। फाग मे १३३ पद्य हैं। जम्बूस्वामी बेलि एक गुजराती मिश्रित राजस्थानी रचना है। जिन आतरा मे २४ तीर्थ करो के समय आदि वर्णन किया किया है। सबोध सत्तारगु एक उपदेशात्मक गीत है जिसमे ५३ पद्य है। चित्तनिरोधक कथा १५ पद्यो की एक लघु कृति है इसमे भ० वीरचद्र को 'लाड नीति शृ गार'' लिखा है। नेमिकुमार राम की रचना स० १६३३ मे समाप्त हुई थी यह भी नेमिनाथ की वैवाहिक घटना पर आधारित एक लगु कृति हैं।

कवि का विस्तृत परिचय अकादमी के किसी अगले भाग मे दिया जावेगा।

१९ खेतसी

खेतसी का दूसरा नाम खेतसिह भी मिलता है। अभी तक इनकी तीन कृतिया प्राप्त हो चुकी है जिनके नाम है नेमिजिनद व्याहलो, नेमीश्वर का बारह मासा, एव नेमिश्वर राजुलकी लहुरि। राजस्थान के एव अन्य शास्त्र भडारो मे अभी कवि की और रचनाये मिलने की सम्भावना है। नेमिजिनद व्याहलो की एक प्रति दि० जैन मदिर फतेहपुर (शखावाटी) के तथा दूसरी जयपुर के पाटोदी के मदिर के शास्त्र भडार मे सग्रहीत है। खेतसी की रचनाये भाषा एव शैली की दृष्टि से उल्लेखनीय रचनाये हैं। ये सत्रहवी शताब्दी के अतिम चरण के कवि थे। नेमिजिनद व्याहलो इनकी सवत् १६९१ की रचना है।

२० ब्रह्म अजित

ब्रह्म अजित सस्कृत के अच्छे विद्वान थे। ये गोलशृ गार जाति के श्रावक थे। इनके पिता का नाम वीरसिह एव माता का नाम पीथा था। ब्रह्म अजित

भट्टारक सुरेन्द्रकीर्ति के प्रशिष्य एव भट्टारक विद्यानदि के शिष्य थे। ये ब्रह्मचारी थे और इसी अवस्था मे रहते हुये इन्होने भृगुकच्छपुर (भडोच) के नेमिनाथ चैत्यालय मे हनुमच्चरित की रचना समाप्ति की थी। इस चरित की प्राचीन प्रति आमेर शास्त्र भडार जयपुर मे सग्रहीत है। हनुमच्चरित में १२ सर्ग हैं और यह अपने समय का काफी लोकप्रिय काव्य रहा है।

ब्रह्म अजित की एक हिन्दी रचना "हसा गीत" प्राप्त हुई है यह एक उपदेशात्मक एव शिक्षाप्रद कृति है जिसमे "हसा" (आत्मा) को सम्बोधित करते हुये ३७ पद्य है। गीत की समाप्ति निम्न प्रकार की है—

> रास हस तिलक एह, जो भावइ दिढ चित्त रे हसा।
> श्री विद्यानदि उपदेस, बोलि ब्रह्म अजित रे हसा ॥३७॥
> हसा तू करि सयम, जम न पडि ससार रे हसा ॥

ब्रह्म अजित १७वी शताब्दी के विद्वान सन्त थे।

२१ आचार्य नरेन्द्रकीर्ति

ये १७वी शताब्दी के सन्त थे। भ०वादिभूषण एव भ० सकलभूषण दोनो ही सन्तो के ये शिष्य थे और दोनो की ही इन पर विशेष कृपा थी। एक बार वादिभूषण" के प्रिय शिष्य ब्रह्म नेमिदास ने जब इनसे "सगरप्रबन्ध लिखने की प्रार्थना की तो इन्होने उनकी इच्छानुसार "सगर प्रबन्ध" कृति को निबद्ध किया। प्रबन्ध का रचनाकल स० १६४६ असोज सुदी दशमी है। यह कवि की एक अच्छी रचना है। आचार्य नरेन्द्रकीर्ति की ही दूसरी रचना 'तीथकर चौबीसना छप्पय' है। इसमे कवि ने अपने नामाल्लेख के अतिरिक्त अन्य कोई परिचय नही दिया है। दोनो ही कृतिया उदयपुर के शास्त्र भडारो म सग्रहीत है।

२२ ब्रह्म रायमल्ल

१७वी शताब्दी के प्रथम पाद के महाकवि रायमल्ल के सम्बन्ध मे अकादमी की ओर से प्रथम भाग महाकवि ब्रह्मरायमल्ल एव भ० त्रिभुवनकीर्ति प्रकाशित हो चुका है।

२३ जगजीवन

कविवर जगजीवन बनारसीदास के समकालीन ही नही किन्तु उनके कट्टर प्रशसक भी थे। ये आगरा के सम्पन्न घराने के थे लेकिन पूर्णत निरभिमानी भी थे।

उनके पिता का नाम अभयराज था। उनके कितनी ही स्त्रिया थी जिनमे मोहनदे सबसे अधिक प्रसिद्ध थी[1] और जगजीवन की माता भी वही थी। कवि अग्रवाल गर्ग गोत्रीय श्रावक थे। इनकी अच्छी शिक्षा दीक्षा हुई थी इसलिये थोडे ही दिनो में उनकी चारो ओर ख्याति फैल गई। जगजीवन ज्ञानियो की मडली के अगुवा बन गये।[2]

जगजीवन बनारसीदास के परम भक्त थे तथा उनकी रचनाओ से परिचित थे। बनारसीदास की मृत्यु के पश्चात जगजीवन ने सवत् १७०१ मे उनकी सभी रचनाओ का एक ही स्थान पर सकलन करके उसका नाम बनारसी विलास रखा और साहित्यिक क्षेत्र मे अपना नाम अमर कर लिया। जगजीवनराम स्वय भी कवि थे। इसलिये उन्होने एकीभाव स्तोत्र की एव भूपाल चौबीसी की भाषा टीका की थी। इनके कितने ही पद भी मिलते है। डा० प्रेमसागर ने भूपाल चौबीसी का उल्लेख नही किया है।

जगजीवनराम के समय आगरा साहित्यकारो एव साहित्यसेवियो का प्रमुख केन्द्र था। प० हीरानन्द ने समवसरण विधान की प्रशस्ति मे जगजीवनराम का अच्छा वर्णन किया है जो निम्न प्रकार है —

> अब सुनि नगरराज आगरा, सकल लोक अनुपम सागरा।
> साहजहाँ भूपति है जहाँ, राज करे नयमारग तहाँ ॥७५॥
>
> ताको जाफरखा उमराउ, पचहजारी प्रगट कराउ।
> ताको अगरवाल दीवान, गरगगोत सब विधि परधान ॥७९॥
>
> सघही अभैराज जानिये, सुखी अधिक सब करि मानिये।
> बनितागण नाना परकार, तिनमे लघु मोहनदे सार ॥८०॥
>
> ताको पूत पूत-सिरमौर, जगजीवन जीवन की ठौर।
> सुन्दर सुभवरूप अभिराम, परम पुनीत धरम-धन-धाम ॥८१॥

---

१ नगर आगरे मे अगरवाल गरगगोत नागर नवलसा।
सघ ही प्रसिद्ध अभिराज राज माननीक, पचवाल नलनी मे भयो है कवलसा।
ताके प्रसिद्ध लघु मोहनदे सघइनि, जाके जिनमारग विराजित धवलसा।
ताहि को सपूत जगजीवन सुविढ जैन, बनारसी बैन जाके हिए में सबलसा।

२ समै जोग पाइ जग जीवन विख्यात भयो,
ज्ञान की मडली मे जिसको विकास है।

काल-लबधि कारन रस पाइ, जग्यो जथारथ अनुभौ आइ।
अहनिसि ग्यानमडली चैन, परत और सब दीसै फैन ॥८२॥

इससे दो बातो पर प्रकाश पडता है—एक तो यह कि सवत् १७०१ मे आगरे में ज्ञाताओ की एक मडली या आध्यात्मियो की सैली थी, जिसमे सघवी जगजीवनराम, प० हेमराज, रामचन्द, सघी मथुरादास, भवालदास, और भगवतीदास थे। भगवतीदास को "स्वपरप्रकाश" विशेषण दिया है। ये भगवतीदास वेही जान पडते है जिनका उल्लेख बनारसीदास ी ने नाटक समयसार मे निरन्तर परमार्थ चर्चा करने वाले पच पुरुषो मे किया है। हीरानन्दजी अपने दूसरे छन्दोबद्ध ग्रन्थ पचास्तिकाय (१७०१) मे भी धनमल और मुरारि के साथ इन्ही का ज्ञातारूप मे उल्लेख किया है।

दूसरी बात यह है कि जफरखा बादशाह शाहजहाँ का पाचहजारी उमराव था जिसके कि जगजीवन दीवान थे और जगजीवन के पिता अभयराज सर्वाधिक सुखी सम्पन्न थे। उनके अनक पत्नियाँ थी जिनमे से सबसे छोटी मोहनदे से जगजीवन का जन्म हुआ था।

२४ कुअरपाल

ये कविवर बनारसीदास के अभिन्न मित्र थे।[1] जिन पाच साथियो के साथ बैठकर बनारसीदास परमार्थ चर्चा किया करते थे उनमे कुअरपाल का नाम भी सम्मिलित है।[2] पाण्डे हेमराज ने उन्हे ज्ञाता अधिकारी के रूप मे स्मरण किया है। महोपाध्याय मेघविजय ने अपने "युक्ति प्रबोध" मे उनकी सर्वमान्यता स्वीकार की है। स्वय कवि कुअरपाल ने अपनी "समकित बत्तीसी" मे अपना यश चारो ओर नगरो मे फैलने के लिये लिखा है।[3]

---

१ कुवरपाल बनारसी मित्र जुगल इक चित्त।
तिनहि ग्र थ भाषा कियो बहु विधि छन्द कवित्त ॥२॥

१ रूपचंद पंडित प्रथम, दुतिय चतुर्भुज नाम।
तृतीय भगौतीदास नर, कौरपाल गुणधाम॥
धरमदास ए पच जन, मिलि बैठे इक ठोर।
परमारथ चरचा करै, इन के कथा न और॥

२ पुरि पुरि कवरपाल जस प्रगट्यो, बहुविध ताप बंस वरणिज्जई।
धरमदास असकवर सदा धनी, बडसाखा बिसतर किम किज्जई।

बनारसीदास ने "सूक्ति मुक्तावली" मे कुंअरपाल का नाम अपने अभिन्न मित्र के रूप मे लिया है और दोनो ने मिलकर सूक्ति मुक्तावली भाग रचना की ऐसा उल्लेख किया है। कवि की अब तक कवरपाल बत्तीसी एव सम्यकत्व बत्तीसी रचनाये उपलब्ध हो चुकी है।

कुंअरपाल का जन्म ओसवाल वश के चौरडिया गोत्र मे हुआ था। कुंअरपाल के पिता का नाम अमरसिंह था। नाथूराम प्रेमी ने अमरसिंह का जन्म स्थान जैसलमेर माना है। कुंअरपाल के हाथ का लिखा हुआ एक गुटका विक्रम सवत् १६८४-८५ का है जिसमे विभिन्न पाठो का सग्रह है। कुछ रचनायें स्वय कवि द्वारा निर्मित भी है। लेकिन उनका नामोल्लेख नही हुआ है। इसी तरह एक गुटका और मिला है जो स्वय कुंअरपाल के पढने के लिये लिखा हुआ गया था। जिसमे कुंअरपाल द्वारा लिखी हुई समकित बत्तीसी का विषय अध्यात्मरस से है। इसका अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है—

हुऔ उछाह सुजस आतम मुनि, उत्तम जिके परम रस भिन्ने।
ज्यउ सुरही तिण चरहि दूध हुई, ग्याता तरह ग्रन गुन गिन्ने॥
निजबुधि सार विचारि अध्यातम, कवित बत्तीस भेट कवि किन्ने।
कवरपाल अमरेम 'तनू' भव, अतिहितचित आदर कर लिन्नै॥

२५ सालिवाहन

सालिवाहन १७वी शताब्दी के अन्तिम चरण के कवि थे। इन्होने सवत् १६९५ मे आगरा मे रहते हरिवश पुराण भाषा (पद्य) की रचना की थी। इनके पिता का नाम खरगसेन एव गुरु का नाम भट्टारक जगभूषण था। कवि भदावर प्रान्त के कञ्चनपुर नगर क निवासी थ। हरिवश पुराण की प्रशस्ति मे इन्होने अपना परिचय निम्न प्रकार दिया है—

सवत् सोरहिसै तहाँ भय तापरि अधिक पचानवे गये।
माघ मास किसन पक्ष जानि, सोमवार सुभवार बखानि॥
भट्टारक जगभूषण देव गनधर सादृस वादि जु एइ।
नगर आगिरो उत्तम थानु साहिजहाँ तपे दूजो भान॥
बाहन करी चौपई बन्धु हीन बुधि मेरी मति अन्धु।

२६ सुन्दरदास

सुन्दरदास नाम के जैन कवि भी हुये हैं जो बागड प्रान्त के रहने वाले

थे। लेकिन यह बागड प्रदेश डूगरपुर वाला बागड प्रदेश नही है किन्तु देहली के आसपास के प्रदेश को बागड प्रदेश कहा जाता था ऐसा डा० प्रेमसागर जैन ने माना है। डा० जैन के अनुसार सुन्दरदास शाहजहाँ के कृपापात्र कवियो मे से थे। बादशाह ने इनको पहिले कविराय और फिर महाकविराय का पद प्रदान किया था। डा० जैन ने लिखा है कि सुन्दरदास राजस्थानी कवि थे तथा जयपुर से ५० किलोमीटर पूर्व की ओर स्थित दौसा उनका जन्म स्थान था। इनकी माता का नाम सती एव पिता का नाम चौखा था। सुन्दरदास आध्यात्मिक कवि थे। इनके अभी तक चार ग्रन्थ एवं कुछ फुटकर रचनाये प्राप्त हो चुकी है। ग्रन्थो के नाम हैं सुन्दरसतसई, सुन्दर विलास, सुन्दर शृगार एव पाखड पचासिका। जयपुर के ठोलियो के मन्दिर मे पद एव सहेलीगीत भी मिलता है। सहेलीगीत का प्रारम्भ निम्न प्रकार हुआ है—

सहेल्लो हे यो ससार असार मोचित मे या अपनौ जी सहेल्लो हे
ज्यो राचें तो गवार तन धन जोबन थिर नही।

सुन्दर शृगार—इसकी एक प्रति साहित्य शोध विभाग जयपुर के सग्रह मे है जिसमे ३५९ पद्य है। प्रारम्भ मे कवि ने अपना एव बादशाह शाहजहाँ का परिचय निम्न प्रकार दिया है—

तीन पहरि लो रवि चले, जाके देसनि नाहि।
जीत लई जगती इती, साहिजहा नर नाहि ॥८॥

कुल दरिया खाई कियो, कोटतीर के ठाव।
आठो दिसि यो वसि करि, यो कीजै इक गाव ॥९॥

साहिजहा निन गुननि को, दीने अगिनित दान।
तिन मै सुन्दर सुकवि को, कीयो बहुत सनमान ॥१०॥

नग भूपन मनि सबद ये, हय हाथी सिर पाइ।
प्रथम दीयौ कवि राय पद, बहुरि महाकवि राइ ॥११॥

विप्र ग्वारियर नगर को, बासी है कविराज।
जासौ साहि मया करौ, सदा गरीब निवाज ॥१२॥

जब कवि को मन यौं बढ्यो, तब यह कीयौ बिचारु।
बरनि नाइका नायक विरच्यौ ग्रथ विस्तार ॥ १३ ॥

सु दर कृत सिंगार है, सकल रसनि को सारु ।
नाव धरयो या ग्रथ को, यह सु दर सिंगार ।। १४ ।।

जो सु दर सिंगार को, पढ़ें, गुने मतिवानु ।
तिन मानो ससार मैं, करयो सुधारस पान ।।१५।।

सवत् सोरह से बरष, बीते अठयासीत ।
कातिक सुदि षष्टि गुरौ, रच्यौ ग्रथ करि प्रीति ।।१६।।

सुन्दर श्रृ गार की प्रशस्ति मे मालूम होता है कि कवि ग्वालियर के रहने वाले ब्राह्मण कवि थे जैन नही थे ।

२८ **परिहानन्द (नन्दलाल)**

परिहानन्द आगरा के पास गोसुना ग्राम के रहने वाले थे लेकिन बाद ने आगरा आकर रहने लगे थे । वे अग्रवाल जातीय गोयल गोत्र के श्रावक थे । उनकी माता का नाम चन्दा तथा पिता का नाम भैरू था । काशी नागरी प्रचारिणी पत्रिका हस्तलिखित ग्रथो की खोज २०वा त्रैवार्षिक विवरण मे माता का नाम चन्दन दिया हुआ है ।[2] कवि के समय मे आगरा पूर्ण वैभवशाली नगर था जहा सभी तरह का व्यापार था जिस कारण वहा कवि के शब्दो मे असख्य धनवान रहते थे । उस समय आगरा मथुरा मडल का उत्तम नगर माना जाता था ।[3]

परिहानन्द ने हिन्दी के अच्छे कवि थे उन्होने यशोधर चरित्र को सवत् १६७० श्रावण शुक्ला सप्तमी सोमवार को समाप्त किया था । डा प्रेमसागर जैन ने कवि का नाम परिहानन्द के स्थान पर नन्दलाल लिखा है । नन्द नाम से सवत

१　अग्रवाल वरबंस गोसना गाव को
　　गोयल गोत प्रसिद्ध चिहन ता ठांव को
　　माता चदा नाम पिता भैरू भन्यौ
　　परिहानन्द कही मन मोद अ ग न गुन नां गिन्यौं ।५९८।।

२　माताहि चन्दन नाम पिता भयरो भन्यो
　　नन्द कही मनमोद गुनी गन ना गन्यो ।

३　नगर आगरो बसं सुवासु, जिहपुर नाना भोग बिलास ।
　　बसहि साहु बहु धनी असखि, वनजहि बनज सापहहिनखि ।
　　गुणी लोग छत्ती सौ कुरी, मथुरा मडल उत्तम पुरी ।

१६६३ वाली कृति "सुदर्शन सेठ कथा" को भी इन्ही कवि की रचना स्वीकार किया है। सुदर्शन सेठ कथा कि एक प्रति भट्टारकीय शास्त्र भण्डार अजमेर मे सुरक्षित है।

कवि की तीसरी कृति 'गूढ विनोद' मे भी कवि ने अपना नाम नन्द ही दिया है। इसकी एक पाण्डुलिपि जयपुर के पडित लूणकरणजी के शास्त्र भण्डार में सग्रहीत है।

यशोधर चरित्र ५९८ पद्यो का प्रबन्ध काव्य है। रचना भाषा एव शैली की दृष्टि से यह एक उत्तम कृति हैं। यह काव्य अभी तक अप्रकाशित हैं।

२८ **परिमल्ल**

परिमल्ल कवि हिन्दी के १७वी शताब्दी द्वितीय चरण के कवि थे। ये प्रथम कवि हैं जिन्होने काव्य प्रारम्भ करने की तिथि दी है नही तो सभी कवि रचना समाप्ति की तिथि देते है। परिमल्ल का श्रीपाल चरित एक मात्र काव्य है जिसकी अभी तक उपलब्धि हुई है। कवि ने इसे सवत १६५१ आषढ शुक्ला अष्टमी अष्टाह्निका पर्व के प्रथम दिन प्रारम्भ किया था।

> सवत् सोलह स उच्चरयौ सावण इक्यावन आगरा।
> मास अषाढ पहुतो आइ वरषा रिति का कहे बढाइ।
> पक्ष उजाली आठै जाणि, सुक्रवार बार परवाणि।
> कवि परिमल्ल सुद्ध करि चित्त, आरम्भ्यो श्रीपाल चरित।

उस समय देश पर बादशाह अकबर का शासन था। चारो ओर सुख शान्ति थी कवि ने अकबर को दूसरा भानु लिखा है

> बब्बर पातिसाह हवं गयौ, ता सुत साहि हमाऊ भयौ।
> जा सुत अकबर माहि समाण, सो तप तप्यौ दूसरौ भाण ॥३२॥
>
> ताकै राज न होइ अनीति, बसुधा बहुत करि बसि जीति।
> कितेक देस तास की आन, दूजौ और न ताहि समान ॥३३॥

वश परिचय—परिमल्ल कवि अत्यधिक सम्मानित वश से सबधित थे इनकी जाति बिरहिया जैन थी। कवि के प्रपितामह चदन चौधरी थे जो ग्वालियर के राजा मानसिंह द्वारा सम्मानित थे। उनकी कीर्ति चारो ओर फैली हुई थी। वे स्वय प्रतापी थे तथा अपने कुल को प्रसन्न रखने वाले थे। कवि के पितामह रामदास एव पिता आसकरन थे। ये आसकरण के पुत्र थे। परिमल्ल आगरा मे आकर रहने लगे

थे। और वही पर रहते हुए उन्होने श्रीपाल चरित को चौपई बन्ध छन्द मे पूर्ण किया था।[१]

कवि की एक मात्र कृति श्रीपाल चरित की राजस्थान के ग्रथ भण्डारो मे कितनी ही पाडुलिपिया उपलब्ध होती हैं। पूरा काव्य २३०० चौपई छन्दो मे निबद्ध है। यद्यपि श्रीपाल का जीवन कथा लोकप्रिय कथा है लेकिन कवि की वर्णन शैली बहुत ही अच्छी हैं जिससे काव्य मे चमत्कार छा गया है।

काव्य की एक प्रति आमेर शास्त्र भण्डार मे सख्या १३६० ५र सग्रहीत है जिसमे १२५ पत्र है तथा जिसे सवत् १७९४ मे पाटन मे जैकिशन जोशी द्वारा लिपिबद्ध किया गया था।

२९ वादिचन्द्र

वादिचन्द्र विद्यानन्दि की परम्परा मे होने वाले भ ज्ञानभूषण के प्रशिष्य एव भ प्रभाचन्द्र के शिष्य थे। इन्हे साहित्य निर्माण की रुचि गुरु परम्परा से प्राप्त हुई थी। सस्कृत एव हिन्दी गुजराती पर इनका अच्छा अधिकार था इसलिये इन्होने सस्कृत एव हिन्दी दोनो मे अपनी कलम चलायी। ये एक समर्थ साहित्यकार थे। सवत् १६४० मे इन्होने सस्कृत मे वाल्हीक नगर मे पार्श्वपुराण की रचना करके अपने कर्तृत्व शक्ति का परिचय दिया।[२] ज्ञानसूर्योदय नाटक को सवत् १६४८[३] एव यशोधर चरित्र को सवत् १६५७ मे पूण किया था।[४] "पवनदूत" कालीदास के मेघदूत क आधार पर रचा गया काव्य है।[५]

---

१ गोत्रि गीरी ठाढो उत्तिम थान, सूरवीर यह रामान।
ता आगे चदन चौधरी, कीरति सब जग मे विस्तरी।। ६६।।
जाति विरहिया गुणह गभीर अति प्रताप कुल रजन धीर।
ता सुत रामदास परवान, ता सुत अस्ति महा सुर ग्यान।। ६७।।
तसु कुल मडल है परिमल्ल, सबै आगरा मे अरिसल्ल।
तासु महि न बुद्धि नहि आन, कीयौ चौपई बध प्रवान।। ६८।।

२ शून्याब्धौ रसाब्जांके वर्षे पक्षे समुज्वले।
कार्तिक मास पचम्यां वाल्हीके नगरे सुवा।। पार्श्वपुराण

३ प्रशस्ति सग्रह–सम्पादक–डा कस्तूरचन्द कासलीवाल पृष्ठ १६

४ अ कलेश्वर-सुग्रामे श्री चिन्तामणि मन्दिरे।
सप्तपच रसाब्जांके वर्षे कारि सुशास्त्रकम्।।

५ प उदयपाल कासलीवाल द्वारा सम्पादित-जैन साहित्य प्रसारक कार्यालय बम्बई द्वारा सन १९१४ मे प्रकाशित

इसके अतिरिक्त सुलोचना चरित्र की एक पाण्डुलिपि ईडर के शास्त्र भण्डार में सग्रहीत है ।

वादिचन्द्र की हिन्दी मे भी कितनी ही कृतिया मिलती है जो राजस्थान के विभिन्न शास्त्र भण्डारो मे उपलब्ध होती हैं । अब तक उपलब्ध कुछ कृतियो के नाम निम्न प्रकार है —

१–पार्श्वनाथ वीनती
२–श्रीपाल सोभागी आख्यान
३–बाहुबलिनो छद
४–नेमिनाथ समवसरण
५–द्वादश भावना
६–आराधना गीत
७–अम्बिका कथा
८–पाण्डवपुराण

पार्श्वनाथ विनती की एक प्रति दि जैन मन्दिर कोटडियो का, डू गरपुर के शास्त्र भण्डार मे सग्रहीत है । इसका रचनाकाल सवत् १६४८ दिया हुआ है ।[1] श्रीपाल सोभागी आख्यान की उदयपुर एव कोटा के शास्त्र भण्डारो मे प्रतियां सुरक्षित है ।[2] इसका रचना काल सवत् १६५१ है । प नाथूराम प्रेमी ने आख्यान के विषय मे लिखा है कि यह एक गीति काव्य है और इसकी भाषा गुजराती मिश्रित हिन्दी है । इसकी रचना सघपति धनजी सवा के आग्रह से हुई थी । आख्यान में सभी रसो का प्रयोग हुआ है तथा भाषा एव शैली मे सरलता एव प्रवाह है ।[3] यह एक भक्ति प्रधान काव्य है । काव्य का एक उदाहरण देखिये—

> दान दीजे जिन पूजा कीजे, समकित मने राखिजे जी
> सूत्रज भणिए णवकार गणिए, असत्य न विभाषिजे जी
> लोभ तजी जे ब्रह्म धरीजे, साभल्यातु फल एह जी
> ए गीत जे नर नारी सुणसे अनेक मगल तह गेह जी

---

१ राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों की ग्र थ सूची पचम भाग–पृ स ११६१

२ राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों की ग्र थ सूची पचम भाग–पृ स ४६१

३ सघपति धनजी सवा वचनें कीधो ए प्रबन्ध जी ।
केवली श्रीपाल पुत्र सहित तुम्ह नित्य करो जयकार जी ।

बाहुबलि नो छन्द–इसकी एक पाण्डुलिपि दि. जैन मन्दिर कोटड़िया डू गरपुर के एक गुटके मे सग्रहीत है। डा प्रेमसागर जैन ने इसका नाम भरत बाहुबलि छन्द नाम दिया हुआ है।[१] इस कृति मे वादिचन्द्र ने अपने गुरु का नाम निम्न प्रकार किया है—

तस पाय लागे प्रभासचन्द्र, वाणि बोल्ये वादिचन्द्र।

४–नेमिनाथ नो समवसरण, ५–गौतमस्वामी स्तोत्र एव ३–द्वादश भावना की पाण्डुलिपिया दिगम्बर जैन खण्डेलवाल मन्दिर उदयपुर के शास्त्र भण्डार के एक गुटके मे सग्रहीत हैं। इस गुटके मे वादिचन्द्र के गुरु भ ज्ञानभूषण एव भ वीरचन्द्र आदि की कृतियाँ भी सग्रहीत हैं। डा प्रेमसागर जैन ने आराधना गीत, अम्बिका कथा एव पाण्डवपुराण इन कृतियो का और उल्लेख किया है।[२]

३० कनककीर्ति

कनककीर्ति नामक दो विद्वान हो गये हैं। एक कनककीर्ति खरतर गच्छीय शाखा के प्रसिद्ध जिनचन्द्रसूरी की शिष्य परम्परा मे नयकमल के प्रशिष्य एव जयमन्दिर के शिष्य थे। जैन गुर्जर कविओ भाग एक मे इनकी दो रचनायें नेमिनाथरास एव दौपद्रीरास का उल्लेख हुआ है। इनका निर्माण क्रमश बीकानेर एव जैसलमेर मे हुआ था इसलिये सभवत कवि उसी क्षेत्र के होगे।

दूसरे कनककीर्ति दिगम्बर विद्वान थे और वे भी १७वी शताब्दी के ही थे। इन्होने अपने आपको माणिक का शिष्य होना बतलाया है। इन कनककीर्ति की दिगम्बर भण्डारो मे पर्याप्त सख्या मे कृतिया मिलती हैं। तत्वार्थ सूत्र की श्रुतसागरी टीका पर हिन्दी गद्य मे जो टीका लिखी है वह दिगम्बर समाज मे बहुत लोकप्रिय टीका है। इसकी भाषा ढू ढारी है इसलिये लगता है कि ये कनककीर्ति ढूढाहड प्रदेश के किसी ग्राम अथवा नगर के रहने वाले थे। उन्होने अपनी किसी भी रचना मे खरतरगच्छ अथवा नयकमल के नाम का उल्लेख नही किया है इसलिये डा प्रेमसागर जैन का दोनो विद्वानो को एक मानना सही प्रतीत नही लगता।[३]

दिगम्बर कनककीर्ति की अब तक निम्न रचनाओ की खोज की जा चुकी हैं।

---

१ हिन्दी जैन भक्ति काव्य और कवि–पृष्ठ संख्या १३८

२ हिन्दी जैन भक्ति काव्य और कवि–पृष्ठ सख्या १३९

३ हिन्दी जैन भक्ति काव्य और कवि–पृष्ठ संख्या १७८

१–तत्त्वार्थ सूत्र भाषा टीका
२–बारहखडी
३–मेघकुमार गीत
४–श्रीपाल स्तुति
५–कर्म घटवाली
६–पार्श्वनाथ की आरती

उक्त रचनाओ के अतिरिक्त कनककीर्ति के पद, स्तवन, विनती आदि कितनी ही लघु कृतियाँ मिलती हैं। इन सभी कृतियो से कवि के दिगम्बर मतानुयायी होने का ही उल्लेख मिलता है।

३१ विष्णु कवि

विष्णु कवि उज्जैन के रहने वाले थे। सवत् १६६६ मे इन्होने भविष्यदत्त कथा को उज्जैन मे समाप्त किया था। इसी कथा की एक मात्र अपूर्ण पाण्डुलिपि श्री दिगम्बर जैन सरस्वती भवन पचायती मन्दिर मस्जिद खजूर देहली मे सग्रहीत है। पूरा काव्य ४०१ चौपई छन्दो मे निबद्ध है। भाषा बहुत सरल किन्तु सरस है। कवि ने अपना परिचय निम्न प्रकार दिया है—

सवतु सोरहसै हवै गई, अधिका तापर छासठि भई।
पुरी उज्जैनी कविनि कौ दासु, विष्णु तहा करि रह्यो निवासु।
मन वच क्रम सुनौ सबु कोई, वझन्या सुनै पुत्र फल होइ।
बहिरे सुन ति पावे कान, मूरिख हौहि ते चतुर सुजान।
निर्धन सुनै एकु चित्त लाइ, ता घर रिधि चढै सुभ भाइ।
जो लवधारे चित्त मझारि, रण रावण नहि आवे हारि।
अचला होइ रुप गुन रासि, जन्म न परै कर्म की पासि।
और बहुत गुन कह लगि गनौ, धर्म कथा यहु मनु दे सुनौ
जन्म त होइ ताहि अवसान, निश्चल पदु पावै निर्वान॥

श्वेताम्बर जैन कवि

३२ हरि कलश

हीर कलश खरतर गच्छ के साधु थे। ये जिन चन्द्रसूरि की शिष्य परम्परा मे होने वाले हर्षप्रभ के शिष्य थे। उनका साहित्यिक काल सवत् १६१५ से १६५७ तक का माना जाता है। इन्होने बीकानेर एव नागौर मे सर्वाधिक विहार किया।

ये राजस्थानी भाषा के कवि कहलाते हैं। अब तक उनकी दस रचनायें प्राप्त हो चुकी हैं जिनके नाम निम्न प्रकार है—

१ सम्यकत्वकौमुदी (१६२४) २ सिंहासन बत्तीसी (१६३६)
३. कुमति विध्वसन चौपई (१६१७) ४ आराधना चौपाई (१६१३)
५ अठारह नाता (१६१६) ६ रतनचूड चौपई
७ मोती कपासिया सवाद ८ हरियाली
९ मुनिपति चरित्र चौपई (१६१८) १० सौलह स्वप्न सज्झाय (१६२२)

३३ समयसुन्दर

समयसुन्दर का जन्म साचोर मे हुआ था। इनका जन्म सवत् १६१० के लगभग माना जाता है। डा० माहेश्वरी ने इसे स० १६२० का माना है। इनकी माता का नाम लीलादे था। युवावस्था मे उन्होने दीक्षा ग्रहण करली और फिर काव्य, चरित, पुराण व्याकरण छन्द, ज्योतिष आदि विषयक साहित्य का पहिले अध्ययन किया और फिर विविध विषयो पर रचनाये लिखी। सवत् १६४१ से आपने लिखना आरम्भ किया और सवत् १७०० तक लिखते ही रहे। इस दीर्घकाल मे इन्होने छोटी-बडी सैकडो ही कृतियाँ लिखी थीं। समयसुन्दर राजस्थानी साहित्य के अभूतपूर्व विद्वान् थे, जिनकी की कहावतो मे भी प्रशसा वर्णित है।

"राजा ना ददते सौख्यम्" इन आठ अक्षरो के वाक्य के आपने १० लाख से भी अधिक अर्थ करके सम्राट अकबर और समस्त सभा को आश्चर्य चकित कर दिया था। "सीताराम चौपाई" नामक राजस्थानी भाषा मे निबद्ध एक सुन्दर काव्य है। समयसुन्दर कुसुमाजलि म आपकी ५६३ रचनाये प्रकाशित हो चुकी हैं। सम्बप्रद्युमन चौपाई, मृगावती रास (१६६८), प्रियमेलक रा। (१६७२), शत्रुजय रास, स्थूलिभद्र राम आदि रचनाओ के नाम उल्लेखनीय है।

३४ जिनराजसूरि

ये युग प्रधान जिनचन्द्रसूरि के प्रशिष्य थे। ये भी राजस्थानी भाषा में लिखने वाले कवि थे। इनकी शालिभद्र चौपई बहुत ही लोकप्रिय कृति है। "जिन राजसूरी कृति सग्रह" मे इनकी सभी रचनाये प्रकाश मे आ चुकी हैं। नैषधकाव्य पर इन्होने ३३००० श्लोक प्रमाण सस्कृत टीका की थी। जिनराजसूरि ने सवत् १६८६ मे आगरा मे बादशाह शाहजहाँ से भेंट की थी।

३५ वामो

ये वाचक उदयसागर के शिष्य थे। इनका पूरा नाम दयासागर था। स० १६७१ मे इन्होने जालोर मे "मदन नारिंद चौपई" की रचना ममाप्त की थी। यह हिन्दी भाषा का एक सुन्दर प्रेम काव्य है। इस रचना के मध्य मे रति सुन्दरी ने जो गुप्त लेख अपने प्रियतमा को भेजा था वह विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इसका एक पद्य निम्न प्रकार है—

विरह आगि उपजी अधिक अहृनिस दहैं सरीर।
साहिब वेहु पसाऊ करि, दरसन रूपी नीर॥

३६ कुशललाभ

कुशललाभ राजस्थानी भाषा के उल्लेखनीय कवि थे। "ढोलामारू चौपई" आपकी बहुत ही प्रसिद्ध कृति मानी जाती है। इन्होने "ढोलामारू का दूहा" के बीच-बीच म अपनी चौपाइया मिलाकर प्रबन्धात्मकता उत्पन्न करने का प्रयास किया था। कुशललाभ की चौपाइयो मे विरह रस मे कोई व्याघात नही पहु चा है अपितु कथा के एक सूत्र मे वध जाने से प्रबन्ध काव्य का आनद आया है। डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने भी कुशललाभ की रचना कौशल की प्रशसा की है।

कुशललाभ मे कवित्व शक्ति गजव की थी। तीनो ही रसो मे उन्होने सकल काव्यो का निर्माण किया और साहित्य जगत म गहरी लोकप्रियता प्राप्त की। माधवानल चौपाई इनकी शृ गाररस प्रधान रचना है। श्री पूज्यवाहण गीत, स्थूलिभद्र, छत्तीसी, तेजसार रास, स्तम्भन पार्श्वनाथ स्तवन, गौडी पार्श्वनाथ स्तवन और नवकारछद इनकी भक्ति परक रचनाये हैं। स्थूलिभद्र छत्तीसी का प्रथम पद्य देखिये—

सारद शरदचन्द्र कर निर्मल, ताके चरण कमल चित लाइकि
सुणत सतोष होई श्रवण कु, नागर चतुर सुनइ चित भाइकि
कुशललाभ मुनि आनद भरि, सुगुरुप्रसाद परम सुख पाइकि
करिंह थूलभद्र छत्तीसी, अति सुन्दर पइबध बनाइकि

३७ मानसिंह मान

ये खरतरगच्छ के उपाध्याय शिव निधान के शिष्य और सुकवि। इनकी रचनाये सवत् १६७० से १६६३ तक प्राप्त होती है। इन्होने राजस्थानी एवं हिन्दी दोनो मे काव्य रचनायें की थी। योग बावनी, उत्पत्ति-नाम एव भाषा

कविरस मजरी के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। अन्तिम रचना शृ गार रस प्रधान है नायक नायिका वर्णन सम्बन्धी १०६ इसमे पद्य हैं। इसके आदि और अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है-

सकल कला निधि वादि गज, पचानन परधान ।
श्री शिव विधान पाठक चरण, प्रणमी बदे मुनि मान ॥१॥

नव अकुर जोवन भई, लाल मनोहर होइ ।
कोपि सरल भूपण ग्रहै, चेष्टा मुग्धा होइ ॥२॥

अन्तिम- नारि नारि सब को कहे, किऊ नाइकासु होइ ।
निज गुण मनि मति रीति धरी, मान ग्रथ अब लोइ ।

३८ उदयराज

उदयराज खरतगच्छीय साधु थे। मिश्रबन्धु विनोद मे इनके आश्रयदाता का नाम महाराजा रायसिह लिखा है[1] लेकिन भजन छत्तीसी मे आश्रयदाता जोधपुर के महाराजा उदयसिह थे ऐसा स्पष्ट होता है। श्री अगरचन्द नाहटा ने भी इसी मत को माना है।[2]

भजन छत्तीसी मे कवि ने लिखा है कि उन्होने इसे सवत् १६६७ मे पूर्ण किया था जब वे ३६ वर्ष के थे।[3] इनके पिता का नाम भद्रसार, माता का नाम हरख, भ्राता का नाम सूरचन्द्र, पत्नि का नाम पुरबणि, पुत्र का नाम सूदन और मित्र का नाम रत्नाकर था।[4]

---

१ मिश्रबन्धु विनोद प्रथम भाग पृष्ठ ३६४

२ राजस्थान मे हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थो की खोज-भाग-२
परिशिष्ट। पृष्ठ १४२-४३

३ सोलहसे सतसठे काध जन भजन छत्तीसी
मोनु बरस छत्तीस हुव भनि आवइ ईसी

४ समपिता भद्रसार जनम समये हरषा उर।
समपि भ्रात सुरचन्द्र मित्र समये रयणायर ॥
समपि कलभि पूरबणि समपि पुत्र सुदन बिचायर
रूप अने अवतार ओ भो समये आपज रहण
उदैराज दूह लधो रतो, भव भव समये मह महण
भजन छत्तीसी पद्य ३२

इनकी कृतियों में गुणबावनी, भजन छत्तीसी, चौबीस जिन सवैय्या, मन प्रशंसा दोहा, एवं वैद्य विरहिणी प्रबन्ध के नाम उल्लेखनीय है। इनकी कविताओं में सरसता एवं सरलता है तथा पाठक को आकर्षण करने की शक्ति है। भजन छत्तीसी का एक पद्य देखिये—

प्रीति आय परजले प्रीति अवरा पर जालै
प्रीति गोत्र गालवे प्रीति सुध वंश बिटाले।
प्रीति काज घर नारि छेद दे छौरु छोडे।
प्रीति लाज परिहरै प्रीति पर खडे पाडे।
धन धरै देत दुख अंग मे, अभाव भर लै अजरो जरै
उदेराज कहै सुणि आतमा, इसी प्रीति जिणऊ करै।

३९ श्रीसार

श्रीसार खतरगच्छीय क्षेमकीर्ति शाखा के श्री रत्नहर्ष के शिष्य थे। ये हिन्दी के अच्छे कवि एवं सफल गद्य लेखक थे। इनका समय १७वीं शताब्दी का अन्तिम चरण है। अब तक आपकी तीस से भी अधिक कृतिया प्राप्त हो चुकी हैं। कवि की और भी रचनाओं की खोज आवश्यक है।

४० गणि महानन्द

गणि महानन्द के गुरु का नाम विद्याहष था जो तपागच्छ शाखा के हीरविजयसूरी की परम्परा से सम्बन्धित थे। इनकी एकमात्र रचना अजना सुन्दरी रास प्राप्त हुई है जिसे कवि ने संवत् १६६१ मे रायपुर नगर मे समाप्त की थी। इसकी एक पाण्डुलिपि जैन सिद्धान्त भवन आरा मे सग्रहित है। एक वर्णन देखिये जिसमे अजना सखियो के साथ खेलने का वर्णन किया गया है—

फूलिय वनह बनमालीय वालीय करइ रे टकोल।
करि कुंकुम रग रोलीय धोलिय झकमझोल॥
खेलइ खल खडो कलई, मोकली महीयर सात।
अजना सुन्दरी सुन्दरी मजरी गुही करी ठान॥५४॥

४१ सहजकीर्ति

सहजकीर्ति राजस्थानी भाषा के कवि थे। उनका सागानेर निवास स्थान था तथा खरतरगच्छ की क्षेम शाखा के साधु थे। आचार्य हेमनन्दन के शिष्य थे। इनकी गुरु परम्परा मे जिनसागर, रत्नसागर, रत्नहर्ष एवं हेमनन्दन के नाम

उल्लेखनीय है। राजस्थान इनका प्रमुख कार्यक्षेत्र माना जाता है। इनके द्वारा निबद्ध रचनाओ मे प्रीति छत्तीसी, शत्रुजय, महात्म्यरास, सुदर्शन श्रेष्ठिरास, जिनराज सूरि गीत, जैसलमेर चैत्य प्रवाडी, कलावती रास (१६६७), व्यसन छत्तीसी (१६६८), देवराज बच्छराज चौपई (१६७२), अनेक शास्त्र समुच्चय, पार्श्वनाथ महात्म्य काव्य, वैराग्य शतक आदि के नाम उल्लेखनीय है।

सहजकीर्ति की कितनी ही रचनाये दिगम्बर शास्त्र भडारो मे भी उपलब्ध होती है जिनमे चउबीस जिनगणधर वर्णन, पार्श्वभजन बीस तीर्थ कर स्तुति आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। सहजकीर्ति का निश्चित समय तो मालूम नही हो सका लेकिन इनकी अधिकाश रचनायें १७वी शताब्दी के तृतीय चरण की प्राप्त होती है। कवि की भाषा का एक उदाहरण निम्न प्रकार है—

केवल कमलाकर सुर, कोमल वचन विलास।
कवियण कमल दिवाकर, पणमिय फलविधि पास।
सुर नर किन्नर वर भमर, सुन चरण कज जास।
सरल वचन कर सरसती, नमीयइ सोहाग वास।
जासु पसायइ कवि लहइ, कविजन मई जस वास।
हस गमणि सा भारती, देउ प्रभू वचन विलास॥

—सुदर्शन श्रेष्ठिरास

४२ हीरानन्द मुकीम

हीरानन्द मुकीम आगरा के धनाढ्य श्रावक थे। शाहजादा सलीम से उनका विशेष सम्बन्ध था। ये जौहरी थे। यात्रा सघ निकालने मे इन्हे विशेष रुचि थी। कविवर बनारसीदास ने भी अपने अर्द्ध कथानक मे इनके सम्मेदशिखर यात्रा सघ का उल्लेख किया है। श्री अगरचन्द नाहटा के अनुसार 'वीर विजय सम्मेद शिखर चैत्य परिपाटी" मे यात्रा सघो का वर्णन दिया हुआ है। जिसमे साह हीरानन्द के सघ का भी वर्णन आया है। सघ मे हाथी, घोडे, रथ, पैदल और तुमकदार भी थे। सघ का स्थान स्थान पर स्वागत होता था।

हीरानन्द स्वय कवि भी थे। इनके द्वारा लिखी हुई अध्यात्म बावनी" हिन्दी की एक अच्छी कृति मानी जाती है। बावनी की रचना सवत् १६६८ आषाढ सुदी ५ है बावनी का प्रथम एव अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है—

ऊकार मरु पुरुष ईह अलष अगोचर
अतरज्ञान विचारि पार पावई नहि को नर

ध्यान मूल मनि जाणि प्राणि अतरि हहरावउ।
आतम तत्त अनूप रूप तसु ततषिण पावउ॥
इम कहइ हीरानन्द सघपति अमल अटल इहु ध्यान थिरि।
सुह सुरति सहित मन मइ धरउ भुगति मुगति दायक पवर ॥१॥

अंतिम पद्य—

मगल करउ जिन पास आस पूरण कलि सुरतर।
मगल करउ जिन पास दास जाके सब सुर नर।
मगल करउ जिन पास जास पय सेवई सुरपति
मंगल करउ जिन पास तास पय पूजइ दिनपति
मुनिराज कहई मगल करउ, जिन सपरिवार श्री कान्ह सुख
बावन्न बरन बहु फल करहु सघपति हीरानद तुव ॥५७॥

४३ हेम विजय

हेमविजय आचार्य हीरविजयसूरि के प्रशिष्य एव विजयसेनसूरि के शिष्य थे। सवत् १६३९ मे हीरविजयसूरी अकबर द्वारा आमन्त्रित किये गये थे। इसी तरह विजयसेनसूरि भी सम्राट अकबर द्वारा आमन्त्रित थे। इस तरह हेमविजय को अच्छी गुरु परम्परा मिली थी। हेमविजयसूरि हिन्दी के भी अच्छे विद्वान थे। इनके द्वारा निर्मित कितने ही पद मिलते हैं इनमें भी नेमिनाथ के पद उल्लेखनीय है एक पद देखिये—

कहि राजमती सुमती सखियान कूं एक खिनेक खरी रहुरे।
सखिरी सगिरि अगुरी मुही बाहि करति बहुत इसे निहुरे।
अबही तबही कबही जबही यदुराय कू जाय इसी कहुरे।
मुनि हेम के साहिब नेमजी हो, अब तोरन ते तुम्ह क्यू बहुरे।

४४ पदमराज

"अभयकुमार प्रबन्ध" पदमराज कृत हिन्दी काव्य है जिसमे अभयकुमार के जीवन पर प्रकाश डाला गया है। पदमराज खरतरगच्छ के आचार्य जिनहस के प्रशिष्य एव पुण्यसागर के शिष्य थे। जैसलमेर नगर मे इसकी रचना समाप्त हुई थी। प्रबन्ध का रचना काल सवत १६५० है। प्रबन्ध का अन्तिम पद्य देखिये—

सवत सोलहसइ पचासि जैसलमेरु नगर उलासि।
खरतरगच्छ नायक जिन हस तस्य सीस गुणवत सस।
श्री पुण्यसागर पाठक सीस, पदमराज पभणइ सुजगीस।
जुग प्रधान जिणचन्द मुणिद विजयमान निरुपम आनन्द।
भणइ गुणइ जे चरित महत, रिद्धि सिद्धि सुख ते पामन्ति।

भट्टारक रत्नकीर्ति

[४६]

भट्टारक रत्नकीर्ति धर्म गुरु थे। उपदेश देना, विधि विधान कराना एव सघ का सचालन करना जैसे उनके प्रमुख कार्य थे[1]। लेकिन सबसे अधिक विशेषता उनकी काव्य शक्ति थी। वे गुजरात प्रदेश के रहने वाले थे। गुजराती उनकी मातृभाषा थी। लेकिन हिन्दी मे उन्होने भक्ति परक गीत लिखे और तत्कालीन समाज मे जिन भक्ति के प्रति आकर्षण पैदा किया। रत्नकीर्ति का जन्म गुजरात प्रान्त मे घोघा नगर मे हुआ था। उनके पिता हूबड जातीय श्रेष्ठी देवीदास थे[2]। माता का नाम सहजलदे था। इनके जन्म के समय के सम्बन्ध मे कोई जानकारी नही मिलती लेकिन इतना अवश्य है कि माता ने ऐसे उत्तम पुत्र को पाकर अपने आप को धन्य माना था। पुत्र जन्म पर घर मे ही नही पूरे नगर मे उत्सव आयोजित किये गये थे और माता-पिता भविष्य के सुनहले स्वप्न देखने लगे थे। बालक बडा होनहार था। इसलिए उसको पढने लिखने मे देर नही लगी और थोडे ही समय मे उसने प्राकृत एव सस्कृत का अध्ययन कर लिया। गुजराती उनकी मातृभाषा थी और हिन्दी उसने सहज रूप मे सीख ली थी। थोडे ही समय मे वह अपनी बुद्धि चातुर्य एव विनयशीलता के कारण सबका प्रिय बन गया।

सवत् १६३० मे अभयनदि भट्टारक गादी पर विराजमान थे। अभयनन्दि आचार्य कुन्दकुन्द की परम्परा मे होने वाली मूलसघ सरस्वति गच्छ एव बलात्कारगण शाखा मे होने वाले भट्टारक लक्ष्मीचन्द्र के प्रशिष्य एव अभयनन्दि के शिष्य थे। अभयनन्दि का उस समय काफी प्रभाव था और वे दिगम्बर गच्छ के शिरोमणि थे। गुणो के सागर एव विद्या के केन्द्र थे। भट्टारक अभयनन्दि को जब बालक रत्नकीर्ति की बुद्धि के सबन्ध मे जानकारी मिली तो वे उसको अपना शिष्य बनाने के लिए आतुर हो गये। एक दिन अकस्मात ही जब अभयनन्दि का घोघा नगर मे विहार हुआ तो वे बालक को देखते ही बडे प्रसन्न हुए और उसकी बुद्धि एव वाक्चातुर्य से प्रभावित होकर उसे अपना शिष्य बना लिया।

---

1 राजस्थान के जैन सन्त-व्यक्तित्व एव कृतित्व–पृष्ठ सख्या १२७ से १३४

2 हुबड वशे विबुध विख्यात रे, मात सेहजलदे देवीदास तात रे।
कु वर कलानिधि कोमल काय रे, पद पूजे जेम पातक पलाय रे॥

यद्यपि रत्नकीर्ति ने पहले शास्त्रो का अध्ययन कर रखा था लेकिन भट्टारक अभयनन्दि इससे संतुष्ट नहीं हुए और पुन उसे अपने पास रखकर सिद्धान्त, काव्य व्याकरण, ज्योतिष एव आयुर्वेद विषयो के ग्रथो का अध्ययन करवाया। बालक व्युत्पन्नमति था इसलिये शीघ्र ही उसने ग्रथो पर अधिकार पा लिया। अध्ययन समाप्त होने के पश्चात् अभयनन्दि ने उसे अपना पट्ट शिष्य घोषित कर दिया। बत्तीस लक्षणो एव बहत्तर कलाओ मे सम्पन्न विद्वान युवक को कौन अपना शिष्य बनाना नहीं चाहेगा।

सवत १६३० के दक्षिण प्रान्त के जालणा नगर मे एक विशेष समारोह आयोजित किया गया। समारोह के आयोजक थे सघपति पाक साह तथा सघवणि रपाई तथा उनके पुत्र सघवी आसवा एव सघवी रामाजी जो जाति से बघेरवाल थे। समारोह में भ अभयनन्दि ने सवत् १६३० वैशाख सुदि ३ के शुभ दिन भट्टारक पद पर रत्नकीर्ति का पट्टाभिषेक कर दि ा। उसका नाम रत्नकीर्ति रखा गया। इस पद पर वे सवत १६५६ तक रहे। भट्टारक पट्टाभिषेक के समय वे सिद्धान्त ग्रथो के परम वक्ता थे तथा आगम काव्य, पुराण, तर्क शास्त्र न्याय शास्त्र, छद शास्त्र, नाटक आदि ग्र थो पर वे अच्छा प्रवचन करते थे।

आकर्षक व्यक्तित्व

सत रत्नकीर्ति के सम्बन्ध मे अनेक पद मिलते है जिनमे उनकी सुन्दरता, उनकी विबुधता एव स्वभाव के विस्तृत वर्णन किये गये हैं। इन पदो के रचयिता है गणेश जो उनके शिष्यो मे से एक थे। ये पद उस समय लिखे गये थे जब वे विहार करते थे। रत्नकीर्ति की सुन्दरता का वर्णन करते हुए कवि गणेश लिखते हैं उनकी आखें कमल के समान थी, उनका शरीर फूल के समान कोमल था जिसमे से करुणा टपकती थी। वे पापो के नाशक थे। वे सकल शास्त्रो के ज्ञाता थे और अपने प्रवचनो को इतना अधिक सरस बना देते थे कि जिसको सुनकर सभी श्रोता गद्-गद् हो जाते थे। कवि ने उन्हे गोतम गणधर की उपमा दी है। इसी तरह एक दूसरे पद में उनकी सुन्दरता का व्याख्यान करते हुए गणेश कवि लिखते हैं कि उनकी काति चन्द्रमा के समान थी। उन की दत पक्ति दाडम के समान थी। उनकी वाणी से मधुर रस टपकता था। उनके अधरोष्ठ बिम्ब फल के समान थे। उनके हाथ अत्यधिक कोमल थे तथा हृदय विशाल था। वे पाचो महाव्रतो के धारी, पाच समिति एव तीन गुप्ति के पालक थे। उनका उदय पृथ्वी पर अभयकुमार के रूप में हुआ था वे दिगम्बर

आगम काव्य पुराण सुलक्षण, तर्क न्याय गुरु जाणे जी।
छंद नाटिका पिंगल सिद्धान्त, पृथक पृथक बखाणे जी॥
गीत/रजि० स० ९/पृष्ठ ६६-६७

धर्म के शृ गार स्वरूप थे । उन्होंने कामदेव पर बालकपने से ही विजय प्राप्त कर ली थी । वे अत्यधिक विनयी, विवेकी, मानव थे और दान देने मे उन्होने देवताओ को भी पीछे छोड दिया था । विद्वत्ता में वे अकलक निष्कलक एव गोवर्धन के समान थे । कवि ने लिखा है ऐसे महान सत को पाकर कौन समाज गौरवान्वित नही होगा । एक अन्य पद मे कवि गणेश ने लिखा है कि वे गोमटसार के महान ज्ञाता थे और अभयकुमार के समान व्युत्पन्न मति थे । उनके दर्शन मात्र से ही विपत्तियां स्वयमेव दूर भाग जाया करती थी ।

विहार

रत्नकीर्ति २७ वर्ष तक भट्टारक रहे । इस अवधि मे उन्होने सारे देश में विहार करके जैन धर्म एव सस्कृति तथा साहित्य का खूब प्रचार प्रसार किया । उनका मुख्य कार्यक्षेत्र गुजरात एव राजस्थान का बागड प्रदेश था । बारडोली में उनकी भट्टारक गादी थी इसलिये उन्हे बारडोली का सत भी कहा जाता है । उनकी गादी की लोकप्रियता आसमान को छूने लगी थी इसलिये उन्हे स्थान-स्थान से सादर निमन्त्रण मिलते थे । वे भी उन स्थानो पर विहार करके अपने भक्तो की बात रखते थे । वे जहा भी जाते सारा समाज उनका पलक पावडे बिछाकर स्वागत करता और उनके मुख से धर्म प्रवचन सुनकर कृत कृत्य हो जाता । उनके विहार के सबध मे लिखे हुए कितने ही गीत मिलते है जिनमे उनके स्वागत के लिये जन भावनाओ को उभारा गया है । यहा ऐसा एक पद दिया जा रहा है—

सखी री श्रीरत्नकीरति जयकारी
अभयनद पाट उदयो दिनकर, पच महाव्रत धारी ।
सास्त्रसिधात पुराण ए जो सो तर्क वितर्क विचारी ।
गोमटसार सगीत सिरोमणी, जाणी गोयम अवतारी ।
साहा देवदास केरो सुत सुखकर सेजलदे उर अवतारी ।
गणेश कहे तुम्हे वदो रे भवियण कुमति कुसग निवारी ।।

इसी तरह के एक दूसरे पद मे और भी सुन्दर ढग से रत्नकीर्ति के व्यक्तित्व का उभारा गया है जिसके अनुसार ७२ कलाओ से युक्त, चन्द्रमा के समान मुख वाले गच्छ नायक, रत्नकीर्ति विशाल पाडित्य के धनी हैं । जिन्होने मिथ्यात्वियो के मन का मदन किया है तथा वाद विवाद मे अपने आपको सिंह के समान सिद्ध किया है । सरस्वती जिनके मुख मे विराजती है । वह मान सरोवर के हस के समान, नभ मडल मे चन्द्रमा के समान सम्यक चरित्र के धारी, तथा जैनधर्म के मर्मज्ञ, जालणापुर में प्रसिद्धि प्राप्त, मेधावी, सघवी तोला, मासवा, मली के आराध्य ऐसे भट्टारक

रत्नकीर्ति का जोरदार स्वागत के लिये कवि गणेश जन सामान्य को प्रेरित करता है।[1]

एक अन्य पद में भट्टारक रत्नकीर्ति खान मलिक द्वारा सम्मानित हुए थे ऐसा भी उल्लेख मिलता है।[2] रत्नकीर्ति पोरबन्दर गये। घोघा नगर में तो वे जाते ही रहते थे। बारडोली उनका केन्द्र था। बागड प्रदेश के सागवाडा गलियाकोट एव बांसवाडा आदि मे भी बराबर जाते रहते थे।

प्रतिष्ठा बधान

रत्नकीर्ति ने कितने ही विधान एव प्रतिष्ठाए सम्पन्न करवायी थी। पचकल्याणको मे वे स्वय प्रतिष्ठाचार्य बनते और प्रतिष्ठाओ का सचालन करते थे। उनके द्वारा सम्पन्न तीन प्रतिष्ठाओ का वर्णन मिलता है जिनके माध्यम से वे तत्कालीन समाज मे धार्मिक भावनायें जाग्रत किया करते थे। सबसे पहिले उन्होने दादूनगर मे सवत १६३६ मे पचकल्याणक प्रतिष्ठा सम्पन्न करवायी।[3]

सवत १६४३ मे बारडोली नगर मे ही बिम्ब प्रतिष्ठा का आयोजन सम्पन्न करवाया। नगर मेचारो प्रकार के सघ का मिलन हुआ। भट्टारक रत्नकीर्ति के परामर्शानुसार ककोत्री। (निमन्त्रण पत्र) लिखे गये जिन्हे गावो मे एव नगरो मे भेजा गया। विशाल मडप बनाया गया तथा प्रतिष्ठा महोत्सव मे अकुरारोपण, जलयात्रा आदि विविध क्रियाए सम्पन्न हुई। पच कल्याणक प्रतिष्ठा समाप्ति पर प्रतिष्ठाकारको के रत्नकीर्ति ने तिलक किया उनके साथ तेजबाई, जैमल, मेघाई,

---

१ कला बहोतरी कोडामणो रे, कमल बदन करुणाल रे।
गछ नायक गुण आगलो रे, रत्नकीरति विबुध विशाल रे।।
आवो रे भामिनी गजगामिनी रे, स्वामि जी वाणि विख्यात रे।
अभयनद पद कज दिनकरु रे, धन एहना मात ने तात रे।।

२ लक्षण बत्तीस सकल अ गि बहोतरि, खांन मलिक दिये मानजे।
गोरगीत पृष्ठ सख्या १९५।

३ मांगसीर सुदी पचमी दिने, कुकम चित्रि लखाय।
देस देस पठावे पडत, आवे सज्ज बृब।
बिंब प्रतिष्ठा जोब अझ्ये पुण्य तस घर कब।।

भानेज गोपाल, बेजलदे, मानबाई बहिन आदि सभी थे। यह प्रतिष्ठा संवत् १६४३ बैशाख बुदी पञ्चमी गुरुवार के शुभ दिन समाप्त हुई थी।[४]

बलसाड नगर मे फिर उन्होंने पच कल्याणक प्रतिष्ठा सम्पन्न कराई। यह प्रतिष्ठा हूबड वशीय मल्लिदास ने कराई थी। उसकी पत्नी का नाम राजबाई था। उसके जब पुत्र जन्म हुआ तब मल्लिदास ने दान आदि मे खूब पैसा लगाया तथा एक पच कल्याणक प्रतिष्ठा का आयोजन किया। मगसिर सुदी पचमी के दिन कुंकुम पत्रिका लिखी गई।

चारो ओर गावो मे पडितो को भेजा गया। पत्रिका मे लिखा गया कि जो भी पच कल्याणक प्रतिष्ठा को देखेगा उसे महान पुण्य को प्राप्ति होगी।[१] पन्च कल्याणक प्रतिष्ठा की पूरी विधि सम्पन्न की गयी। अकुरारोपण, वस्तु विधान नादी मडल, होम, जलयात्रा आदि विधान कराये गये। मडल में भट्टारक रत्नकीर्ति सिंहासन पर विराजमान रहते थे। विविध वाद्य यत्र बजाये गये थे। सघपति मल्लिदास, सघवेण मोहनदे, राजबाई आदि की प्रसन्नता की सीमा नही रही। अन्त में कलशाभिशेक सम्पन्न हुए तब प्रतिष्ठा समारोह को समाप्ति की घोषणा की गयी।[२]

इसके पश्चात माघ सुदी एकदशी के शुभ दिन भट्टारक रत्नकीर्ति ने ब्रह्म

---

१ एणी परे सज्जन आवयाए श्रीजिन मडप द्वार के
उत्सव सोभताए याग मडल विध सोभतिए।
सघपूज सुखकार दे, उत्सव अति घणाए
जिन उपर कुंभ ढालायाए, जय जयकार सुथायके॥
पच कल्याणक विध हवाए, श्री रत्नकीर्ति गुरुराय के॥

२ अरे सघ मेल्या विविध देशना, सोल छतीस ए।
बैशाख बुदि एकदसी सोमवार, प्रतिष्ठा तिलक असीस ए।
गीत पृष्ठ सख्या 65

३ श्री रत्नकीर्ति भट्टारक बचने, ककोलि लखाई जे।
गांम गांमनां सघ सेजवाला मे मे पाला आवे॥
मडल रचना अति घणी उपमा, अकोरारोपण उदार जे।
जल यात्रा सातिक सघ पूजा, अन्न दान अपार जी॥
सवत सोल छेहतालि, बेशाख बदि पचमी ने गुरुवार जी।
रत्नकीर्ति गीर तिलक करे, धन्य श्री सघ जय जयकार॥

जयसागर को आचार्य पद पर दीक्षित किया। सर्व प्रथम प्रासुक जल मे स्नान कराया गया। भट्टारक रत्नकीर्ति ने उसके माथे पर तिलक किया तथा पाच महाव्रतो को अ गीकार कराया गया।[६]

इस प्रकार भट्टारक रत्नकीर्ति जीवन पर्यन्त देश के विभिन्न भागो मे विहार करते रहे। वास्तव मे भट्टारक रत्नकीर्ति का युग भट्टारको का स्वर्ण युग था जब सारे देश मे उनके त्याग एव तपस्या की इतनी अधिक प्रभावना थी कि समाज का अधिकाश भाग उन पर समर्पित था। उनके आदेश को शिरोधार्य करने मे ही जीवन की उपलब्धि मान जाता था। भट्टारक सस्था भी अपने आपको साधु समाज का एक प्रतिनिधि बनने का पूरा प्रयास करती रही। समय समय पर उसने अपने को योग्य प्रमाणित किया और समाज एव सस्कृति के विकास मे पूर्ण जागरूक रहा। रत्नकीर्ति का विशाल व्यक्तित्व समाज की आशाओ का केन्द्र था।

शिष्य परिवार

रत्नकीर्ति वैसे तो अनेकों शिष्यो के आचार्य थे, जीवन निर्माता थे और उनके मार्गदर्शक भी, थे लेकिन उनमे से कुमुदचन्द, ब्रह्म जयसागर, गणेश, राघव एव दामोदर के नाम विशेषत उल्लेखनीय है। इन सभी ने रत्नकीर्ति के सम्बन्ध मे पद एव गीत लिखे हैं। कुमुदचन्द्र तो रत्नकीर्ति के पश्चात भट्टारक गादी पर ही बैठ गये। वे योग्य गुरु के योग्य शिष्य थे। लेकिन गनेश ने रत्नकीर्ति के सबध मे सबसे अधिक पद एव गीत लिखे हैं। इन सबके सम्बन्ध मे आगे विस्तृत प्रकाश डाला जायगा। ऐसा लगता है कि रत्नकीर्ति के साथ उनका शिष्य परिवार भी चलता था और वह उनके प्रति अपनी भक्ति भाव प्रगट करता रहता था। रत्नकीर्ति की परम्परा के भट्टारको को छोड़कर अन्य भट्टारको के सम्बन्ध मे इस प्रकार के गीत एव पद प्राय नही मिलते हैं।

कृतित्व

रत्नकीर्ति भक्त कवि थे। नेमिराजुल के जीवन ने उन्हे सबसे अधिक

---

६ माघ सुदी एकादसीए ए सोभन सुक्रवार के।
श्री रत्नकीर्ति सुरीवर हसा तिलक हवा जयकार के
ब्रह्म जयसागर जाणसि ए आचारज पद सार वे।
जल यात्रा जन देखताए, श्री रत्नकीर्ति यतिराय के।
पच महाव्रत आपया ए सब सानीध्य गुरुराय के।
मल्लिदासनी वेल

प्रभावित किया था। यही कारण है कि उनकी अधिकांश कृतियों में ये दोनों ही आराध्य रहे हैं। नेमिराजुल का इस प्रकार का वर्णन अन्य किसी कवि द्वारा लिखा हुआ नहीं मिलता है। अब तक जितनी खोज हो सकी है उसके अनुसार कवि के ३८ पद प्राप्त हो चुके है तथा ५ अन्य लघु रचनाये है। यद्यपि ये सभी लघु कृतियाँ हैं लेकिन भाव एव विषय की दृष्टि से सभी उच्च कोटि की कृतियाँ हैं। रत्नकीर्ति सन्त थे लेकिन अपने पदो मे उन्होने विरह एव शृंगार दोनों ही का अच्छा वर्णन किया है। वे राजुल के सौन्दर्य एव उसकी तडफन से बडे प्रभावित ˜। यही कारण है उनकी प्रत्येक कृति मे दोनो ही भावो की कमी नही है।

सावन का महिना विरही युवतियो के लिये असह्य माना जाता है। जब आकाश मे काले काले बादलो की घटा छा जाती है। कभी वह गरजती है तो कभी बरसती है। ऐसी प्राकृतिक वातावरण मे राजुल भी अकेली कैसे रह सकती थी। इसलिये वह भी अपने विरह को अपनी सखियो के समक्ष बहुत ही करुणामय शब्दो मे निम्न प्रकार व्यक्त करती है—

सखी री सावनी घटाई सतावे
रिमझिम बून्द बदरिया बरसत, नेमि नेरे नही आवे।
कूजत कीर कोकिला बोलत, पपीया वचन न लावे।
दादुर मोर घोर घन गरजत, इन्द्र धनुष डरावे।।सखी।।
लेख लखू री गुपति वचन को, जदुपति कू जु सुनावे
रतनकीरति प्रभु निठोर भयो, अपनो वचन बिसरावे।।

रतनकीर्ति ने उक्त पद मे राजुल की विरही अबला का बहुत ही सही चित्रण किया है। इसमे राजुल की आत्मा बोल रही है और वह नेमि पिया के मिलन के लिये व्याकुल हो चली है। कभी कभी पति त्याग के कारण को लेकर राजुल के मन मे अन्तर्द्वन्द्व होने लगता है। पशुओ की पुकार का बहाना उसके समक्ष मे नही आता और वह कहती है कि सम्भवत मुक्ति रूपी स्त्री के वरण के लिये नेमि ने राजुल को छोडी है। पशुओ की पुकार तो एक बहाना है। इसलिये वह कह उठती है कि "रत्नकीर्ति प्रभु छोडी राजुल मुगति वधु विरमाने।"

कभी कभी राजुल नेमि के घर आने का स्वप्न लेने लगती है और मन मे प्रफुल्लित हो उठती है। एक ओर नेमि हरी है तथा दूसरी ओर वह स्वय हरिवदनी है। हरि के सदृश ही उसकी दो आखे हैं तथा अधरोष्ठ भी हरिलता के रग वाले हैं। इस तरह वह अपने शरीर के सभी अगो का हरि के अगो के समान मान बैठती है और मन मे प्रसन्न हो उठती हैं।

लेकिन जब उसे वास्तविक स्थिति का बोध होता है तो वह नेमि के विरह मे तडपने लगती है और एक रात्रि के सहवास के लिये ही उनसे प्रार्थना करने लगती है। वह कहती है कि प्रातः होने पर चाहे वे दीक्षा स्वीकार करलें लेकिन एक रात्रि को कम से कम उसके साथ व्यतीत करने पर वह अपने जीवन को धन्य समझ लेगी।

> नेम तुम आवा धरिय घरे
> एक रयनि रही प्रात पियारे बोहोरी चारित धरे ॥नेम॥

और जब नेमि राजुल को बार बार पुकार पर भी नही आते हैं तो राजुल भी रुठने का बहाना करती है क्योकि पता नही रुठने से ही नेमि आ जावे इसलिये वह नेमि के पास अपना सन्देश भेजती है कि न वह हाथ मे मेहन्दी माडेगी और न आखो मे काजल डालेगी। वह सिर का अलकार नही करेगी और न मोतियो मे अपनी माग को भरेगी। उसे किसी से भी बोलना अच्छा नही लगता। वह तो नेमि के विरह मे ही तडपती रहेगी और उनकी दासी बनकर रहना चाहेगी।

> न हाथे मडन करू कजरा नेन भरू
> होउ रे वेरागन नेम की चेरी।
> सीस न मागन देउ माग मोती न लेउ।
> अब पोर हू तेरे गुनी चेरी।

नेमि के विरह मे राजुल पागल हो जाती है इसीलिये कभी वह अपनी सजनी से पूछती है तो कभी चन्द्रमा से बात करने लगती है। कभी वह कामदेव को उल्हाना देती है तो कभी वह जलधर से गर्जना नही करने की प्रार्थना करती है। बडा दर्द भरा है कवि के गीत म। राजुल के हृदयगत भावो को उभारने मे कवि पूर्णत सफल हुआ है।

> सुनो मेरी सयनी धन्य या रयनी रे।
> पीउ घर आवे तो जीव सुख पावे रे॥
> सुनि रे विधाता चन्द सतापी रे
> विरहनी बन्ध के सफेद हुआ पापी रे।
> सुन रे मनमथ बतिया एक मुझ रे।

नेमि राजुल के अतिरिक्त भट्टारक रत्नकीर्ति ने भगवान राम के स्तवन के रूप मे पद्य लिखे हैं। कवि ने राम की जिस रूप मे स्तुति की है उसमे उसने

महाकवि तुलसीदास जैसी शैली को अपनाया है। ऐसा मालूम होता है कि महाकवि तुलसी एव सूरदास ने राम एव कृष्ण भक्ति की जो गगा बहायी थी उससे रत्नकीर्ति अपने आपको नही बचा पाये और वे भी राम भक्ति में समा गये और 'वंदेहू जनता शरण" तथा कमल वदन करुणा निलयं जैसे कुछ सुन्दर भक्ति पूर्ण पद लिखकर जन मानस को राम भक्ति में डुबो दिया। कवि का एक पद देखिये—

वदेह जनता शरण
दशरथ नदन दुरति निकंदन, राम नाम शिव करन ॥१॥

अमल अनत अनादि अविकल, रहित जनम जरा मरन।
अलख निरजन बुध मन रजन, सेवक जग अधव्रत हरन ॥२॥

काम रू। करुणा रस फरिस, सुर नरनायक नुत चरण।
रतनकीर्ति कहे सेवो सुन्दर भवउदधि तारन तरन ॥३॥

रतनकीर्ति के अब तक निम्न पद एव कृतिया प्राप्त हो चु।ी हैं।

१ सारँग ऊपर सारग सोहे सारगत्यासार जी
२ सुण रे नेमि सामलीया साहेब क्यो बन छोरी जाय
३ सारग सजी सारग पर आवे
४ वृषभ जिन सेवो बहु प्रकार
५ सखी री सावन घटाई सतावे
६ नेम तुम कैसे चले गिरिनार
७ का।रण कोउ पीया को न जाणे
८ राजुल गेह नेमी जाय
९ राम सतावे रे मोही रावन
१० अब गिरि वरज्यो न माने मोरो
११ नेमि तुम आवो घरिय घरे
१२ राम कहे अवर जया मोही भारी
१३ दशानन वीनती कहत होइ दास
१४ वरज्यो न माने नयन निठोर
१५ झीलते कहा करयो यदुनाथ
१६ सरद की रयनि सुन्दर सोहात
१७ सुदरी सकल सिंगार करे गोरी
१८ कहा थे मडन करु कजरा नैन भरु
१९. सुनो मेरी सयनी धन्य या रयनी रे

२०. रथडो नीहालती रे पूछति सहे सावन नी बाट
२१. सखी को मिलावो नेम नरिंदा
२२ सखी री नेम न जानी पीर
२३ वदेहु जनता शरण
२४. श्रीराग गावत सुर किन्नरी
२५. श्रीराग गावत सारंगधरी
२६ श्राजू श्राली श्राये नेम नो साउरी
२७ बली बधो का न बरज्यो श्रपनो
२८ श्राजो रे सखि सामलियो वहालो रथि परि रुडि श्रावे रे
२९. गोखि चडी जुए राजुल राणी नेमिकुवर वर जावे रे
३०. श्रावो सोहामणीसुन्दरी वृन्द रे पूजिये प्रथम जिणद रे
३१ ललना समुद्रविजय सुत साम रे यदुपति नेमकुमार हो
३२ सुणि राखि राजुल कहे हैडे हरप न माय लाल रे
३३ सशधर वदन सोहामणि रे, गजगामिनी गुणमाल रे
३४ वणारसी नगरी नो राजा श्रश्वसेन का गुणधार
३५ श्रीजिन सनमति श्रवतरया ना रंगी रे
३६ नेम जी दयालुडारे तू तो यादव कुल सिणगार
३७ कमल वदन करुणा निलय
३८ सुदर्शन नाम के मैं वारि

श्रन्य कृतिया

३९ महावीर गीत
४० नेमिनाथ फागु
४१ नेमिनाथ का बारहमासा
४२ सिद्ध धूल
४३, बलिभद्रनी वीनती
४४ नेमिनाथ वीनती

उक्त नामांकित पदो के अतिरिक्त रत्नकीर्ति की सबसे बडी रचना "नेमिनाथ फागु" है। इस फागु मे भगवान नेमिनाथ एव राजुल का जीवन वर्णित हैं। 'फागु" नामांकित इस कृति मे कवि श्रृंगार रस मे अधिक बहे हैं और प्रत्येक वर्णन को श्रृंगार प्रधान बना दिया है। राजुल की सुन्दरता का वर्णन करते हुए कवि ने उसे एक से एक सुन्दर उपमा मे प्रस्तुत किया हैं। ऐसी ही चार पंक्तिया पाठको के अवलोकनार्थ प्रस्तुत की जा रही है।

चद्र बदनी मृग लोचनी मोचनी खजन मीन ।
बासग जीत्यो बेणिह, श्रेणिय मधुकर दीन
युगल गल दीये सशि, उपमा नाशा कीर
अधर विद्रुम सम उपता, दतनू निर्मलनीर ।।

फाग मे ५८ पद्य है जिनमे राजुल नेमि का जन्म से लेकर निर्वाण तक की घटना का वणन किया गया है। फाग मे भी राजुल की विरह वेदना को सशक्त शब्दो मे व्यक्त करने का कवि का ध्येय रहा है। और उसमे कवि पूर्णत सफल भी रहे हैं।

फाग का रचना स्थान हासोट नगर रहा था जो गुजरात का प्रमुख सास्कृतिक नगर था। फाग की राग केदार है।[1]

बाहरमासा भट्टारक रतनकीर्ति की यह कृति भी बडी रचनाओ मे से है। इसमे नेमि के वियोग मे राजुल के बारह महिने कैसे व्यतीत होते है इसका सुन्दर वर्णन किया गया है। कवि का बारहमासा जेठ मास से प्रारम्भ होता है तथा प्रत्येक महिने का वह विस्तृत वणन करता हैं वह राजुल के विरही जीवन के प्रत्येक मनोगत भावो को उभारना चाहता है जिसमे वह पर्याप्त रूप से सफल हुआ है।

आषाढ मास आते ही पति का विरह और भी सताने लगता है। दादुर क्या बोलते हैं मानो प्राण ही निकलते है। घनी वर्षा होती है। अधेरी रात्रिया होती हैं तो पिय की बाट जोहते-जोहते आखो मे आसू आ जाते है। पपीहा पिउ पिउ बोलने लगता है तो राजुल कैसे धैर्य धारण कर सकती है। वृक्ष भी आकाश मे हवा के झोको के साथ जब हिलते है तो वे परस्पर म[illegible] करते हुए लगते है। और जब मयूर अपने पखो को फैलाकर मयूरी के मन को प्रसन्न करता है तो मन अधीर हो जाता है। जब आकाश म बिजली झबक-झबक कर झमकने लगती है तो उसकी कोमल काया उसे कैसे सहन कर सकती है। बिना पिया के वह अकेली कैसे रह सकती है।

तिम तिम नाहलो नेह माने आषाढि अगाल।
दादुर बोले प्राण तोले बरसाते विशाल।

---

1 नेमि विलास उल्हास स्यु, जो गासे नर नारि
रत्नकीरति सूरीवर कहे, ते लहे सौख्य अपार ।। १ ।।
हासोट माहि रचना रची, फाग राग केदार
श्री जिन जुग धन जाणये, सारदा बर दातार ।। २ ।।

दिवस अधारी रातडी वलि वाट घाटे नीर
वापीयडो पिउ पिउ बोले किम घरु मन धीर
तरु तणी साखा करे भाषा सावजा सोहेत।
रितुकाल मोर कला करी मयूरी मन मोहेत।
आज सखी अगाल आव्यो उन्हई ने मेह।
झबक झबके बिजली किम सेह कोमल देह
आयो पणा पीउने पासे करे कामिनी लाड
किम रहु हू एकली रे आवयो आषाढ।

भाषा—बारहमासा की भाषा पर गुजराती का अधिक प्रभाव है क्योंकि इसकी रचना भी घोघा नगर के जिनचैत्यालय मे की गई थी। घोघा नगर १६वीं शताब्दी मे भट्टारको के विहार का प्रमुख केन्द्र था। वहा श्रावको की अच्छी बस्ती थी। जिन मन्दिर था। वह सागर के किनारे पर बसा हुआ था।

शेष रचनाएं—कवि की अन्य सभी रचनाए गीत रूप मे हैं जिनमे नेमि राजुल प्रकरण ही प्रमुख रूप से प्रस्तुत किया गया है। उसके गीतो की आत्मा नेमि राजुल इसी तरह है जिस तरह मीरा के कृष्ण रहे थे। अन्तर इतना सा है कि एक ओर नेमिनाथ विरागी जीवन अपनाते हैं। अपनी तपस्या मे लीन हो जाते हैं और राजुल उनके लिये तडफती अपने विरह की व्यथा सुनाती है, रोती है और अन्त मे जब नेमि तपस्वी जीवन पर ही बने रहते है तो वह स्वय भी तपस्विनी बन जाती है तथा भोगो से विरक्त होकर जगत के समक्ष एक अनोखा उदाहरण प्रस्तुत करती है। नेमि राजुल के प्रसग मे भट्टारक रत्नकीर्ति अपने गीतो के माध्यम मे राजुल के मनोगत भावो का, उसकी विरही जीवन का सजीव चित्र उपस्थित करता है जबकि मीरा स्वय ही राजुल बनकर कृष्ण के दर्शनो के लिये लालायित रहती है स्वय गाती है, नाचती है और अपने आराध्य की भक्ति मे पूर्णत समर्पित हो जाती है।

भट्टारक रत्नकीर्ति अपने समय के प्रमुख सन्त थे। उनका पूर्णत विरागी जीवन था। साथ ही मे वे लेखनी के भी धनी थे। अपने भक्तो, अनुयायियो एव प्रशसको के अतिरिक्त समस्त समाज को नेमि राजुल के प्रसग से जिन भक्ति मे समर्पित करना चाहते थे। लेकिन जिन भक्ति का उद्देश्य भोगो की प्राप्ति न होकर कर्मों की निर्जरा करना था। इसलिये ये गीत १७वी सदी मे बहुत लोकप्रिय रहे और समस्त देश मे गाये जाते रहे।

वे अपने समय के प्रथम सन्त थे जिन्होने नेमि राजुल के प्रसग को अपने

पदो की विषय वस्तु बनाया। उनके समय मे मीरा एव सूरदास के राधा कृष्ण से सम्बन्धित पद लोकप्रिय बन चुके थे और भक्ति रस से ओतप्रोत भक्त का उनके अतिरिक्त कुछ नही दिख रहा था भट्टारक रत्नकीर्ति ने समय की गति को पहिचाना और अपने अनुयायियो एव समाज का ध्यान आकृष्ट करने के लिये नेमि राजुल कथ नक को इतना उछाला कि उसमे उन्हे पूर्ण सफलता प्राप्त हुई। राजुल के मनोगत भावो को व्यक्त करते समय वे कभी स्वाभाविकता से दूर नही हठे और जा कुछ भाव तोरण द्वार से लौटने पर अपने पति के प्रति किसी नयोढा के हाने चाहिये उन्ही भावो को अपने पदो मे उतारने मे उन्हे आशातीत सफ ता मिली।
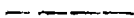
भट्टारक कुमुदचन्द्र

[४७]

कुमुदचन्द्र भट्टारक रत्नकीर्ति के प्रमुख शिष्य थे। वे भट्टारक ग.दी पर रत्नकीर्ति के द्वारा अभिषिक्त किये गये और बागड एव गुजरात प्रदेश के धर्माधिकारी बन गये। भ रत्नकीर्ति ने अपनी गादी की यशोगाथा को चारो ओर फैला दिया था इसलिए कुमुदचन्द्र के भट्टारक बनते ही उनकी भी कीर्ति चारो ओर फैलने लगी। जब वे भट्टारक ब ा ो युवा थ। सौन्दय उनके चरणो को चूमता था। सरस्वती की उन पर पहिले से ही कृपा थी। उन ी वाणी मे आकर्षण था इसलिये वे जन-जन के विशेष प्रिय बन गये और समाज पर उनका पूर्ण वचस्व स्थापित हो गया।

कुमुदचन्द्र का जन्म गोपुर ग्राम मे हुआ था। पिता का नाम सदाफल एव माता का नाम पदमाबाई था। वे मोढवश के सच्चे सपूत थे।[1] उनका जन्म का नाम क्या था इसका कही उल्लेख नही मिलता लेकिन वे जन्म से ही होनहार थे युवावस्था के पूर्व ही उन्होने सयम धारण कर लिया था। उन्होने इन्द्रियो के नगर को उजाड कर कामदेव रूपी नाग को सहज के ही जीत लिया।[2] अध्ययन की ओर उनकी प्रारम्भ मे ही रुचि थी इसलिए वे रात दिन व्याकरण, नाटक, न्याय, आगम-शास्त्र, छद शास्त्र एव अलकारो का अध्ययन किया करते थे।[3] गोम्मटसार जैसे ग्रन्थो का उन्होने विशेष अध्ययन किया था। गुर्वावली गीतो मे कुमुदचन्द्र का निम्न प्रकार गुणगान गाया गया है—

---

१ मोढ वश शृ गार शिरोमणि साहू सदाफल तात रे
जायो जतिवर जुग जयवन्तो पदमाबाई सोहात रे।

२ बालपणे जिणो सयम लिधो, धरीयो वैराग रे।
इन्द्रिय ग्राम उजारया हेला, जीत्यो मद नाग रे।

३ अहनिशि छन्द व्याकरण नाटिक भणे
न्याय आगम अलकार।
वादीगज केशरी बिरूद्व धास रे
सरस्वती गच्छ सिणगार रे। गीत धर्म सागर कृत

तस पद कुमुद कुमुदचन्द्र, क्षमावत गुरु गत तद्र ।
मुनीन्द्र चद्र समो यश उजलोए
+ + + + + +
कुमुदचन्द्र जेहलो चादलो, रत्नकीरति पाटे गोरह् भलो ।
मोढवश उदयाचल रवि, जेहना वचन बखाणे कवि ।

एक गीत मे कुमुदचन्द्र की सभी दृष्टियो से प्रशसा की गई हैं । गीत के अनुसार पचाचार, पाँच समिति एव तीन गुप्ति के वे पालनकर्ता थे । क्रोध कषाय पर उन्होने प्रारम्भ से ही विजय प्राप्त करली थी । कामदेव पर भी उनकी विजय अदभुत थी इसलिये वे शीलश्रृ गार कहलाते थे । गीत मे उनकी जन्मभूमि, माता पिता एव वश सभी का गुणानुवाद किया है—यही नही उनकी शारीरिक विशेषताओ को भी गिनाया गया हैं ।

समिति गुपति आदि ए पाले चरित्र तेर प्रकार ।
क्रोध कषाय तजी रे वेगे जीन्यो रति भरतार ।
शील श्रृ गार सोहे रे बुद्धि उदयो अभयकुमार ।।
+ + + + + +
आखडी कज पाखडी रे अधर रग रह्यो परवाल
राणी माभली रे लाजीगई कोमल बन अतराल ।
शरीर सोहामणू रे गमने जीत्यो गज गुणगान ।
को कहे गुरु अवतारे देउ दान मान मोती भाल ।।

सवत् १६५६ वैशाख मास मे बारडोली नगर म रत्नकीर्ति ने स्वय अपने शिष्य कुमुदचन्द्र को अपने ही हाथो से भट्टारक पद पर प्रतिष्ठापित कर दिया ।[1] यह था भट्टारक रत्नकीर्ति का त्याग । वे उसी समय से मूलसघ सरस्वती गच्छ के श्रृ गार कहलाने लगे । शास्त्रार्थ करने मे वे अत्यधिक चतुर थे ।[2]

विहार

कुमुदचन्द्र ने भट्टारक बनते ही गुजरात एव राजस्थान मे विहार किया और

---

१ सबत् सोल छपन्ने वैशाखे प्रगट पट्टीधर थाप्या रे ।
रत्नकीरति गोर बारडोली वर सूर मत्र शुभ आप्या रे ।।

२ मूल सघ मगट मणि माहत सरसति गच्छ सोहावे रे ।
कुमुदचद्र भट्टारक आगलि वादि को वादे न आवे रे ।।

अपने ओजस्वी, मधुर तथा आकर्षक वाणी से सबका हृदय जीत लिया। वे जहां भी जाते अभूतपूर्व स्वागत होता तथा समाज उनके लिये पलक पावडे बिछा देता। कुंकम छिडका जाता तथा चौक पूर करके बधावा गाये जाते। चारो ओर श्रद्धा भक्ति एव गुणानुवाद का वातावरण बन जाता। उनके दर्शनमात्र से समाज अपने आपको धन्य मान लेता।[१]

कुमुदचन्द्र के एक शिष्य सयमसागर ने तो समस्त समाज से उनके स्वागत करने के लिये निम्न पद लिखा हैं —

आवो साहेलडी रे सहू मिलि सगे
वादो गुरु कुमुदचन्द्र ने मनि रगे।
छद आगम अलकार नो जांण
चारु चितामणी प्रमुख प्रमाण।
तेर प्रकार ए चारित्र सोहे
दीठडे भवियण जन मन मोहे।
साह सदाफल जेहनो तात
धन जनम्यो पदमाबाई मात।
सरस्वती गच्छ तणो सिणगार
वेगस्यु जीतियो दुर्द्धरमार।
महीयले मोढवशो सु विख्यात
हाथ जोडाविया वादी सघात।
जे नरनार ए गोर गुण गावे
सयमसागर कहे ने सुखी थाय॥

गनेश कवि ने भी एक कुमुदचन्द्रनी हमची लिखी है जिसमे उसने कुमुदचन्द्र के गुणो का विस्तृत वर्णन किया है। बारडोली नगर मे भट्टारक गादी स्थापित करने एव उस पर कुमुदचन्द्र को पट्टस्थ करने मे सघपति कहानजी,स सहस्रकरण जी मल्लिदास एव गोपाल जी का सबसे बडा योगदान था। हमची में कुमुदचन्द्र के पाडित्य एव विद्वत्ता की निम्न शब्दो में प्रशसा की है

पडित पणे प्रसिद्ध प्राक्रमी वागवादिनी वर एहने
सेवो सुरतरु चिन्त्यो चिंतामणि उपमा नही कहे ने रे

---

१ सुन्दरि रे सहु आवो, तम्हे कुंकमु छडो देवडावो
वास मोतिये चौक पूरावो, रुडा सहु गुरु कुमुदचन्द्र ने बधावो॥

भट्टारक पद स्थापन के पश्चात् बारडोली नगर साहित्यिक, धार्मिक एव आध्यात्मिक गतिविधियो का केन्द्र बन गया। कुमुदचन्द्र की वाणी सुनने के लिये वहा धर्म प्रेमी समाज का जमघट रहता था। कभी तीर्थ यात्रा करने वालों का सघ उनका आशीर्वाद लेने आता तो कभी कभी विभिन्न नगरो का समाज उन्हें सादर निमन्त्रण देने आता। कभी वे स्वय ही सघ का नेतृत्व करते तथा तीर्थो की यात्रा कराने मे सहयोग देते। सवत १६८२ मे कुमुदचन्द्र सघ सहित घोघा नगर आये जो उनके गुरु रत्नकीर्ति का जन्म स्थान था। बारडोली वापिस लौटने पर श्रावकों ने उनका अभूतपूर्व स्वागत किया। इसी वर्ष उन्होने गिरनार जाने वाले एक सघ का नेतृत्व किया था और उसमे अभूतपूर्व सफलता पाई थी।[1]

साहित्य सेवा

कुमुदचन्द्र बडे भारी साहित्यिक भट्टारक थे। साहित्य सर्जना मे वे अधिक विश्वास करते थे। इसलिये भट्टारक पद के कर्त्तव्य से अवकाश पाते ही वे काव्य रचना मे लग जाते। इसलिये एक गीत मेउन के लिये "अहनिशि छद व्याकर्ण नाटिक भणे न्याय आगम अलकार" लिखा गया है। कुमुदचन्द्र की अब तक जितनी रचनायें मिली हैं वे सब राजस्थानी भाषा की ही है। उनकी अब तक २८ छोटी बडी कृतिया एव ३० से भी अधिक पद मिल चुके है। लेकिन शास्त्र भण्डारो की खोज पोने पर और भी रचनाये मिलने की आशा है। उनकी प्रमुख रचनाओ के नाम निम्न प्रकार है —

१ भरत बाहुबलि छद
२ आपन क्रिया विनती
३ ऋषभ विवाहलो
४ नेमिनाथ का द्वादशमासा
५ नेमिश्वर हमची
६. अणयरतिगीत
७ हिन्दोलना गीत
८. दशलक्षणि धर्म व्रत गीत
९ अढाई गीत
१० व्यसन सातनू गीत
११ भरतेश्वरगीत

---

१ सवत सोल ब्यासीये सवच्छर गिरनारि यात्रा कीधा।
श्री कुमुदचंद्र गुरु नामि सघपति तिलक कहवा॥
गीत धर्मसागर कृत

१२ पार्श्वनाथगीत
१३ गौतम स्वामी चौपाई
१४ सकटहर पार्श्वनाथनी विनती
१५ लोडणपार्श्वनाथनी विनती
१६ जिनवर विनती
१७ गुरुगीत
१८ आरतीगीत
१९ जन्म कल्याणक गीत
२० अधोलडी गीत
२१ शीतगीत
२२ चिन्तामणि पार्श्वनाथ गीत
२३ दीवाली गीत
२४ चौबीस तीथकर देह प्रमाण चौपाई
२५ ब्रह्मभद्रनी विनती
२६ नेमिजिन गीत
२७ बणजारागीत
२८ गीत
२९ विभिन्न राग रागनियो मे निर्मित पद

इस प्रकार कुमुदचन्द्र की जो कृतिया राजस्थान के विभिन्न शास्त्र भण्डारो मे उपलब्ध हुई हैं उनका नामोल्लेख किया जा सका है। कवि की सभी रचनायें राजस्थानी भाषा मे है जिन पर गुजराती का पूर्ण प्रभाव है। वास्तव मे १७वी शताब्दि मे गुजराती एव राजस्थानी भिन्न-भिन्न नही हो सकी थी। इसलिये कवि ने अपनी कृतियो मे दोनो ही भाषाओ का प्रयोग किया है। इनकी रचनाओ मे गीत अधिक है जिन्हे ये अपने प्रवचन के समय श्रोताओ के साथ गाते थे। नेमिनाथ के तोरण द्वार पर आकर वैराग्य धारण करने की अद्भुत घटना से ये अपने गुरु रत्नकीर्ति के समान बहुत प्रभावित थे इसलिये इन्होने भी नेमि राजुल पर कितनी ही रचनाए एवं पद लिखे हैं उनमे नेमिनाथ बारहमासा, नेमिश्वरगीत, नेमिजिनगीत आदि के नाम उल्लेखनीय है। कवि की कुछ प्रमुख रचनाओ का परिचय निम्न प्रकार है —

१ भरत बाहुबली छंद

भरत बाहुबलि एक खण्ड काव्य है, जिसमे मुख्यत भरत और बाहुबलि के युद्ध का वर्णन किया गया है। भरत चक्रवर्ति को सारा भूमण्डल विजय करने के

पश्चात मालूम होता है कि अभी उनके छोटे भाई बाहुबलि ने उनकी अधीनता स्वीकार नही की है तो सम्राट भरत बाहुबलि को समझाने को दूत भेजते हैं। दूत और बहुबलि का उत्तर-प्रत्युत्तर बहुत सुन्दर हुआ है।

अन्त में दोनो भाइयो मे युद्ध होता है, जिसमे विजय बाहुबलि की होती हैं। लेकिन विजय श्री मिलने पर भी बाहुबलि जगत से उदासीन हो जाते हैं और वैराग्य धारण कर लेते हैं। घोर तपश्चर्या करने पर भी "मैं भरत की भूमि पर खडा हुआ हैं" यह शल्य उनके मन से नही हटती। लेकिन जब स्वयं सम्राट भरत उनके चरणो में आकर गिरते हैं और वास्तविक स्थिति को प्रगट करते हैं तो उन्हे तत्काल केवल ज्ञान प्राप्त हो जाता है। पूरा का पूरा खण्ड काव्य मनोहर शब्दो में ग्रथित है। रचना के प्रारम्भ मे कवि ने जो अपनी गुरु परम्परा दी है वह निम्न प्रकार है—

पणविवि पद आदीश्वर केरा, जेह नामे छूटे भव-फेरा।
ब्रह्म सुता समरु मतिदाता, गुण गण मडित जग विख्याता॥

वदवि गुरु विद्यानदि सूरी, जेहनी कीर्ति रही भर पूरी।
तस पट्ट कमल दिवाकर जाणु, मल्लिभूषण गुरु गुण बखाणु॥
तस पट्टोधर पडित, लक्ष्मीचन्द महाजस मडित।
अभयचन्द गुरु शीतल वायक, सेहेर वश मडन सुखदायक॥

अभयनदि समरु मन माहि, भव भूला बल गाडे बाहि।
तेह तणि पट्टे गुणभूषण, वदवि रत्नकीरति गत दूषण॥
भरत महिपति कृत मही रक्षण, बाहुबलि बलगत विचक्षण।

बाहुबलि पोदनपुर के राजा थे। पोदनपुर धन धन्य, बाग बगीचा तथा झीलो का नगर था। भरत का दूत जब पोदनपुर पहुचता है तो उसे चारो ओर विविध प्रकार के सरोवर, वृक्ष, लताये दिखलाई देती है। नगर के पास ही गगा के समान निर्मल जल वाली नदी बहती है। सात-सात मजिल वाले सुन्दर महल नगर की शोभा बढा रहे हैं। कुमुदचद्र ने नगर की सुन्दरता का जिस रूप में वर्णन किया है उसे पढिये—

चाल्यो दूत पयाणे रे हे तो, थोडे दिन पोयणपुरी पोहोतो।
दीठी सीम सघन कण साजित, बापी कूप तडाग विराजित॥

कलकार जो नल जल कु डी, निर्मल नीर नदी अति ऊंडी।
विकसित कमल अमल दलपती, कोमल कुमुद समुज्वल कती॥

बन बाडी आराम सुरगा, अब कदब उदंबर तु गा ।
करण केतकी कमरख केली, नव नारगी नागर बेली ॥

अगर तगर तरु तिंदुक ताला, सरल सोपारी तरल तमाला ।
बदरी बकुल मदाड बीजोरी, जाई जुई जबु जभीरी ॥
चदन चपक चारउली, वर वासती वटवर सोली ।
रायणरा जबु सुविशाला, दाडिम दमणो द्राख रसाला ॥

फूला सुगुल्ल अमूल्ल गुलाबा, नीपनी वाली निबुक निबा ।
कणयर कोमल लता सुरगी, नालीयरी दीसे अति चगी ॥
पाडल पनश पलाश महाधन, लवली लीन लवग, लताधन ।

बाहुबलि के द्वारा अधीनता स्वीकार न किए जाने पर दोनो ओर की विशाल सेनाये एक दूसरे के सामने आ डटी । लेकिन देवो और राजाओ ने दोनो भाइयो को ही चरम शरीरी जानकर वह निश्चय किया कि दोनों ओर की सेनाओ में युद्ध न होकर दोनो भाइयो मे ही जलयुद्ध नेत्रयुद्ध एवं मल्लयुद्ध हो जावे और उसमें जो जीत जावे उसे ही चक्रवर्ती मान लिया जाये । इस वर्णन को कवि के शब्दो में पढिये—

त्रण्य युद्ध त्यारे सहु बेढा, नीर नेत्र मल्लाह व परढया ।
जो जीते ले राजा कहिये, तेहनी आण विनयसु वहिए ।
एह विचार करीनें नरवर, चल्या सहु साथे मछर भर ।
भुजा दड मन सु ड समाना, ताडगा गाबारे नाना ।
हो हो कार करि ते धाया, वच्छो वच्छ ते पडया राया ।
हक्कारे पच्चारे पाडे, वलगा वलग करी ते आडे ।
पग पडघा पोहोवीतल बाजे, कड़कडता तरुवर से भाजे ।
नाठा वनचर त्राठा कायर, छूटा मयगल फूटा सायर ॥
गड गडता गिरिवर ते पडीआ, फूल फरता फणिपति डरीआ ।
गढ गडगडीआ मन्दिर पडीआ, दिग दतीव मक्या चल चकीया ।
जन खलभली आवालक छलीया, भव-भीरु अबला कल मलीआ ।
तोपण से धरणी धवढ़के, थलड डता पडता नवि चूकें ।

---

१ चाल्या मल्ल अखाड़े बलीआ, सुर नर किन्नर जोवा मलीआ ।
काछ्या काछ कसी कड तांणी, बोगड बोली बोले वाणी ॥

(२) त्रेपन क्रिया विनती

इसमें त्रेपन क्रियाओ के पालने पर प्रकाश डाला गया है। त्रेपन क्रियाओ में ८ मूलगुण, १२ व्रत, १२ तप, ११ प्रतिमा, ४ प्रकार के दान तथा ६ आवश्यको के नाम गिनाये गये है। विनती की अन्तिम दो पक्तिया निम्न प्रकार है—

> जे नर नारी गावसी ए विनती सुचग।
> ते मन वाछित पामसे नित नित मगल रग।

(३) आदिनाथ विवाहलो

इसका दूसरा नाम ऋषभजिन विवाहलो भी है। कवि की "विवाहलो" बडी कृतियो मे गिना जाता है जो ११ ढालो मे पूर्ण होता है। विवाहलो नाभिराजा की नगरी-कोशल नगरी वर्णन मे प्रारम्भ होता है। नाभिराजा के मरुदेवी रानी थी जो मधुर वाणी युक्त, रूप की खान एव रूप की ही कली थी। रानी १६ स्वप्न देखती है। स्वप्न का फल पूछती है और यह जानकर प्रसन्नता से भर जाती है कि वह तीर्थ कर की माता बनने वाली है। आदिनाथ का जन्म होता है। इन्द्रो द्वारा जन्म कल्याणक मनाया जाता है। आदिनाथ बडे होते है और उनका विवाह होता है। इसी विवाह का कवि ने विस्तृत वर्णन किया है। कच्छ महाकच्छ की कन्याओ की सुन्दरता, देवताओ द्वारा विवाह की तयारी, विवाह मे बनने वाले विविध व्यञ्जन, बारात की तैयारी, ऋषभ का घोडी पर चढना, वाद्ययन्त्रो का बजना, अनेक उत्सवो का आयोजन आदि का सुन्दर वर्णन किया गया है। अन्त मे भरत बाहुबलि आदि पुत्रो की उत्पत्ति, राज्य शासन, वैराग्य आदि का भी वर्णन किया गया है।

प्रस्तुत रचना तत्कालीन सामाजिक रीति रिवाजो की प्रतीक है। कवि ने प्रत्येक रीति रिवाज का बहुत ही सुन्दर वर्णन किया है। विवाह मे बनने वाले व्यञ्जनो का वर्णन देखिये—

> दूध पाक चखासा करीया, सारा सकरपारा कर करीया।
> मोटा मोती अमोदक लावे दलिया कसमसीआ भावे।
> अति सरवर सेवइया सुन्दर, आरोगे भोग पुरन्दर
> श्रीसे पापड मोटा तलीया, मारआला अति उजलीया
> मीठे सरसी ये राई दोधी, मेत्हे केरो अवाणे कीधी
> आध्या केर काकड स्वाद लागे, लिबू जमना जीभे रस जाणे।

विवाहलो सवत् १६७८ अषाढ शुक्ला २ सोमवार को समाप्त हुआ था। इस समय कुमुदचन्द्र घोघा नगर मे थे।

सवत सोल अठ्योतारए, मासा अषाढ धनसार।
उजली बीज रलीया मरिणए, अति भलो ते शशिवार
लक्ष्मीचन्द्र पाटे निरमलाए, अभयचन्द्र मुनिराय।
तस पटे अभयनन्दि गुरुए, रत्नकीरति सुभ काय
कुमुदचन्द्रे मन उजलेए, घोघा नगर मझारि।

विवाहलो की पाण्डुलिपियाँ राजस्थान के विभिन्न भण्डारो में उपलब्ध होती है।

(४) नेमिनाथ का द्वादशमासा

इसमे नेमिनाथ के विरह मे राजुल की तडपन का सुन्दर वर्णन मिलता है। बाहरमासा कवि की लघु कृति है जो १४ पद्यो मे पूर्ण होती है।

(५) नेमीश्वर हमची

भट्टारक रत्नकीर्ति के समान ही कुमुदचन्द्र भी नेमि राजुल की भक्ति मे समर्पित थे इसलिये उन्होने भी नेमि राजुल के जीवन पर विभिन्न कृतिया एव पद लिखे है। हमची भी ऐसी ही रचना है जिसमे ८७ छन्दो मे नेमिनाथ के जीवन की मुख्य घटनाओं का वर्णन किया गया है। रचना की भाषा राजस्थानी है लेकिन उस पर महाराष्ट्री का प्रभाव है। पूरी रचना अलकारो से युक्त है। हमची मे राजुल की सुन्दरता, बरात की सजधज, विविध बाघ यन्त्रो का प्रयोग, तोरण द्वार से लोटने पर राजुल का विलाप आदि घटनाओ का बहुत ही मार्मिक वर्णन मिलता है।

नेमिनाथ तोरण द्वार से लौट गये। राजुल विलाप करने लगी तथा मूर्च्छित होकर गिर पडी। माता पिता ने बहुत समझाया लेकिन राजुल ने किसी की भी नही सुनी। आखिर पति हो तो स्त्री के जीवन मे सब कुछ है इसी का एक वर्णन देखिये—

बाडि बिना जिम बेलि न सोहे, अर्थ बिना जिम वाणी।
पडित जिम सभा न सोहे, कमल बिना जिम पाणी रे॥ ८२॥
राजा बिन जिम भूमि न सोहे, चद्र बिना जिम रजनी।
पीउड बिना अबला न सोहे, साभलि मेरी सजनी॥ ८३॥

हमची की पाण्डुलिपि ऋषभदेव के भट्टारकीय शास्त्र भण्डार के एक गुटके मे सग्रहीत है।

(६) अध्यरांत गीत

यह भी विरहात्मक गीत है और राजुल की तीनो ऋतुओ मे पति वियोग से होने वाली दशा का वर्णन किया गया है। इसमे मुख्यतः प्रकृति वर्णन अधिक हुआ है। लेकिन ऋतु वर्णन का आलबन राजुल ही है। शीत ऋतु आने पर राजुल कहती है कि वह बिना पिया के कैसे रहेगी—

बाजे ते शीतल वायरा, बाझे ते वाहिर हार।
धूजे ते बनना पखिया, किम रहेस्ये रे बनि पिय सुकुमार के ॥ ८ ॥

इसी तरह हिम ऋतु मे निम्न सात प्रकार के साधन सुख का मूल माना गये है—

तैल तापन तुला तरुणी ताम्रपट तबोल।
तप्ततोय ते सातमू सुखिया मेरे हिम रिति सुख मूल के।

इस प्रकार गीत छोटा होने पर भी गागर मे सागर के समान है।

(७) हिन्दोला गीत

यह गीत भी राजुल का सन्देश गीत है जिसमें वह नेमि के विरह से पीडित होकर विभिन्न सन्देश वाहको से नेमि के पास अपना सन्देश भेजती रहती है। गीत मे कवि ने राजुल की आत्मा को निकाल कर रख दिया है राजुल कहती है—

घर वन जाल सग सहू, विरह दवानल झील।
हू हिरणी तिहा एकली, केसरि काम कराल ॥ १४ ॥
वह फिर सदेश भेजती है
भोजन तो भावे नही, भूषण करे रे सताप
जो हू मरिस्य बिलखि थई, तो तह्म लागस्ये पाप ॥ १९ ॥
पशु देखी पाछा वल्या, मनस्सु थया रे दयाल
मझ उपरि माया नही, ते तम्हेस्या रे कृपाल ॥ २० ॥
तम्हे सयम लेवा सचरया, जाण्यो पम्वो हर्व मर्म।
एकस्यु रुसी एकस्यु तुसी अबलो तुम्हारी धर्म ॥ २१ ॥

गीत मे ३१ पद्य है। अन्त मे कवि ने अपने नाम का उल्लेख किया है—

ए भणता सुख पामीइ, विघन जाये सहु दुरि।
रतनकीरति पर मडणो, बोले कुमुदचन्द्र सूरि ॥ ३१ ॥

(८) दशलक्षणि धर्म व्रत गीत

इस गीत में दश लक्षण धर्मों पर सुन्दर प्रकाश डाला गया है। कवि ने गीत का प्रारम्भ निम्न प्रकार किया है—

धर्म करो ते चित उजले रे जे दस लक्षण।
स्वर्गतणा ते सुख पामीइ जिम तरीय ससार ॥१॥

(९) अठाई गीत

वर्ष में तीन बार अष्टाह्निका पर्व आता है जो कार्तिक, फागुन एवं अषाढ मास के शुक्ल पक्ष की अष्टमी से पूर्णिमा तक आठ दिन तक मनाया जाता है। प्रस्तुत गीत मे अष्टाह्निका व्रत करने की विधि एव कितने उपवास करने पर कितना फल मिलता है उसका वर्णन किया गया है। पूरा गीत १४ पद्यो का है जिसका अन्तिम भाग निम्न प्रकार है—

जे नर नारी व्रत करीये तेहने घरि आणद जी
रत्नकीरति गौर पाट-पटोधर, कुमुदचन्द्र सुरिंद जी।

(१०) व्यसन सातनू गीत

कवि ने प्रस्तुत गीत मे मानव को सप्त व्यसनो के त्याग की सलाह दी है क्योकि जो भी प्राणी इन व्यसनो के चक्कर मे पडा है उसी का जीवन नष्ट हुआ है। सात व्यसन है—जुआ खेलना, मास खाना, मदिरा पान करना, वेश्या सेवन करना, शिकार खेलना, चोरी करना, पर स्त्री सेवन करना। कवि ने पहिले ८ पद्यो मे व्यसनो की बुराई बतलाई है और फिर आगे के चार पद्यो मे उदाहरण देकर इन व्यसनो मे नही पडने की सलाह दी है।

परनारी सगम—म करिस्य मूरख व्यसन सातमे परनारी री सग।
हाव भाव करस्ये ते खोटी, जे हवो रग पतग।
जीव मू के व्यसन असार, जोव छूटे तु ससार॥

उदाहरण—चारुदत्त दुख अति घणु पाम्यो, राज्यो वेश्या रूप।
ब्रह्मदत्त चक्री आहेडे, ते पडियो भव कूप।
जीव मू के व्यसन असार, जीव छूटे तु ससार॥

(११) भरतेश्वर गीत

कवि ने भरतेश्वर गीत का दूसरा नाम 'अष्ट प्रातिहार्य गीत' भी लिखा है। इसमें आदिनाथ के समवसरण की रचना एव भगवान के अष्ट प्रातिहार्यों का वर्णन दिया हुआ है। गीत सरल एव मधुर भाषा मे निबद्ध है। इसमे सात छन्द हैं अन्तिम छन्द निम्न प्रकार है—

> भव्य जीवनने जे सबोधे, चोत्रीस अतिशयवत।
> युगला धर्म निवारण स्वामी सही मङ्गल विचरत।
> शेष कर्मने जीते जिनवर थया मुक्ति श्रीकत।
> कुमुदचन्द्र कहे श्रीजिन गाता लहिये सुख अनत ॥७॥

(१२) पार्श्वनाथ गीत

इस गीत मे कवि ने हासोट नगर के जिन मन्दिर मे विराजमान पार्श्वनाथ स्वामी के पच कल्याणको का वर्णन किया है। गीत मे १० पद्य हैं हैं। अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है—

> श्री रत्नकीरति गुरुने नमी, कीधा पावन पच कल्याण।
> सुरी कुमुदचन्द्र कहे जे भणे, ते पामे अमर विमान ॥१०॥

(१३) गौतम स्वामी गीत

गौतम स्वामी के नाम स्मरण के महात्म्य का वर्णन करना ही गीत रचना का प्रमुख उद्देश्य रहा है। पूरे गीत म ८ पद्य है।

(१४) लोडण पार्श्वनाथ विनती

लाड देश के डभाई नगर मे पार्श्वनाथ स्वामी का प्रख्यात मन्दिर है। वहा की पार्श्वनाथ की जिन प्रतिमा लोडण पार्श्वनाथ के नाम से जानी जाती है। भट्टारक कुमुदचन्द्र ने एक बार आते सघ मन्दिर वहा की यात्रा की थी। पार्श्वनाथ स्वामी की सातिशय प्रतिमा है जिसके नाम स्मरण मे ही विघ्न बाधाए स्वत ही दूर हो जाती है। विनती म ३० पद्य हैं—अन्तिम तीन पद्य निम्न प्रकार है—

> जेह ने नामे नासे शोक, सकट सघला थाये फोक।
> लक्ष्मी रहे नित सगे ॥२८॥

नाम जपता न रहे पाप, जनम मरण टाले सताप।
आये मुगति निवास ॥२९॥
जे नर समरे लोडण नाम, ते पामे मन वछित काम।
कुमुदचन्द्र कहे भासा ॥३०॥

(१५) आरती गीत

भगवान की आरती करने से अशुभ कर्मों का नाश होता है पुण्य की प्राप्ति होती है और अन्त मे मोक्ष की उपलब्धि होती है। इन्ही भावो को लेकर यह आरती गीत निबद्ध किया गया है। इसमे ७ पद्य हैं।

सुगध सारग दहे, पाप ते नवि रहै।
मनह वाछित लहे, कुमुदचन्द्र करो जिन आरती।

(१६) जन्म कल्याणक गीत

तीर्थ कर का जन्म होने पर देवताओ द्वारा उनका जन्माभिषेक उत्सव मनाया जाता है उसी का इसमे वर्णन किया गया है। एक पक्ति मे सिद्धार्थनन्दन के नाम का उल्लेख करने से यह भगवान महावीर के जन्म कल्याणक का गीत लगताहै। गीत मे ८ पद्य है। प्रत्यक पद्य चार-चार पक्तियों का है।

(१७) अन्धोलडी गीत

प्रस्तुत गीत मे बालक ऋषभदेव की प्रात कालीन जीवन चर्या का वर्णन किया गया है। ऋषभदेव के प्रात उठते ही अन्धोलडी की जाती है अर्थात् उनके अगो मे तेल, उबटन, केशर, चन्दन लगाया जाता है। तेल चुपडा जाता है फिर निर्मल एव स्वच्छ जल से स्नान कराया जाता है। स्नान के पश्चात् शरीर को अगोछा से पोछा जाता है फिर पीत वस्त्र पहनाये जाते हैं आखो मे कज्जल लगाया जाता है। उसके पश्चात् नाश्ता मे दाख, बादाम अखरोट, पिस्ता, चारोली, घेवर, फीणी, जलेबी, लड्डू आदि दिये जाते हैं।

ऋषभदेव ने नाश्ता के पश्चात् बहुत बारीक वस्त्र पहिन लिये साथ ही मे कान मे कुण्डल, पाव मे घूघरडी, गले मे हार तथा हाथो मे बाजूबन्द पहिन लिये और वे सबके मन को लुभाने लगे।

गीत मे १३ पद्य हैं। अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है--

बाजूबन्द सोहामणी राखडली मनोहार।
रुपे रतिपति जीतियो, जाये कुमुदचन्द्र बलिहार॥

(१८) शील गीत

इस गीत में कवि ने चारित्र प्रधानता पर जोर दिया है। यदि मानव असयमी है काम वासना के अधीन होकर अनैतिक आचरण करता है तो उसके अच्छी गति कभी प्राप्त नहीं हो सकती। दूसरी स्त्रियो के साथ जीवन बिगाडने के लिये कवि कहता है—

जेह बो खोटो रे रग पतगनो।
तेहवो चटको रे परत्रिय सगनो
परत्रिया केरो प्रेम प्रिउडा रखे को जाणो खरो।
दिन चार रग सुरग रुअडो, पछे मरहे निरघरे।
जो घणा साथे नेह माडे छाडि ते हस्यु बातडी
इस जाणी मन करि नाहुला, परनारी साथे प्रीतडा॥

गीत मे १० ढाल एव १० त्रोटक छन्द है।

(१९) चिन्तामणि पार्श्वनाथ गीत

प्रस्तुत गीत मे चिन्तामणि पार्श्वनाथ की अष्ट द्रव्य से पूजा करने के महात्म्य का वर्णन किया गया है। अष्ट द्रव्यो मे प्रत्येक द्रव्य से पूजा करने के महत्व पर भी प्रकाश डाला गया है।

जल चन्दन अक्षत वर कुसुमे, चरु दीवडलो धूपे रे।
फल रचना सू अरघ करो सखी जिम न पडो भव कूप रे

गीत मे १३ पद्य हैं। गीत के अन्त मे कवि ने अपने एव अपने गुरु दोनो के नामो का उल्लेख किया है। चिन्तामणि पार्श्वनाथ पर कवि का एक गीत और भी मिलता है।

(२०) दीवाली गीत

इस गीत मे दीपावली के अवसर पर भगवान महावीर के मोक्ष कल्याणक उत्सव मनाने के लिये प्रेरणा दी गयी है। उसी समय गोत्तम गणधर को कैवल्य हुआ और अपने ज्ञान के आलोक से लोकालोक को प्रकाशित किया। देवताओ ने नृत्य करके निर्वाण कल्याणक मनाया तथा मानव समाज ने घर घर में दीपक जलाकर निर्वाण कल्याणक के रूप मे दीपावली मनायी।

(२१) चौबीस तीर्थंकर देह प्रमाण गीत

प्रस्तुत गीत में चौबीस तीर्थंकरो के देह प्रमाण पर चार चरणो का एक एक पद्य निबद्ध किया गया है। रचना साधारण श्रेणी की है। जो २७ पद्यों में पूरी होती है। अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है—

ए चौबेसे जिनवर नमो,
जिम ससार विषे नवि भमो।
पामो अविचल सुखनी खानि
कुमुदचन्द्र कहे मीठी वाणी ।।२७।।

(२२) वणजारा गीत

इस गीत मे जगत की नश्वरता का वर्णन किया गया हैं। गीत की प्रत्येक पक्ति "वणजारा रे एह ससार विदेस, भमीय भमी तु उसनो" से समाप्त होती है। यह मनुष्य वणजारे के रूप मे यो ही ससार मे भटकता रहता है। वह दिन रात पाप कमाता है इसलिये ससार बन्धन से कभी नही छूटने पाता।

पाप कर्या ते अनत, जीव दया पालो नही।
साची न बोलियो बोल, मरम मो साबहु बोलिया ॥

गीत में विविध उपाय भी सुझाये गये हैं। गीत मे 41 पद्य हैं।

पद साहित्य

छोटी बडी रचनाओ के अतिरिक्त कुमुदचन्द्र ने पद भी पर्याप्त सख्या मे निबद्ध किये हैं। उस समय पद रचना करना भी कविगत विशेषता मानी जाती थी। कबीर, मीराबाई, सूरदास एव तुलसीदास सभी ने अपने अपने पदो के माध्यम से भक्तिरस की जो गगा बहाई थी वैसी ही अथवा उसी के अनुरूप कुमुदचन्द्र ने भी अपने पदो मे अर्हद भक्ति की ओर जन सामान्य का ध्यान आकृष्ट किया। वे भगवान पार्श्वनाथ के बडे भक्त थे। इसलिये अपने पदो मे भी पार्श्वनाथ भक्ति की गगा बहाई। वे कहते हैं कि उन्होने आज भगवान पार्श्व के दर्शन किये हैं। उनका शरीर सावला है, सुन्दर मूर्तिमान है तथा सिर पर सर्प सुशोभित है। वे कमठ के मद को तोडने वाले हैं तथा चकोर रूपी ससार के लिये वे चन्द्रमा के समान हैं। पाप रूपी अन्धकार को नष्ट कर प्रकाश करने वाले हैं तथा सूर्य के समान उदित होने वाले हैं। इन्ही भावो को कवि के शब्दो में देखिये—

आजु में देखे पास जिनेंदा
सावरे गात सोहमनि मूरति, शोभित शीस फणेंदा ।।आजु।।
कमठ महामद भजन रजन, भविक चकोर सुचदा
पाप तमोपह भुवन प्रकाशक उदित अनूप दिनेंदा ।।आजु।।
भुविज-दिविज पति दिनुज दिनेसर सेवित पद अरविन्दा
कहत कुमुदचन्द्र होत सबे सुख देखत वामानदा ।।आजु।।

कुमुदचन्द्र लोडण पार्श्वनाथ के बडे भक्त थे। उन्होने लोडण पार्श्वनाथ की विनती लिखने के अतिरिक्त दो पद भी लिखे हैं जिनमे लोडण पार्श्वनाथ की भक्ति करने में अपने आपको सौभाग्यशाली माना है एक पद मे "वे आज सबनि में हू बड भागी" कहते हैं और दूसरे पद मे लोडण पार्श्वनाथ के दर्शनमात्र से अपने जन्म को सफल मान लेते हैं इसलिये वे कहते हैं "जनम सफल भयो, भयो सु काजरे, तनकी तपत मेगी सब मेटी, देखत लोडण पास आज रे।'

भक्ति के रग मे रग कर वे भगवान से कहते है कि यदि वे दीनदयाल कहते हैं तो उन जैसे दान को क्यो नही उबारते है। कवि का "जा तुम दीनदयाल कहावत" वाला पद अत्यधिक लोकप्रिय रहा तथा जन सामान्य उसे गाकर प्रभु भक्ति मे अपने आपको समर्पित करता रहा।

जब भक्तिरस मे ओतप्रोत होने पर भी विघ्नो का नाश नही होने लगा तथा न मनोगत इच्छाए पूरी होने लगी तो भगवान का भी उलाहना देने मे वे पीछे नही रहे और उनसे स्पष्ट शब्दो मे निम्न प्रार्थना करने लगे—

प्रभु मेरे तुम कु ऐसी न चाहिये
सघन विघन घेरत सेवक कू मौन धरी किउ रहिये ।।प्रभु।।
विघन-हरन सुख-करन सबनिकु, चित चिन्तामनि कहिए
अशरण शरण अबन्धु बन्धु कृपासिन्धु को विरद निबहिये ।।प्रभु।।

जो मनुष्य भव मे आकर न तो प्रभु की भक्ति करते हैं और न व्रत उपवास पूजा पाठ करते है तथा कोई न पुण्य का काम करते हैं लेकिन जब वे मृत्यु को प्राप्त हाने लगते हैं तो हृदय मे बडा भारी पछतावा होता है और उनके मुख से निम्न शब्द निकल पडते हैं—

मैं तो नर भव बाधि गमायो
न कियो तप जप व्रत विधि सुन्दर, काम भलो न कमायो ।।मैं तो।।

विकट लोभ तैं कपट कूर करी, निपट विषै लपटायो
विटल कुटिल शठ सगति बैठो, साधु निकट विघटायो ।।मैं तो।।

इसी पद मे कवि आगे कहते हैं कि हे मानव तू दिन प्रतिदिन गाठ जोडता रहा और दान देने का नाम भी नही लिया और जब यौवन को प्राप्त हुआ तो दूसरी स्त्रियो के चक्कर मे फसकर अपना समस्त जीवन ही गवा दिया । जब ससार से विदा होने लगा तो किसी ने साथ नही दिया और पापो की गठरिया लेकर ही जाना पडा तब पश्चाताप के अतिरिक्त शेष कुछ नही रहा । इन्ही भावो को कवि के शब्दो मे देखिए—

कृपण भयो कुछु दान न दीनो दिन दिन दाम मिलायो ।
जब जोवन जजाल पड्यो तब परत्रिया तनु चित लायो ।।मैं तो।।
अत समै कोउ सग न आवत, झूठहि पाप लगायो ।
कुमुदचन्द्र कहे चूक परी मोही, प्रभु पद जस नही गायो ।।मैं तो।।

अर्हद भक्ति एव पार्श्व भक्ति के अतिरिक्त भट्टारक कुमुदचन्द्र ने अपने गुरु भट्टारक रत्नकीर्ति के समान राजुल नेमि पर भी कितने ही पद निबद्ध करके राजुल की विरह भावना के व्यक्त करने मे वे आगे रहे हैं । राजुल की विरह भावना को व्यक्त करते हुए वे "सखी री अब तो रह्यो नहि जात", जैसे सुन्दर पद की रचना कर डालते हैं और उसमे राजुल के मनोगत भावो का पूरा चित्र प्रस्तुत कर देते हैं । राजुल को न भूख लगती है और न प्यास सताती है तथा वह दिन प्रतिदिन मुरझाती रहती है । रात्रि को नीद नही आती है और नेमि की याद करते करते प्रात हो जाता है । विरहावस्था मे न तो चन्द्रमा अच्छा लगता है और न कमल पुष्प । यही नही मद मद चलने वाली हवा भी काटने दौडती हैं इन्ही भावो को कवि के शब्दो मे देखिये—

नहि न भूख नही तिसु लागत, घरहि घरहि मुरझात ।
मन तो उरझी रहयो मोहन सु सेवन ही सुरझात ।।सखी।।
नाहिते नीद परती निसि वासर, होत विसुरत प्रात ।
चन्दन चन्द्र सजल नलिनी दल, मन्द मरुत न सुहात ।।

अब तक कवि के ३८ पद उपलब्ध हो चुके है लेकिन बागड प्रदेश के शास्त्र भण्डारो मे सग्रहीत गुटको मे उनका और भी पद साहित्य मिलने की संभावना है । कुमुदचन्द्र के पदो के अध्ययन से उनकी गहन साहित्य सेवा का पता चलता है । वे भट्टारक जैसे सम्मानीय एव व्यस्त पद पर रहते हुए भी दिन रात साहित्याराधना

में लगे रहते थे और अपनी छोटी बडी कृतियो के माध्यम से समाज मे पवित्र वातावरण बनाने में लगे रहते थे। वास्तव मे उनका समस्त जीवन ही जिनवाणी की सेवा में समर्पित रहता था। उनका पद साहित्य एव अन्य कृतियां उनके हृदय का प्रतिनिधित्व करती हैं। वे दिन रात तीर्थ कर भक्ति मे स्वय डूबे रहते थे और अपने भक्तो को डुबोया रखते थे। वह समय ही ऐसा था। चारो ओर भक्ति ही भक्ति का वातावरण था। ऐसे समय में कुमुदचन्द्र ने जनता की मांग को देखते हुए साहित्य सर्जना में अपने आपको समर्पित रखा। उनका साहित्य पढ़ने से उनके हृदय की चुभन का पता लगता है। उनको सारे समाज को विभिन्न प्रकार की बुराइयो एव दूषित वातावरण से दूर रखते हुए जीवन का विकास करना था और इसके लिये साहित्य सर्जन को ही अपना एक मात्र साधन माना। वे अपने गुरु रत्नकीर्ति से भी दो कदम आगे रहे और अनेको कृतियो की रचना करके उस समय के भट्टारको साधु सन्तो के समक्ष एक नया आदर्श उपस्थित किया।

शिष्य परिवार

वैसे तो भट्टारको के अनेक शिष्य होते थे। उनके सम्पर्क मे रहने मे ही लोग गौरव का अनुभव करते थे। लेकिन कुमुदचन्द्र ने अपने सभी शिष्यो को साहित्य सेवा का व्रत दिया और अपने समान ही साहित्य सर्जन मे लगे रहने की प्रेरणा दी। यही कारण है कि उनके शिष्यो की भी अनेक रचनाए मिलती है। कुमुदचन्द्र के प्रमुख शिष्यो मे—अभयचन्द्र, ब्रह्मसागर, धर्मसागर, सयमसागर, जयसागर एव गणेशसागर के नाम उल्लेखनीय हैं। इन सबने कुमुदचन्द्र के सम्बन्ध में भी कितने ही पद लिखे हैं जिससे उनके विशाल व्यक्तित्व एव अपने गुरु के प्रति समर्पित जीवन का पता लगता है। इनके सम्बन्ध मे आगे विस्तृत रूप से प्रकाश डाला जावेगा।

विहार

गुजरात का बारडोली नगर इनका प्रमुख केन्द्र था। इसलिये इन्हे बारडोली का सन्त भी कहा जाता है। यही पर रहते हुए वे सारे देश मे अपने जीवन, त्याग एव साधना के आधार पर लोगो को पावन सन्देश सुनाते रहते थे। वे प्रतिष्ठाओ मे भी जाते थे और वहा जाकर धर्म प्रचार किया करते थे।

भट्टारक काल

कुमुदचन्द्र भट्टारक गादी पर सवत् १६५६ से १६८५ तक रहे। इन २९–३० वर्षों मे उन्होने समाज को जाग्रत रखा और सदैव साहित्य एव धर्म प्रचार की ओर

अपना लक्ष्य रखा। वे संघ के साथ विहार करते और जन जन का हृदय सहज ही जीत लेते। वे प्रतिष्ठा—महोत्सवो, व्रत विधानो आदि मे भाग लेते और तत्कालीन समाज से ऐसे आयोजनो को करते रहने की प्रेरणा देते।

भाषा

कुमुदचन्द्र की कृतियो की भाषा राजस्थानी के अधिक निकट है। लेकिन गुजरात एव बागड प्रदेश उनका मुख्य विहार स्थल होने के कारण उसमे गुजराती का पुट भी आ गया है। मराठी भाषा मे भी वे लिखते थे। 'नेमीश्वर हमची' मराठी भाषा की सुन्दर रचना है। कृतियो मे उनके पदो की भाषा अधिक परिस्कृत है और कितने ही पद तो खडी बोली मे लिखे गये जैसे लगते हैं और उन्हे तुलसी, सूर और मीरा द्वारा रचित पदो के समकक्ष रखे जा सकता हैं। भाषा के साथ साथ भाव एव शैली की दृष्टि से भी कवि का पद साहित्य उल्लेखनीय है। रचनाओ में थारी, म्हारी, पाछे, बल्यो, जैसे शब्दो का प्रयोग बहुत हुआ है। इसी तरह आव्यू, जाव्यू, हरख्या, सूक्या जैसे क्रिया पदों की बहुलता है। कभी-कभी कवि शुद्ध राजस्थानी शब्दो का प्रयोग करता है जिसे निम्न पद्य मे देखा जा सकता है—

> कातिय दिन दिवालिना सखि घरि घरि लील विलास जी
> किम करु कत न आवियो, हवेस्यु करिये परि घरि वासि जी।
>
> नेमिनाथ बारहमासा

इसी तरह राजस्थानी भाषा का एक और पद्य देखिये—

> वचन माहरु मानिये, परनारी थी रहो वेगला।
> अपवाद माथे चढे मोटा रक थइये दोहिला।
>
> शील गीत

छन्दों का प्रयोग

कुमुदचन्द्र की विविध रचनाओ से ज्ञात होता है कि वे छन्द शास्त्र के अच्छे वेत्ता थे इसलिये उन्होने अपनी कृतियो को विभिन्न छन्दो में निबद्ध की है। कवि को सबसे अधिक त्रोटक, ढाल एव विभिन्न राग रागनियो मे काव्य रचना करना प्रिय रहा। गीत लिखना उन्हे रुचिकर लगता था इसलिये इन्होने अधिकाश कृतियां गीतात्मकता शैली में लिखी हैं। वे अपनी प्रवचन सभाओ मे इन गीतो को सुनाकर अपने भक्तो को भाव विभोर कर देते थे।

सवत् १७४८ कार्तिक शुक्ला पञ्चमी के दिन लिखित एक प्रशस्ति मे भट्टारक कुमुदचन्द्र की पूर्ववर्ती एव उत्तरवर्ती भट्टारक परम्परा निम्न प्रकार दी है —

मूल सघ, सरस्वती गच्छ एव बलात्कारगण

इस प्रकार भट्टारक कुमुदचन्द्र के पश्चात सवत् १७०० के पूर्व तक भट्टारक अभयचन्द्र एव भ शुभचन्द्र और हुए। इन दोनो भट्टारको का परिचय निम्न प्रकार है—

४६ भट्टारक अभयचन्द्र

अभयचन्द्र सवत् १६८५ मे भट्टारक गादी पर विराजमान हुए। वे भट्टारक बनते समय पूर्णयुवा थे। उन्होने कामदेव के मद को चकनाचूर कर दिया था। वे विद्वता मे गौतम गणधर के समान थे। अपूर्व क्षमाशील, गभीर एव गुणो की खान थे। विद्या के वे कोष थे तथा वाद विवाद मे वे सदैव अपराजित रहते थे। प श्रीपाल ने उनके सम्बन्ध मे अपने एक पद मे निम्न प्रकार परिचय दिया है —

> चन्द्रवदनी मृग लोचनी नारि
> अभयचन्द्र गछ नायक वादो, सकल सघ जयकारि।

मदन महामद मोडेए मुनिवर, गोयम सम गुणधारी
क्षमावतवि गभीर विचक्षण, गुरुयो गुण भडारी ।।

अभयचन्द्र अपने गुरु भट्टारक कुमुदचन्द्र के योग्यतम शिष्य थे। उन्होने भट्टारक रत्नकीर्ति एव भट्टारक कुमुदचन्द्र का समय देखा था और देखी थी उनकी साहित्यिक साधना इसलिये जब वे स्वय भट्टारक बने तो उन्होने भी उमी परम्परा को जीवित रखा। बारडोली नगर मे इनका पट्टाभिषेक हुआ था। उस दिन फाल्गुण सुदी ११ सोमवार सवत् १६८५ था। पाट महोत्सव मे समाज के अनेक प्रतिष्ठित व्यक्ति उपस्थित थे। इनमे सघवी नागजी, हेमजी, मेघवी, रूपजी, मालजी, भीमजी आदि के नाम उल्लेखनीय है। कविवर दामोदर ने पाट महोत्सव का निम्न शब्दो मे वर्णन किया है—

बारडोली नयरि उछव कीधो, महोछव अन्त अवारी ।
सघवी नाग जी अति आणद्या, हेमजी हरष अपार ।
सघवी कु वर जी कुलमडल, मेघजी महिमावत
रूपजी मालजी मनोहार, सहु सज्जन मन मोहत ।
मघवं भीमजी गावस्यु, सुत जीवा मने उल्हास
मघवई जीवराज उनट घणो, पहोती छे मन तणी आस ।
सवत सोल पच्यासीये, फागुण सुदि एकादशी सोमवार
नेमिचन्द्र सुर मत्रज, आप्पा बरतयो जयकार ।।

अभयचन्द्र का जन्म सवत १६६० के लगभग हूवड वश मे हुआ था। इनके पिता का नाम श्रीपाल एव माता का नाम कोडमदे था। बचपन मे ही बालक अभयचन्द्र को साधुओ की मडली मे रहने का सुअवसर मिल गया था। हेमजी कु वर जी इनके भाई थे। ये सम्पन्न घराने के थे। युवावस्था के पूर्व ही उन्होने पाच महाव्रतो का पालन प्रारम्भ कर दिया था।

हूबड वशे श्रीपाल साह तात, जनम्यो रुडी रतनते कोडमदे मात ।
लघु पणें लीधो महाव्रत भार, मनवश करी जीत्यो दुर्धरि मार ।

इसी के साथ इन्होने सस्कृत प्राकृत के ग्रथो का उच्च अध्ययन किया। न्याय शास्त्र मे पारगता प्राप्त की तथा अलकार शास्त्र एव नाटको का तलस्पर्शी अध्ययन किया। इसके साथ ही अष्टसहस्री, त्रिलोकसार, गोम्मटसार जैसे ग्रन्थो का गहरा ज्ञान प्राप्त किया।

व्याकर्ण छन्द अलकार रे अष्ट सहस्त्री उदार रे
त्रिलोक गोम्मटसार के भाव हृदय धरे ।।

जब उन्होने युवावस्था मे पदार्पण किया तो त्याग एव तपस्या के प्रभाव से उनकी मुखाकृति स्वयमेव आकर्षक बन गयी और भक्तो के लिये वे आध्यात्मिक जादूगर बन गये । इनके पचासो शिष्य बन गये उनमे गणेश, दामोदर, धर्मसागर, देवजी, रामदेवजी के नाम विशेषत उल्लेखनीय हैं । इन शिष्यो ने भट्टारक अभयचन्द्र की अपने गीतो मे भारी प्रशसा की है । लगता है उस समय चारो ओर अभयचन्द्र का यशोगाथा फैल गयी थी । जब वे विहार करते तो इनके शिष्य जन-साधारण को एव विशेषत महिला समाज को निम्न शब्दो मे आह्वान करते थे—

आवो रे भामिनी गज वर गमनी
वादवा अभयचन्द्र मिली मृग नयनी ।
मुगताफलनी लाल भरी जे
गच्छनायक अभयचन्द्र वधावीज ।
कु कुम चन्दन भरीय कचोली
मेमे पद पूजो गोरना गृह भली ।। ३ ।।

अभयचन्द्र के सम्बन्ध मे उनके शिष्य प्रशिष्यो द्वारा कितने ही प्रशसात्मक गीत मिलते है जिनसे कितने ही नवीन तथ्यो की जानकारी मिलती है । इन्ही के शिष्य धर्मसागर ने एक गीत मे उनके यश की प्रशसा करते हुए लिखा है कि देहली के सिंहासन तक उनकी प्रशसा पहुच गयी थी और वहा भी उनका सम्मान था । चारो ओर उनका यश फैल गया था ।

दिल्ली रे सिंहासन केरो राजियो रे
गाजियो यश त्रिभुवन मन्दिरे ।।

इसी तरह उनके एक शिष्य दामोदर ने अपने एक गीत मे भक्तो से निम्न प्रकार का आग्रह किया है —

वादो वादो सखी री श्री अभयचन्द्र गोर वादो ।
मूलसघ मडल दुरित निकदन कुमुदचन्द्र पाटि वादो ।। १ ।।
शास्त्र सिद्धान्त पूरण ए जाण, प्रतिबोधे भवियण अनेक
सकल कला करी विश्व मे रजे भजे वादि अनेक ।। २ ।।
हूबड वशे विख्यात वसुधा, श्रीपाल साधन तात ।
जायो जननी यती यशवतो कोडमदे धन मात ।। ३ ।।

रतनचन्द्र पाटि कुमुदचन्द्र यति प्रेमे पूजो पाय ।
तास पाटि श्री अभयचन्द्र गोर दामोदर नित्य गुण गाय ।। ४ ।।

भट्टारको की वेश भूषा लाल चद्दर वाली होती थी । चद्दर को राजस्थानी मे पछेवडी कहते है । इसलिये जब भट्टारक अभयचन्द्र अपनी भट्टारकीय वेश भूषा मे सभा मे बैठते थे तो वे कितने सुन्दर एव लुभावने लगते थ इसी को धर्म सागर ने एक गीत मे छन्दो बद्ध किया है—

लाल पिछोडी अभयचन्द्र सोहे
निरखतॉं भवियकना मन माहे ।
आखडली कज पाखडीरे, मुखड् ते पूनिमचन्द
शुक चाची सम नासिका रे, अधर प्रवालीना वृद रे
कठे कबू हराविया रे, हैडले सरस्वती वाल्ही
बादि सकोमल एहजीरे पिछि, हाथि रढियो ली रे

सवत् १७०६ मे भट्टारक अभयचन्द्र का सूरत नगर मे विहार हुआ । उस समय उनका वहा अभूतपूर्व स्वागत हुआ । घर घर मे उत्सव आयोजित किये गये । मगल गीत गाये गये । चारो ओर आनन्द ही आनन्द छा गया । जय जय कार होने लगी । इसी एक दृश्य का "देवजी" न एक प- मे निम्न प्रकार छन्दो बद्ध किया है—

आज आणद मन अति घणो ए, काई वरतयो जय जय कार ।
अभयचन्द्र मुनि आवयाए काई सूरत नगर मझार रे ।।
घरे घरे उछव अति घणाए, काई मानती मगल गाय रे ।
अ ग पूजा ने उवारणाए, काई कुकुम छडादे वडाय रे ।
श्लोक वखाणो गोर प्रभोभता र, वाणी मीठी अपार साल तो ।
धम कथा य मारणी ने प्रतिबोध ए, कोई कुमति नो करे परिहार जी ।
सवत सतर छलोतरे काई हरजी प्रेमजीनी पूगी आस रे ।
रामजीने श्रीपाल हरषी पाए, काई वेलजी कुअरजी मोहनदास रे ।
गौतम सम गोर सोभतो ए काई बूधे जया अभयकुमार रे ।
सकल कला गुण मडणो ए, काई देवजी कहे उदयो उदार रे ।।

इस तरह के और भी बीसो गीत भट्टारक अभयचन्द्र के सम्बन्ध मे उके ईन शिष्यो द्वारा लिखे हुये मिलते है जिनमे उनकी भूरि भूरि प्रशसा की गई है । अभयचन्द्र का इतना अच्छा वर्णन उनके असाधारण व्यक्तित्व की ओर स्पष्ट

सकेत हैं। वे 36 वर्ष तक भट्टारक पद पर रहे और सारे प्रदेश मे अपने हजारो प्रशसको एव भक्तो का समूह इकट्ठा कर लिया।

अभयचन्द्र के अब तक निम्न रचनाये प्राप्त हो चुकी हैं—

(१) वासपूज्यनी धमाल (२) गीत
(३) चन्दा गीत (४) सूखडी
(५) पद्मावती गीत (६) शान्तिनाथजी विनती
(७) आदीश्वरजी विनती (८) पञ्चकल्याणक गीत
(९) बलभद्र गीत (१०) लाछन गीत
(११) विभिन्न पद।

भट्टारक अभयचन्द्र की विद्वता एव शास्त्रो के ज्ञान को देखते हुए उक्त कृतिया बहुत कम है इसलिये अभी उनकी किसी बडी कृति के मिलने की अधिक सभावना है लेकिन इसके लिय बागड प्रदेश एव गुजरात के शास्त्र भण्डारो मे खोज की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त यह भी सभव है कि अभयचन्द्र ने साहित्य निर्माण के स्थान पर वैसे ही प्रचार प्रचार पर अधिक जोर दिया हो।

अभयचन्द्र की उक्त सभी रचनाए लघु कृतिया है। यद्यपि काव्यत्व भाषा एव शैली की दृष्टि से ये उच्च स्तरीय रचनाए नही है लेकिन तत्कालीन समाज की माग पर ये रचनाए लिखी गयी थी इसलिय इनमे कवि का काव्य वैभव एव सौष्ठव प्रदर्शन होने के स्थान पर प्रचार-प्रसार का अधिक लक्ष्य रहा था। कुछ प्रमुख रचनाये का सामान्य परिचय निम्न प्रकार है—

१—वासपूज्यनीधमाल

१० पद्यो मे २०वे तीर्थ कर वासुपूज्य स्वामी के कल्याणको का वर्णन दिया गया है। धमाल मे सूरत नगर का उल्लेख है जो सभवत वहा के मन्दिर मे वासुपूज्य स्वामी की प्रतिमा स्तवन के कारण होगा।

सूरत नगर मानु जगईस, सकल सुरासर नामे शीस।
मूलसघ मण्डल मनोहर कुमुदचन्द्र करुणा भण्डार ॥६॥
तेह पाटे उदयो वर हश, अभयचन्द्र धन हूबड वश।
ते गोर गाये एह सुभास, भणता सुणता स्वर्ग निवास ॥१०॥

२—चन्दागीत

इस गीत मे कालीदास के मेघदूत के विरही यक्ष की भाति स्वय राजुल

अपना सन्देश चन्द्रमा के माध्यम से नेमिनाथ के पास भेजती हैं। सर्वप्रथम चन्द्रमा से अपने उद्देश्य के बारे मे निम्न शब्दो मे वर्णन करती है—

> विनय करी राजुल कहे, चन्दा वीनतडी अब धारो रे।
> उज्ज्वल गिरि जई वीनवे, चन्दा जिहा छे प्राण आधार रे।।
> गगने गमन ताहरु रुवडू, चन्दा अमिव बरषे अनन्त रे।
> पर उपगारी तू भनो, चन्दा वलि बलि वीनवू सत रे।।

राजुल ने इसके पश्चात् भी चन्द्रमा के सामने अपनी यौवनावस्था की दुहाई दी तथा विरहग्नि का उसके सामने वर्णन किया।

> विरह तणा दुख दोहिता, चदा ते किम मे सहे वाय रे।
> जल बिना जेम मछली, चदा ते दुख मे बाय रे।।

राजुल अपने सन्देश वाहक से कहती है कि यदि कदाचित नेमिकुमार वापिस चले आवे तो वह उनके आगमन पर वह पूर्ण शृगार करेगी। इस वर्णन मे कवि ने विभिन्न अगो मे पहिने जाने वाले आभूषणो का अच्छा वर्णन किया है।

३ सूखडी

यह ३७ पदो की लघु रचना है, जिसमे विविध व्यजनो का उल्लेख किया किया गया है कवि को पाकशास्त्र का अच्छा ज्ञान था। "सूखडी" स तत्कालीन प्रचलित मिठाइयो एव नमकीन खाद्य सामग्री का अच्छी तरह परिचय मिलता है। शान्तिनाथ के जन्मोत्सव पर कितने प्रकार की मिठाइया आदि बनाई गई थी—इसी प्रसग को बतलाने के लिए इन व्यजनो का नामोल्लेख किया गया है। एक वर्णन देखिये—

> जलेबी खाजला पूरी, पतासा फीणी सजूरी।
> दहीपरा फीणी माहि, साकर भरी ।।६।
> \+ \+ \+
> सकरपारा सुहाली, तल पयडी सावली।
> थापडारयू धीगु घीय, आनू जीवली ।।५।।
> मरकीने चादखाणि, दोठ ने दही बडा सोनी।
> बाबर घेवर घीसा, अनेक वानी ।।६।।

4 आदीश्वरणी विनति

इसमे आदिनाथ भगवान का स्तवन तथा पाचो कल्याणको का वर्णन किया गया है। रचना सामान्य है।

इसमे आदिनाथ के पन्चकल्याणको का वर्णन किया गया है पद्य सख्या २१ है । रचना सामान्य है ।

आदीश्वरनु मन्त्र कल्याणक गीत

इस प्रकार भट्टारक अभयचन्द्र ने अपनी लघु रचनाओ के माध्यम से जो महती सेवा की थी वह सदैव अभिनन्दनीय रहेगी ।

५० भट्टारक शुभचन्द्र

भट्टारक अभयचन्द्र के पश्चात शुभचन्द्र भट्टारक गद्दी पर बैठे । सवत् १७२१ की ज्येष्ठ बुदि प्रतिपदा के दिन पोरबन्दर मे एक विशेष उत्सव किया गया और उसमे शुभचन्द्र को पूर्ण विधि के साथ भट्टारक गद्दी पर अभिषिक्त किया गया ।[1] प श्रीपाल ने शुभचन्द्र हमची लिखी है उसमे शुभचद्र अभिषिक्त के भट्टारक पद पर अभिषेक होने से पूर्व तक का पूरा वृतान्त दिया हुआ है ।

शुभचन्द्र का जन्म गुजरात प्रदेश के जलसेन नगर मे हुआ जहा गढ एव मन्दिर थे तथा सुन्दर सुन्दर भवन थे । वही हूबड वश के शिरोमणि हीरा श्रावक थे । माणिकदे उनकी पत्नी का नाम था । बचपन स ही बालक व्युत्पन्नमति थे उसका विद्याध्ययन की ओर विशेष ध्यान था इसलिए व्याकरण, तर्कशास्त्र, पुराण एव छन्द शास्त्र का गहरा अध्ययन किया अष्टसहस्री जैसे कठिन ग्रन्थो को पढा । प्रारम्भ मे उसका नाम नवलराम था लेकिन ब्रह्मचर्यव्रत धारण करने पर उसका नाम सहेजसागर रखा गया और भट्टारक बनने पर वे शुभचन्द्र नाम से प्रसिद्ध हुये ।[2]

शुभचन्द्र शरीर से अतीव सुन्दर थ । श्रीपाल कवि ने उनकी सुन्दरता का निम्न प्रकार वर्णन किया है—

> नाशा शुक चची सम सुन्दर, अधर प्रवाली वृन्द ।
> रक्तवण द्विज पक्ति विराजित, निरखता आनन्द रे ।।९।।

1　सखी सवत सत्तर एक बीसे वली जेष्ठ बदी प्रतिपद दीवसे
　　श्री पोरबन्दर मोहोछव हवा, मल्या चतुर्विध सघ ते नवा नवा

2　हूबड वश हिरणो हीरा' सम सोहे मन गो धन्य
　　बस मन रजक माणिकदे शुभ जायो सुन्दर तन्न रे
　　बालपणे बुधिगत विलदाता विद्या चउद निधान ।
　　जैनागम जिन भक्ति करें एह जिन सास्त्र बहुतान रे ।।५।।

रूपे मदन समान मनोहर, बुद्धे अभय कुमार ।
सीले सुदर्शन समान सोहे गोतम सम अवतार रे ॥१०॥

एक दिन भट्टारक अभयचन्द्र ने अपनी प्रवचन सभा मे हर्षित होकर कहा कि सहेजसागर के समान कोई मुनि नही है। वही पट्टस्थ होने योग्य है । वह आगमो का सार भी जानता है ।

इसके पश्चात सघपति प्रेमजी, हीरजी, मल्लजी, नेमीदास हूबड वश शिरोमणी बाघजी, सघजी, रामजीनन्दन, गागजी जीवधर वर्धमान आदि सभी श्रीपुर से आये और चतुर्विध सघ के समक्ष यह महोत्सव का आयोजन किया। सघ सहित श्री जगजीवन राणा भी पट महोत्सव मे आये तथा दक्षिण से धर्मभूषण भी ससघ सम्मिलित हुये। शुभ मुहूर्त देखकर जिन पूजा की गई । शान्ति होम विधान सम्पन्न हुआ। जलयात्रा एव जीणमवार हुई और जेठ सुदी प्रतिपदा के दिन जय जयकार शब्दो के बीच शुभचन्द्र को पट्टस्थ विराजमान कर दिया । सूरि मन्त्र धर्मभूषण ने दिया ।

---

1 एकदा अतिआनन्द बोले, अभयचन्द्र जयकार ।
सुणयो सहु सज्जन मन रगे, पाट तणो सुविचार रे ॥१॥
सहेज सिधु सम नहीं को यतिवर, जगमा जाणो सार ।
पाट योग छे सुन्दर एहने, आपयो गच्छ नो भार रे ॥२॥
सघपति प्रेमजी हीरजी रे, हूहेर वश शृंगार ।
एकलमल्ल आवई अति उदयो, रत्नजी गुण भण्डार रे ॥३॥
नेमीदास निरुपम नर सोहे अखई अवाई वीर ।
हूम्बड वश शृंगार शिरोमणि बाघजी कघ धीर रे ॥४॥
रामजीनन्दन गांगजी रे, जीवंधर वर्धमान ।
इत्यादिक सघपति ए साते, आवा श्रीपुर गांम रे ॥५॥
पाट महोछव मांड्यो रगे' सघ चतुर्विध लाव्या ।
सघपति श्री जगजीवन राणो सघ सहित ते आव्या ॥६॥
दक्षण देश नो गछपति रे, धर्मभूषण तेडाका ।
अति आडबर साथे साहमो करीने तव धराव्या रे ॥७॥
शुभ महूरत जोई जिन पूजा शांतिक होम विधान ।
जमणवार पुगते जल जात्रा आपे श्रीफल पान रे ॥८॥

शुभचन्द्र हमची

पट्टस्थ होने के पश्चात इन्होने अपने जीवन का लक्ष्य निर्धारित किया और अपने आत्म उद्धार के साथ-साथ समाज के अज्ञानान्धकार को दूर करने का बीडा उठाया और उन्हे अपने मिशन मे पर्याप्त सफलता भी मिली। उन्होने अनेक स्थानों पर विहार किया और जन जन के श्रद्धा एव भक्ति के पात्र बने। वे तीर्थों के वन्दना का जाते तो अपने साथ पूरे सघ को ले चलते। एक बार वे सघ के साथ मागी तुगीगिरी की यात्रा पर गए थे और वहा आनन्द के साथ पूजा विधान सम्पन्न किये थे।

> मागीतु गी गई जिन भेरियाए, पूजा कीधा पवित्र निज गात्र।
> सातिक त्रीस चोबिसि पूजा, सोभताए, जल यात्रा करी पोषे पात्र ॥८॥

जब वे नगर मे विहार करते तो उनके भक्तगण उनका गुणानुवाद करते, प्रशसा करते और स्तवन मे पदो की रचना करते। इस प्रसग पर निर्मित एक पद देखिये—

> वादो श्री शुभचन्द्र सुखकारी
> अभयचन्द्र सूरि पाटे पट्टोधर, अकलक समो अवतारी।
> साह मनजी कुल मडल सु दर, ज्ञानकला गुणधारि॥
> माणकदे धन्य तात मनोहर, अध्यम तत्व विचारि ॥२॥
> मूलमघ सरहस विचक्षण वादी विबुध मदहारी।
> पच महाव्रत शीलशिरोमणि, सुद्धाचार अभरी ॥वादो॥
> सोलकला शशि वदन विराजित, मनमथ मान उतारी
> वाणी विनाद मिथ्या त भागे अवनी गयो उद्धारि
> मही मडल महिमा छे मोये, कीरति जग विस्तारि
> अमल विमल वाणी मन वाले, गुण गाउ नर नारि ॥वादो॥५॥

"शुभचन्द्र" के शिष्यो मे प श्रीपाल, गणेश, विद्यासागर, जयसागर, आनन्दसागर आदि के नाम विशेषत उल्लेखनीय है। "श्रीपाल' ने तो शुभचन्द्र के कितने ही पदो मे प्रशसात्मक गीत लिखे है- जो साहित्यिक एव ऐतिहासिक दोनो प्रकार के हैं।

भ शुभचन्द्र साहित्य निर्माण मे अत्यधिक रुचि रखते थे। यद्यपि उनकी कोई बडी रचना उपलब्ध नही हो सकी है, लेकिन जो पद साहित्य के रूप मे इनकी कृतिया मिली हैं, वे इनकी साहित्य रसिकता की ओर प्रकाश डालने वाली है। अब तक इनके निम्न पद प्राप्त हुए है—

१ पेखो सखी चन्द्रसम मुख चन्द्र
२. ग्रादि पुरुष भजो ग्रादि जिनेन्दा
३. कौन सखी सुध ल्यावे श्याम की
४ जपो जिन पार्श्वनाथ भवतार
५ पावन मति मात पद्मावति पेखता
६ प्रात समये शुभ ध्यान धरीजे
७ वासुपूज्य जिन वनिती-सुणो वासु पूज्य मेरी विनती
८ श्री सारदा स्वामिनी प्रणमि पाय, स्तबू वीर जिनेश्वर विबुधराय ।
९ ग्रज्झारा पार्श्वनाथनी वीनती

उक्त पदो एव विनतियो के अतिरिक्त ग्रभी भ शुभचैन्द्र की और भी रचनाए होगी, जो किसी गुटके के पृष्ठो पर अथवा किसी शास्त्र भण्डार में स्वतन्त्र ग्रथ के रूप मे ग्रज्ञातावस्था म पडी हुई अपने उद्धार की बाट जोह रही होगी ।

पदो मे कवि ने उत्तम भावो का रखने का प्रयास किया है ऐसा मालूम होता है कि शुभचन्द्र अपने पूर्ववर्ती कवियो क समान "नेमि-राजुल" की जीवन-घटनाम्रो मे अत्यधिक प्रभावित थे इसलिए एक पद मे उन्होने "कौन सखी सुध ल्यावे श्याम की" मार्मिक भाव भरा । इस पद से स्पष्ट है कि कवि के जीवन पर मीरा एव सूरदास के पदो का प्रभाव भी पडा है—

कौन सखी सुध ल्यावे श्याम की ।
मधुरी धुनी मुखचद विराजित, राजमति गुण गावे ।।श्याम।।१।।
अग विभूषण मनीमय मेरे, मनोहर माननी पावे ।
करो कछु तन्त मन्त मेरी सजनी, मोहि प्राणनाथ मिलावे ।।श्याम।।२।।
गज गमनी गुण मदिर स्यामा, मनमथ मान सतावे ।
कहा अवगुन अब दीन दयाल छोरि मुगति मन भावे ।
सब सखी मिली मनमोहन के ढिग, जाई कथा जु सुनावे ।
सुनो प्रभु श्रीशुभचन्द्र के साहिब, कामिनी कुल क्यो लजावे ।।४।।

कवि ने अपने प्राय सभी पद भक्ति रस प्रदान लिखे है । उनमे विभिन्न तीर्थकरो का स्तवन किया गया है । आदिनाथ स्तवन का एक पद है देखिये—

आदि पुरुष भजो आदि जिनेन्दा ।टेक।।
सकल सुरासुर शेष सु व्यतर, नर खग दिनपति सेवित चदा ।।१।।

जुग आदि जिनपति भये पावन, पतित उदाहरण नाभि के नदा ।
दीन दयाल कृपा निधि सागर, पार करो अघ-तिमिर जिनेंदा ॥२॥

केवल ग्यान थे सब कछु जानत, काह कहू प्रभु मो मति मदा ।
देखत दिन-दिन चरण सरण ते, विनती करत मो सूरि शुभचदा ॥३॥

५१ भट्टारक रत्नचन्द्र

ये भट्टारक शुभचन्द्र के शिष्य थे और उनके स्वर्गवास के पश्चात् भट्टारक गादी पर बैठे थे । एक प्रशस्ति के अनुसार ये सवत् १७४८ कार्तिक शुक्ला पचमी को भट्टारक पद पर आसीन थे । प० श्रीपाल ने एक प्रभाती गीत मे भ रत्नचन्द्र के सम्बन्ध मे निम्नगीत लिखा है जिसके अनुसार रत्नचन्द्र अत्यधिक सुन्दर एव अ ग प्रत्यगो से मनोहारी लगते थे । वे विद्वान थे । सिद्धान्त ग्रन्थों के पाठी थे तथा अष्टमहस्री जैसे कष्ट साध्य ग्रन्थो के पारगामी अध्येता थे । पूरा प्रभाति गीत निम्न प्रकार है —

प्रात समे समरो सुखदाय
वादीये रतनचन्द्र सूरी राय ।
रूप देखी गयो इन्द्र आवास
गमने गज हस रहृया वनवास ।
बदन देखि शशधर हवो खीण
लोचने बाजीया खज मृग मीन ।
जेहना वचन तणे भडकाये
सकल वादीश्वर निज वश थाये ।
शील असिवर करि काम विहड
क्रोध माया मद लोभ ने छडे
पच मिथ्यात तणा मद खाडे
प्रबल पचेन्द्री महा रिपु डडे
नव नय तत्व सिद्धन्ति प्रकासे
भलीयरे श्री जिन आगम भास
अष्टमहस्री आदि ग्रन्थ अनेक
चार जिन वेद जह सु विवक
श्री शुभचन्द्र पटोद्धर राय
गछपति रत्नचन्द्र नमु पाय
मण्डण मूलसघे गुरु एह
विबुध श्रीपाल कहे गुणगेह

भट्टारक रत्नचन्द्र की साहित्य रचना मे विशेष रुचि थी। लेकिन अपने पूर्व गुरुओं के समान वे भी छोटी-छोटी रचनाओ के निर्माण मे रुचि रखते थे। अब तक उनकी निम्न रचनाएं मिल चुकी है—

१ वृषभ गीत अपर नाम आदिनाथ गीत
२ प्रभाति
३ गीत आदिनाथ
४ बलिभद्रनु गीत
५ चिन्तामणि गीत
६ बावनगज गीत
७ गीत

(१) आदिनाथ के स्तवन मे लिखा हुआ यह छो.ा सा पद है किन्तु भाव भाषा एव शैली की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण है। पूरा पद निम्न प्रकार है—

वृषभ जिन सेवो सुखकार।
परम निरजन भवभय भजन समारार्णवतार ।।वृषभ।। टेक
नाभिराय कुलमडन जिनवर जनम्या जगदाधार।
मन मोहन मरुदेवी नन्दन, सकल कला गुणधार ।।वृषभ।।
कनक कातिसम देह मनोहर, पांचसे धनुष उदार।
उज्वल रत्नचन्द्र सम कीरति विस्तरी भुवन मझार ।।वृषभ।।

(२) प्रभाति मे भी भगवान आदिनाथ की ही स्तुति की गयी है। प्रभाति मे ९ अन्तरे हैं तथा वह "सुप्रात समरो जिनराज, सकल मन वाछित सपजे काज" से प्रारम्भ की गयी है।

(३) राग असावरी मे निबद्ध आदिनाथ गीत भी भगवान आदिनाथ के स्तवन के रूप मे लिखा गया है। लेकिन भाव भाषा एव शैली की दृष्टि से जैसा उक्त पद है वैसा यह गीत नही लिखा जा सका। इसकी भाषा भी गुजराती प्रभावित है। गीत वर्णनात्मक है काव्यात्मक नही। अन्त मे कवि ने गीत की समाप्ति निम्न प्रकार की है—

जय जय श्री जिननाथ निरजन वाछित पूरे आस रे।
श्री शुभचन्द्र पटोद्धर व्रज दीनकर, रत्नचन्द्र कहे भासरे ।।९।।

(4) बलिभद्रनु गीत—श्री कृष्ण के बड़े भाई बलभद्र ने तु गी पहाड से

निर्वाण प्राप्त किया था। इसलिये यह पहाड जैनो के अनुसार सिद्ध क्षेत्र की कोटि मे आता है। इस क्षेत्र की भट्टारक रत्नचन्द्र ने सघ सहित सवत् १७४५ मे यात्रा की थी। उसी समय यह गीत लिखागया था। इसमे ११ पद्य हैं। काव्य एव भाषा की दृष्टि से गीत सामान्य है लेकिन वह ऐतिहासिक बन गया हैं। गीत के ऐतिहासिक स्थल वाले पद्य निम्न प्रकार हैं—

सवत सत्तर परतालीसे काई सघपनि अबई सार रे।
सघ सहित जात्रा करी, मुख बोले जय जयकार रे।
श्री मूलसघे सोहाकरु काई गछपति गुण भण्डार रे।
रत्नचन्द्र सुरिवर कहो, काई गावो नर ने न र रे ॥१॥

(5) "चिन्तामणी पारसनाथनु गीत" भी ऐतिहासिक बन गया है। अकलेश्वर नगर मे चिन्तामणि पार्श्वनाथ का मन्दिर था। भट्टारक रत्नचन्द्र उस मन्दिर के बडे प्रशसक थे। वहा बडे ठाट से अष्ट द्रव्य से भगवान की पूजा होती थी। पूरा गीत निम्न प्रकार है—

श्री चितामणि पूजो रे पास, वाछित पोहोचरो मनणी आस।
आवो रे भवियण सहु मली सगे, वसुविध पूज्य रे करो मन रगे।
देस मनोहर कासी रे, सोहे, नगर वनारसी जय मन मोहे ॥आवो रे॥
विश्वसेन राजा रे राज करत वह्मादेवी राणी सु प्रेम धरत।
तस कुल अबर अभीनवोचन्द, उदया अनोपम पास जिनेद।
नीलवरण नव हस्त उत्तग, निरुपम काम कलाधर चग।
सुरनर खग फणी सेवित पाय, सत मवच्छर पूरण आय।
एकदा अस्थीर ससार जाणि चारित्र लीधु रे सवेग आणी।
तप बले उपनु केवल ज्ञान, लोकालोक प्रकासी रे भान।
सेव करम सहु दूर करी ने, मुगति बधुवरी प्रेम धरी ने।
दर्शन ज्ञान रे वीर्य अनत, पाम्या सौख्य अनतारेनत।
वाछित पूरे रे पचम काले, सकट को विघन सहु टाले।
श्री अकलेश्वर नगर निवास, सघ सकल तणी पूरे रे आस।
मुनी शुभचन्द चरण ची आणी, सूरि रतनचन्द्र वदे अमृत वाणी।
आवो रे भवियण सहु मली सघे, वसुविध पूजा रे करो मन सगे।

(६) बावनगजागीत—भट्टारक रत्नचन्द्र ने सवत १६५६ मे बावनगज सिद्ध क्षेत्र की सघ सहित यात्रा की थी। इसको चूलगिरि भी कहते है। यहा से पाँच

करोड मुनियो ने निर्वाण प्राप्त किया। सघ मे कितने ही श्रावक थे जिनमे सघवी अखई, अम्बाई, सघवी शाति, माणकजी, अमीचन्द, हेमचन्द, प्रेमचन्द, रामाबाई आदि के नाम उल्लेखनीय है। जब सघ राजनगर आया तो राणा मोहनसिंह ने सबका स्वागत किया। बावनगजा सिद्ध क्षेत्र पर जब सघ पहुचा तो सघ के साथ भट्टारक रत्नचन्द्र भी चूलगिरि पर चढे। वहा सानन्द भगवान की पूजा की तथा भट्टारकजी ने सघपति के तिलक किया। उस दिन पौष सुदी ३ सोमवार था तथा सवत १७५७ था। गीत ऐतिहासिक है इसलिये पूरा गीत यहाँ दिया जा रहा है—

श्री जिन चरण कमल नमु, सरस्वति प्रणमु पावरे।
चूलगिरि गुन वर्णउ, श्री शुभचन्द्र पसावरे ॥१॥
पवित्र चूल गिरि भेटीये
मिलियो सघ साहामले पुजवा बावनगज पायरे।
पाच कोड मुनि सिद्ध वा, जेणे स्तवा सुर रायरे ॥२॥
कुवरजी कुलमडन हवा, सघीय अखइ अम्बाई गुणवाण रे।
तेह कुल अम्बर चाँदलो, मघ विशति धोलो भाई जाणरे ॥३॥
सघवी अम्बई सुत अमरसी, माणकजी अमीचन्द जोडरे।
तेह तणा कुवर कोडामणा, हेमचन्द प्रेमचन्द ते सघनो कोडरे ॥४॥
रामाबाई बहनी इम कहे, भाई सर्घातलक जस लीजेरे।
रतनचन्द्र गुरपद नमी, सघनां काम ते उत्तम कीजे रे ॥५॥
एने वचने सज्जन हरखिया, मुरत्त लिधो गुरु पासेरे।
मार्गमीर सुदी पचमी, गुर श्रीसघ पूरे आसरे ॥६॥
सनय सनय साघ चालिये, कियो मेदा ने मीलान रे।
राज पुरिनोकडोरार्जायो राणो मोहणसिघ चतुर सुजान रे ॥७॥
सघ आयो ते जाणि करि, राये सुभट भेज्यो ते निवार रे।
जात्रा करी सघ आणीयो, राजपूर नगर मझार रे ॥८॥
सघवी आवि राणाजो ने मील्या, राणा जीये द्विघा घणा मान रे।
सघ भले उहा आवियो, आपे फोफल पान रे ॥९॥
जीवनदास ने राय इम कहे, तहमे जा करावो सार रे।
राय आज्ञा मस्तग धरी सघने लेइ चाल्यो ते निवार रे ॥१०॥
बडवानि आविडे रादिधा, मिलयो श्रीसंघ सार रे।
चूलगिरि डूगर चढ्या, त्यारे मुखे बोले जयकार रे ॥११॥
पूज्य तिहा बहुविध हवि, हवा सुखकार रे।
सघ पूज हवि सोभति, जाचक बोले मगलाचार रे ॥१२॥

चडता चडता डुगरे, आनन्द हरख अपार रे।
बावन गज जब निरखीये, त्यारे मुखे बोले जयकार रे ॥१३।
सवत सतर सतवनो, पोस सुदि तीज सोमवार रे।
सिद्ध क्षेत्र अति सोभते, ते निमहि मानो नहि पार रे ॥१४॥
श्री शुभचन्द्र पट्टे हवो, पर वादि मद भाजे रे।
रतनचन्द्र सुरिवर कहे, भव्य जीव मन रज रे ॥१५॥

॥ इति गीत ॥

इस प्रकार भट्टारक रतनचन्द्र ने हिन्दी साहित्य के विकास मे जो महत्वपूर्ण योगदान दिया वह इतिहास मे सदा स्मरणीय रहेगा।

५२ **श्रीपाल**

सवत 1748 की एक प्रशस्ति मे प० श्रीपाल के परिवार का निम्न प्रकार परिचय दिया गया है —

पण्डित बणारग भार्या वीरबाई
|
पण्डित जीवराज भार्या जीवादे
|
पण्डित श्रीपाल भार्या महजलदे
|
पण्डित अखाई प० अमरसी—प० अनतदास, प० बल्लभदास-विमलदास
पुत्री-अमरबाई, प्रेमबाई, बेलबाई

उक्त प्रशस्ति के अनुसार प० श्रीपाल के पितामह का नाम बणारग एव पिता का नाम जीवराज था। साथ ही उसकी मातामह वीरबाई एव माता जीआदे थी। श्रीपाल की पत्नी का नाम महजलदे था। उसके पाच लडके अखाई, अमरसी, अनतदास, बल्लभदास एव विमलदास एव तीन पुत्रिया अमरबाई, प्रेमाबाई एव बेलबाई थी। श्रीपाल का पूरा वश ही पण्डित था। वे हुंपतट के रहने वाले थे। तथा सघपुरा जाति के श्रावक थे। श्रीपाल एव उसके पूर्वज भट्टारकीय परम्परा के पण्डित थे तथा भट्टारक रत्नकीर्ति भट्टारक कुमुदचन्द्र, अभयचन्द्र, शुभचन्द्र एव भट्टारक रत्नचन्द्र परम्परा मे उनकी गहरी आस्था थी तथा अधिकाश समय उनके सघ मे रह तेआये थे।

श्रीपाल भट्टारक परम्परा के कट्टर समर्थक थे। उन्होने भट्टारक रत्नकीर्ति, की प्रशसा मे एक गीत, भटटारक अभयचन्द्र की प्रशसा मे दो गीत, भ शुभचन्द्र की प्रशसा मे पाच गीत तथा भ रत्नचन्द्र की प्रशसा मे तीन गीत लिखे हैं। इन गीतों में भट्टारको के लावण्य मय शरीर की तो प्रशसा की ही है साथ में उनके अध्ययन की, प्रभाव की एव महानता की भी प्रशसा की गयी है। इन गीतो मे भट्टारको के माता पिता का नाम भी मिलता है। इन्होने प्रभातिया लिखी है जिनमें प्रात उठकर भट्टारको के दर्शन करने तथा उनकी गुणानुवाद करने, नगर मे विहार करने पर उनका जोरदार स्वागत करने की प्रेरणा दी गयी है। इन गीतो मे भटटारको का ऐतिहासिक वर्णन तो मिलता ही है साथ मे उनकी लोकप्रियता का भी पता चलता है।

प० श्रीपाल के अब तक ३० गीत मिले हैं जो उनके साहित्य प्रेम के द्योतक हैं। उनकी अब तक उपलब्ध रचनायें निम्न प्रकार है—

१ उपासकाध्ययन
२ शातिनाथनु भवान्तर गीत
३ रत्नकीर्ति गीत (मराठी)
४ गीत
५ बलिभद्र स्वामिना चन्द्रावली
६ अभयचन्द्र गीत
७ रतनचन्द्र गीत
८ रतनचन्द्र गीत
९ रतनचन्द्र गीत
१० शुभचन्द्र गीत
११ शुभचन्द्र गीत
१२ शुभचन्द्र गीत
१३ प्रभाति
१४ प्रभाति
१५ प्रभाति (अभयचन्द्र)
१६ प्रभाति (शुभचन्द्र)
१७ प्रभाति
१८ सबवई हीरजी गीत
१९ गीत

२० बाहुबलीनी बिनती
२१. नेमिनाथनी गीत
२२. बीस बिरहमान बिनती
२३ घृत कल्लोनी बिनती
२४ आदिनाथनी धमाल
२५. भरतेश्वरनुगीत
२६ गीत
२७ गीत
२८ भरतेश्वरनु गीत
२९ शुभचन्द्र हमची
३० गुर्वावली

उक्त रचनाओ मे अधिकाश रचनाये लघु रचनाये है जिनसे कवि की काव्य रचना मे गहरी रुचि होने का परिचय मिलता है साथ ही मे उसके भट्टारको का परम भक्त होने का संकेत भी मिलता है। कवि की सबसे बडी रचना उपासकाध्यन है। इसे उसने संवत १७४२ मे सूरतनगर मे समाप्त की थी। इसमे श्रावकाचार का वर्णन मिलता है। इसकी रचना संघपति रामाजी के पठनार्थ की गयी थी जैसा कि निम्न प्रशस्ति से ज्ञात होता है—

इति श्री उपासकाध्ययनाख्याने पं० श्री श्रीपाल विरचिते संघपति रामाजी नामांकिते श्री श्रावकाचाराभिधानो प्रबन्ध समाप्त।

पण्डित श्रीपाल के समय सूरतनगर जैन धर्म का प्रमुख केन्द्र था। वहा पर वासुपूज्य स्वामी का मन्दिर था जहा पर बैठकर कवि ने उपासकाध्ययन का लेखन समाप्त किया था।

> सुन्दर सूरति सहेर मझार, सोभित श्री जिन भुवन मझार।
> शिखर-बद्ध दीठइ मन मोहई कनक कलस ध्वज तोरण सोहे।
> वासपूज्य तणु एक विसाल, त्या, रचना रची रग रसाल।

श्रावकाचार मे श्रावक धर्म का वर्णन किया गया है।

श्रीपाल ने भट्टारक रत्नकीर्ति, अभयचन्द्र, शुभचन्द्र एव रत्नचन्द्र की प्रशसा के रूप मे जो पद लिखे हैं वे अत्यधिक महत्वपूर्ण है। इन पदो से भट्टारको

का परिचय के साथ ही कवि की काव्य कुशलता का भी परिचय मिलता है। भट्टारक अभयचन्द्र के सम्बन्ध मे लिखा हुआ एक पद देखिये—

चन्द्रवदनी मृग लोचनी नारि
अभयचन्द्र गच्छ नायक वादो सकलसघ जयकारि।
मदन महामद मोडे ऐ मुनिवर, गोयम सम गुणधारी।
क्षर वम्नवि गम्भीर विचक्षण, गुरु गो गुण भण्डारी ॥चन्द्र॥
निखिल कलाविधि विमल विद्यानिधि विकट वादि हठ हारी।
रम्य रूप रंजित नर नायक, सज्जन जन सुखकारी ॥चन्द्र॥
सरसति गच्छ श्रृ गार शिरोमणी, मूलसघ मनोहारी।
कुमुदचन्द्र पद कमल दिवाकर, श्रीपाल सुख वनीहारी ॥चन्द्र॥

इसी तरह भट्टारक रत्नचन्द्र पर जो पद लिखा है वह भी अत्यधिक महत्व-पूर्ण है।

आवो रे सखि चन्द्रवदन गुणमाल।
सुरिवर रत्नचन्द्र ने बधावो मोतीयडे भरि थाल ॥आवो॥
शील आभूषण अ गे सोहे, सजय त्रिदश प्रकार।
अष्टविंशति मूल गुणोत्तम, धर्म सदा वश धार ॥आवो॥
परिसा सहे निज अ गे अ गे, करे परिग्रह त्याग।
श्रीपाल कहे एह पचम काले, प्रगट करे शिव प्राण ॥आवो॥

सवत् १७३४ की ज्येष्ठ शुक्ला त्रयोदशी के दिन सूरतनगर मे शाति विधान किया गया। सघ को भोज दिया गया तथा भट्टारक रत्नचन्द्र ने तिलक किया गया। जिन यन्त्र की प्रक्षाल की गयी उस समय पण्डित श्रीपाल वही थे।

सवत् १७२१ मे पोरबन्दर मे महोत्सव किया गया। चारो प्रकार के सघ एकत्रित हुए। भट्टारक अभयचन्द्र का पट्ट स्थापित किया गया। उस समय शुभ-चन्द्र मुनि अवस्था मे थे जो गौतम के समान लगते थे।[1]

श्रीपाल ने भट्टारक शुभचन्द्र को हमची लिखी। इसमे उसने भट्टारक

---

१ सखो सवत सत्तर एक वीसे वली जेष्ट वदी प्रतिपद दीवसे।
श्री पोबननयर मोहाछव हवा मल्या चतुर्विध सघ हो नवा नवा।

शुभचन्द्र का पूरा इतिवृत्त लिख दिया। सवत् १७२१ मे शुभचन्द्र को भट्टारक पद पर अभिषिक्त किया गया था। शुभचन्द्र की सुन्दरता, महोत्सव में विभिन्न श्रावको का योगदान, भट्टारक पट्ट पर शुभचन्द्र का अभिषेक, इसी उपलक्ष में सगीत एव नृत्य का आयोजन आदि सभी का इसमें वर्णन कर दिया है। इसमे २९ पद्य है। अन्तिम दो पद्य निम्न प्रकार है—

दिवस माहि जिम रवि दीपतो, गिरि मा मेरु कहत।
तिम श्री अभयचन्द्र ने पाटि, श्री शुभचन्द्र सोहन रे ॥ २८ ॥

श्री शुभचन्द्र तरणी ऐ हमची जो गाये जिन धाम।
श्रीपाल विबुध वदे ए वाणी, ते मन वछित गामे रे ॥ २९ ॥

श्रीपाल ने भट्टारक अभयचन्द्र के गीत गाये, फिर भट्टारक शुभचन्द्र की प्रशसा मे गीत लिखे और ग्रन्थ मे रतनचन्द्र के भट्टारक बनने पर उसका गुणानुवाद किया। इसमे यह जान पडता है कि ये भटटारकीय पडित थे। सघ के साथ रहना तथा समय समय भट्टारको का गुणानुवाद करना, सघ का इतिहास लिखना' समाज को सघ के सम्बन्ध मे अवगत कराते रहना उनके प्रमुख कार्य थे। वे पडित थे और वे भी पुश्तैनी पण्डित।

सवत् १७२८ की एक प्रशस्ति मिलती है जिसमे प० श्रीपाल के पढने के लिये सूरत मे ग्रन्थो की लिपि की गयी थी। उसमे भट्टारक शुभचन्द्र का उल्लेख किया गया है जिनके उपदेश मे ग्रन्थ की प्रतिलिपि की गयी थी। प्रशस्ति निम्न प्रकार है—

सवत सतर अठाइस १७२८ वर्षे मार्गशीरमासे शुक्लपक्षे पचमी दिने गुरुवारे श्रीसूर्यपूरे श्रीवासुपूज्य चैत्यालये श्री मूलसघ सरस्वतीगच्छे बलात्कारगणे श्री कुन्दकुन्दान्वये भ० रत्नकीर्तिदेवा तत्पट्टे भ० कुमुदचन्द्रदेवा तत्पट्टे भ० श्री अभयचन्द्र देवास्तत्पट्टे भ० श्री शुभचन्द्रोपदेशात सघपुराजाते पडित जीवराज भार्याजीवादे तयो सुत पडित श्रीपाल पठनार्थं।

गुर्वावली मे भट्टारक विद्यानन्द की परम्परा मे होने वाले भट्टारको का गुणानुवाद है। गुर्वावली ऐतिहासिक बन गयी है। यदि सवत लिखने की उस समय परम्परा होती तो ऐसे गीत भी निश्चित ही इतिहास की सामग्री बन जाते फिर भी इस प्रकार के गीत साहित्य की अमूल्य धरोहर है। इसमे ११ पद्य हैं। पूरी गुर्वावली निम्न प्रकार है—

वदो गुरु विद्यानन्द सूरि, जेह नामे दुख जाये दूरि।
जनम जनम ना पाप पलाय, जिम रुडों मन वाछित थाय ।। १ ।।
मल्लि भूषण छे मोटा मति, जेहने जग जाणे शुभमती।
वचन अनुपम अमिय समान, ग्यासदीन रज्यो सुल्तान ।। २ ।।
लक्ष्मीचन्द्र नमो नित पाय, जेहनी सेव करे नर राय।
गछनायक गुणवो भन्डार, भव सागर उतारो पार ।। ३ ।।
अभयचन्द्र सेवो सहु सत, जेहना गुणनो नवि अत।
पाले सयम साधु सुजाण, जेहनी महीपति मनि आण ।। ४ ।।
अभयनन्दि यति कोमलकाय, जेहनां वचन भला सुखदाय।
साधु शिरोमणि कहीये एह, भवियण नाम जपा सहु तेह ।। ५ ।।
रतनकीरति रुपे अति भलो, चन्द्रकिरण सम जस उजैलो।
हूबड वश तणो सिणगार, जेहना गुणनो नवि पार ।। ६ ।।
कुमदचन्द्र गुरुवा चादलो, रत्नकीरति पाटे गोर भलो।
मोढवश उदयाचल रवि, जेहना वचन बखाणे कवि ।। ७ ।।
अभयचन्द्र सेवो शुभमति, जेहना चरण नमे नरपती।
वादि शिरोमणि कहीये एह, गुणसागर विद्यानो गेह ।। ८ ।।
अभयचन्द्र कुल अवर चन्द्र, उदयो पुन्य तरुवर कद।
दीठे भवियण मनि आणद, वादो सहे गुरु श्री शुभचन्द्र ।। ९ ।।
• सम रवि, जेहना बचन वखाने कवि।
वर जमवत, जेहना पद सेवे माहत ।। १० ।।
समरो ··· गुरु राय, समरता सुख सपति थाय।
रत्नशशि सेवो त्रन्य काल, प्रणमे जिन सवक श्री नान ।। ११ ।।

इति श्री गुर्वावली समाप्त।

बाहुबलीनी वीनती—इसमे ऋषभदेव के द्वितीय पुत्र बाहुबली की स्तुति की गई है। विनती १२ पद्यो मे पूण होती है। रचना सामान्य है। पूरी विनती निम्न प्रकार है—

श्री जिनवर वदन उपन्निमाय, पाता सुत्र सरस्वति प्रणमू पाय।
लहु वाछितार्थ विद्या विबुध, जिनवाणी अनोपम होय सुद्ध ।। १ ।।
भुजबलि गुण वर्णवू तुझ पसाय, जीम हेयडले हरष आण पाय।
वृषभ नृप सुन्दर तनुज एह, धनु पाचस पचीस उच देह ।। २ ।।

बलवत विलक्षण गुणनो गेह, पोयणपुरि नयरीये राजे एह।
सुखद सुभट नर नमित पाय, जण जीत्यो ॥ ३ ॥

मानभंग दीठो जब जष्ठ भ्रात, वैराग धरी वन माहे जात।
दीधे राजकाज महाबलने आज, प्रभु चाल्या आत्ममा करवा काज ॥ ४ ॥

कैलासगिरि आदिनाथ वास, जे चारित्र लीधू मन उल्लास।
तप तापे ज्वालि माया जाल, क्षमा खडगधरी हण्यो क्रोध काल ॥ ५ ॥

जीत्यो समकित बाणे लोभ वेरी, ज्ञानाकुंस मद गज राखो घेरी।
तप करता गत एक बर्ष सार, पछे कर्महणी वरी मुगति नार ॥ ६ ॥

जय बाहुबली देवाधिदेव, तुझ सुर नर किन्नर करेय सेव।
तू पचम काले प्रतक्ष वीर, तू सकल सूरमा छे प्रवीण ॥ ७ ॥

तोरे नामे भुजग पुष्प माल, तोरे नामे नडे न पीसाच काल।
तोरे नामे अर्णव जावे पार, तू मन गाम कोध पुरे ॥ ८ ॥

लेख बाघसिंह दूरे जाय, भुजबली तोरा नाम तणे पसाकय।
सुभ सायर तट मोहे नयर रम्य, रूडु नामे अनोपम दपण घन्य ॥ ९ ॥

ताहा सघपति हेमजी घमवत, वसे वणीक वश हु बड सतग।
भुजबली मोहे तल गेह चग, प्रभु पद पूजन्ता उपजे आणद ॥ १० ॥

श्री मूलसघ माहत सत, जयो रत्नकीर्ति गार विद्यावत।
तस पद उदयो विद्या समुद्र, वादीगज केसरी कुमुदचन्द्र ॥ ११ ॥
तस पाट पट्टोधर प्रगटो पूर, देखी वचन कल गया वादापुर।
सूरि अभयचन्द्र उदयो दिनेस, कर जोडी ने सेवक (श्रीपाल) नाम सीस ॥१२॥

घृत कल्लोजनो विनती—हसपुरी मे कमला नामक श्राविका थी। वह प्रतिदिन पचामृताभिषेक करती थी। एक रात्रि को उसको स्वप्न आया कि यदि आदिनाथ की प्रतिमा का घी से अभिषेक किया जावे तो मब सिद्धिया प्राप्त होगी। प्रात होने पर प्रतिमा को घी से अभिषेक किया गया। इसके पश्चात जिसने भी अभिषेक किया उसी के सब सिद्धिया प्राप्त हो गयी। इसी का श्रीपाल कवि ने अपनी इस विनती मे उल्लेख किया है। रचना सामान्य है। विनती मे 8 पद्य हैं।

श्रीपाल ने कुछ गीत भी लिखे हैं जिनमे आदिनाथ, भरतेश्वर नेमिनाथ आदि का स्तवन किया गया है। सबमे अधिक गीत आदिनाथ के हैं जिनसे पता चलता है कि वे भ० ऋषभदेव के अधिक उपासक थे। एक ऋषभदेवनुगीत मे "धूले वनयर

मझार" लिखा है जिससे पता चलता है कि वे सवत १७४७ में ऋषभदेव की यात्रा पर ससघ आये थे। सघ सूरत से चला था जिसके प्रमुख थे भ० रत्नचन्द्र। यह सघ असई एव अबाई ने चलाया था जो पहिले से ही सघपति कहलाते थे इसमे २० पद्य हैं।

इस प्रकार प० श्रीपाल की साहित्यिक सेवाए अत्यधिक उल्लेखनीय एव चिरस्मरणीय हैं।

५३ ब्रह्म जयसागर

ब्रह्म जयसागर भट्टारक रत्नकीर्ति के प्रमुख शिष्यो मे से थे। ये ब्रह्मचारी थे और जीवन पर्यन्त इसी पद पर रहते हुए अपना आत्म विकास करते रहे। जयसागर अपने गुरु के समान ही साहित्याराधना मे लगे रहते थे। उन्होने या तो भट्टारक रत्नकीर्ति के सम्बन्ध मे पद लिखे है या फिर छोटी छोटी अन्य कृतिया लिखी है। उनकी अब तक किसी बडी रचना की प्राप्ति नही हो सकी है।

जयसागर के जीवन के सम्बन्ध मे अभी कोई विशेष जानकारी प्राप्त नही हो सकी है लेकिन इन्होने अपनी सभी रचनाओ मे भट्टारक रत्नकीर्ति का ही उल्लेख किया है इसलिए ऐसा जान पडता है कि वे रत्नकीर्ति के समय मे ही स्वर्ग-वासी हो गये थे। रत्नकीर्ति सवत १६५६ तक भट्टारक पद पर रहे इसलिये ब्रह्म जयसागर को भी हम इससे आगे नही ले जा सकते। गुजरात का घोघा नगर इनकी साहित्यिक सेवाओ का केन्द्र था। वैसे ये भी भट्टारक रत्नकीर्ति के साथ रहने वाले पडित थे। जयसागर को अब तक निम्न रचनायें उपलब्ध हो चुकी हैं—

(१) चूनडी गीत
(२) मल्लिदासनी वेल
(३) सघ गीत
(४) विद्यानन्दिगीत
(५) साकटहर-पार्श्वनाथ जिनगीत
(६) क्षेत्रपाल गीत
(७) प्रभाति
(८) क्षेत्रपालगीत
(९) रत्नकीर्तिना पूजा गीत
(१०) नेमीश्वर गीत

(११) यशोधरगीत
(१२) पच कल्याणक गीत

उक्त रचनाओ का सामान्य परिचय निम्न प्रकार है—

(१) चूनड़ी गीत

इसका दूसरा नाम चारित्र चूनडी भी दिया हुआ है। राजमती नेमिनाथ से चारित्र चूनडी ओढने के लिये माग रही है। नेमि गिरनार के भूषण है। वहा सब जीवो का निवास है। चारो ओर सम्यकत्व रुपी हरियाली है। पीला रंग बहुत सुन्दर लगता है जिस पर देवता भी मोहित हो जाते है। मूल गुणो का स्वच्छ रग बन गया है। जिनवाणी का उसमे रस दिया है। तप से वह चूनडी सूखती है। उससे रग चटकता है छूटता नही। पाच महाव्रत कमलो के समान रग लाने वाले हैं। पाच समितियो से नही मिटने वाला नीला वर्ण चढ जाता है। चारौसी लाख जो उत्तर गुण है उसमे वह चुनरी सुन्दर लगती हैं। तीन गुप्तिया से वह चूनडी नीली, पीली से आप्लावित होकर मन को मोह रही है। इस प्रकार की चूनडी को ओढकर राजुल स्वर्ग चली गयी जहा वह स्वग के सुख भोग रही है। इस प्रकार की चारित्र चूनडी जो भी ओढेगा उसे मन वाछित सुखो की प्राप्ति होगी और अन्त मे ससार सागर को पार करेगा।

चूनडी मे १६ पद्य हैं। ब्रह्म जयसागर ने इसम रत्नकीर्ति का स्मरण किया है। उसका अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है--[1]

सूरि रत्नकीरति जयकारी, शुभ धर्म शशि गुण धारी।
नर नारी चुनडी गावे, ब्रह्म जयसागर कहे भावे ॥ १६ ॥

२. सघपति श्री मल्लिदासनी बेल

यह एक ऐतिहासिक कृति है जिसम मल्लिदास द्वारा आयोजित पचकल्याणक प्रतिष्ठा का वर्णन किया गया है। पचकल्याण प्रतिष्ठा बलसाड नगर मे हुई थी। वे हूबड वश के शिरोमणि थ। उनकी पत्नि का नाम राजबाई था। मल्लिदास का पुत्र मोहनदे का पति था। वह राजा श्रेणिक के समान जिन भक्ति मे ओतप्रोत था। प्रतिदिन अपार सम्पत्ति का दान करता रहता था। भट्टारक रत्नकीर्ति का वह भक्त था इसलिये उन्ही के उपदेश से उसने पचकल्याणक प्रतिष्ठा करायी।

---

१ चूनडी की पूरी प्रति आगे दी गयी है।

मगसिर शुक्ला ५ के दिन कु कुम पत्रिका लिखी गयी। विभिन्न नगरो मे स्वय पडितो को भेजा गया। रत्नकीर्ति अपने विशाल सघ के साथ वहा आये। प्रतिष्ठा की सभी विधिया-अकुरारोपण, वास्तुविधान, नदीपाठ, होम आदि सम्पन्न किये गये। जल-यात्रा की गयी जिसमे स्त्रिया मगलगीत गाती हुई चलने लगी। राजबाई के हर्ष का ठिकाना नही रहा। अ त मे कलशाभिषेक के पश्चात प्रतिष्ठा महोत्सव सम्पन्न हुआ। माघ शुक्ला ११ के दिन भ रत्नकीर्ति ने मल्लिदास के तिलक किया तथा पच महाव्रत अगीकार कराये गये। उसका नाम जिनचन्द्र रखा गया।

बेल लघु रचना अवश्य है फिर भी तत्कालीन धार्मिक समाज का अच्छा चित्र उपस्थित करता है। बेल का अन्तिम पाठ निम्न प्रकार है—[1]

> मन वाछति फल पाय, ज्यो ए सघपति श्री मल्लिदास।
> ब्रह्म जयसागर इम कहेए, मोभागेण पीहोता आ सके॥

३ सघगीत

भट्टारक रत्नकीर्ति ने अपने सघ के साथ शत्रु जय एव गिरिनार तीर्थों की यात्रा की थी। साघ मे मुनि आर्यिका श्रावक श्राविका चारो ही थे। रत्नकीर्ति सबके प्रमुख थे। तेजबाई साघ की सचालिका थी। मगसिर सुदी पचमी के दिन भाणेज गोपाल एव उसकी पत्नि वेजलदे को तिलक करके सम्मानित किया गया। रत्न-कीर्ति पालकी मे विराजते थे। गीत छोटा सा है लेकिन तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था पर अच्छा प्रकाश डालता है।

४ विद्यानन्दि पद

इस पद मे मूलसघ के भट्टारक देवन्द्र कीर्ति के शिष्य भट्टारक विद्यानन्दि का स्तवन किया गया है। विद्यानन्दि ने गुजरात मे धर्म की बडी प्रभावना की थी। वे भट्टारक होते हुए भी दिगम्बर रहते थे तथा कामदेव पर विजय प्राप्त की थी। शेरवाड वश में उत्पन्न हरिराज उनके पिता का नाम था तथा चापु माता का नाम था।[2]

५ प्रभाति

जयसागर ने अपनी प्रभाति गीत मे भट्टारक रत्नकीर्ति का गुणानुवाद

---

१ बेल की पूरी प्रति आगे दी गयी है

२ पूरा पद आगे दिया गया है।

किया है तथा जन जन को रत्नकीर्ति की पूजा, भक्ति करने की प्रेरणा दी गयी हैं। उस समय प्रात काल श्रावक गण भट्टारको के दर्शन करते थे तथा उपदेश सुनकर अपने जीवन को सौभाग्यशाली मानते थे। भट्टारको के शिष्य जनता में उनका प्रचार भी किया करते थे।

६ सकटहर पार्श्व जिनगीत

हासोट नगर मे पार्श्वनाथ स्वामी का मन्दिर था। उसी का इस गीत में स्तवन किया गया है। उसे सकट हर पार्श्वनाथ के रूप मे स्मरण किया गया है। मन्दिर मे प्रतिदिन उत्सव विधान होते रहते थे तथा सभी भक्त अपनी मनोकामना के लिये प्रार्थना किया करते थे।

७ क्षेत्रपाल गीत

घोघा नगर के दिगम्बर जैन मन्दिर में क्षेत्रपाल विराजमान थे। उन्ही के स्तवन मे यह गीत लिखा गया है। कवि ने क्षेत्रपाल को सम्यग्दृष्टि एवं जिन शासन का रक्षक कहा है।

८ भट्टारक रत्नकीर्तिना पूजा गीत

कवि के समय मे भट्टारको का इतना अधिक प्रभाव था कि उनकी भी अष्टप्रकारी पूजा होती थी। ब्र जयसागर ने प्रस्तुत गीत मे इसी के लिये आह्वान किया है।

९ चौबीसी गीत

इसीमे कवि ने भट्टारक पद्मनन्दि से लेकर भट्टारक रत्न-कीर्ति तक के भट्टारकों का उल्लेख किया है। गीत ऐतिहासिक कृति है।

१० नेमीश्वर गीत

नेमिनाथ पर कवि के दो गीत उपलब्ध हुए है। गीत सामान्य है।

११ जसोधर गीत

यशोधर के जीवन पर जैन कवियो ने सभी भाषाओं म काव्य लिखे है। कवि ने भी इस गीत मे राजा यशोधर के जीवन का अति संक्षिप्त वर्णन किया है।

१२ पञ्चकल्याणक गीत

यह कवि की सबसे बड़ी रचना है जिसमे शान्तिनाथ स्वामी का गर्भ कल्या-

णक, जन्म, तप, ज्ञान और निर्वाण कल्याणको का वर्णन किया गया हैं। कल्याणक गीत की रचना घोघानगर में चन्द्रप्रभु चैत्यालय मे की गई थी। इसमे पाच कल्याणको की पाच ढालें है।

५४. कविवर गणेश

गणेश कवि भट्टारक रत्नकीर्ति का प्रमुख शिष्य एव प्रशसक थे। इन्होने अपने गुरु एव आश्रयदाता के सम्बन्ध मे जितने गीत लिखे हैं उतने दूसरे कवियो ने बहुत कम लिखे हैं। गणेश कवि के सभी गीत अपने पीछे इतिहास लिये हुए हैं। वे कभी विहार के समय के, कभी यात्रा सघो का नेतृत्व करते समय के, कभी जनता से भट्टारक रत्नकीर्ति का स्वागत करने हेतु प्रेरणा देने के उद्देश्य से लिखे गये हैं। गणेश कवि बहुत सुसस्कृत भाषा मे रत्नकीर्ति की प्रशसा करता है। इस प्रकार के गीतो की सख्या १२–१३ होगी। इन गीतो मे गणेश कवि भक्तिभाव से रत्नकीर्ति भट्टारक का गुणानुवाद करता है। इन गीतो मे भट्टारक के माता पिता का नाम, वश का नाम, जन्म स्थान का नाम, भट्टारक पद प्राप्त करने का स्थान, शरीर की सुन्दरता, कमनीयता, अग-प्रत्यगो की बनवट आदि के सम्बन्ध मे विस्तृत वर्णन किया गया है। इसी तरह का एक पद देखिये—

रोग केदार गडो

साभल सजनी सहे गोर मोहरे।
रत्नकीर्ति सूरी जनमन मोहे रे॥
अभयनन्द पद कज उदयो सूर रे, कुमति तिमिर हर विद्या पूर रे॥१॥
हुबड वश विबुध विख्यात रे, मात सहेजलदे देवीदास तात रे।
कुमर कलानिधि कोमल काय रे, पद पूजो प्रेमे पातक पलाय रे॥२॥
श्री मूलसघ महिमा विधान रे, सरसति गछ गोर गोयम समान रे।
अरध शशि समा सोहे शुभ भाल रे, वदन कमल शुभ नयन विशाल रे॥३॥
दशन दाडिम सम रसना रसाल रे, अधर बिबीफल विजित प्रवाल रे।
कठ कबू सम रेखा त्रय राजे रे कर किसलय सम नख छवि छाजे रे॥४॥
हृदय विसाल वर गज गति चाल रे, गछपति गुरयो गभीर गुणमाल रे।
पच महाव्रत धर दया प्रतिपाल रे पच समिति त्रय गुप्ति गुणाल रे॥५॥
उदयो अवनि अभयकुमार रे, दिगम्बर दर्सण तणो सणगार रे।
सयल प्रबल बल जय जीतो पार रे, शील सोभागी सुन्दर उदार रे॥६॥

कनक वरण तन सुरूप रे, महि तले माने मोटा बहु भूप रे ।
विनय विवेकी नर परधान रे, अमर महीरुह सम आपे दान रे ॥७॥
जग जस निर्मल अमल सरीर रे, गिरिवर समधार जलधी गभीर रे ।
तुझ दीठडे मुख सामरे नेह रे, अकलक निकलक गोवरधन जेहरे ॥८॥
अभेनन्द पाटे पटोधर एह रे, सुगुण सलूणो रु चु सु सनेह रे ।
धर्म भूषण धन सूरीमत्र आपारे, गणेश कहे गोर गछपति थाप्या रे ॥९॥

उक्त गीत मे रत्नकीर्ति के सम्बन्ध मे कितना खुलकर लिखा है पाठक उसका आस्वादन कर सकेंगे। कवि ने उनकी प्रत्येक बात पर प्रकाश डाला है यहा तक कि उसके स्वभाव की चर्चा कर डाली है। इसी तरह के कम अथवा अधिक रूप मे और गीतो मे प्रकाश डाला गया है। जो पूर्णत सत्य घटनाओ के आधार पर ही आधारित है।

कवि के दो गीत तेजाबाई गीत के नाम से मिलते हैं। इसने सवत १६४३ मे भट्टारक रत्नकीर्ति से दीक्षा धारण की थी। गणेश कवि ने इस घटना को भी छन्दोबद्ध किया है।

एक प्रशस्ति मे गणेश कवि ने भट्टारक रत्नकीर्ति के गुणानुवाद को शिव सुख का साधन माना है। पूरी प्रभाति निम्न प्रकार है—

सुप्रभाति नमो देव जिणन्द ।
रत्नकीर्ति सूरी सेवो आनन्द ॥
सबल प्रबल जेणे काम हराव्यो, जानगा पोरमाहि यनीये बधाव्यो ।
वागवादनी बदने बसे एहन, एहनी उपमा कहीमे जहनें ॥२॥
गछपति गिरवो गुण गभीर, शील सनाह धरे मन धीर ॥३॥
जे नरनारी ए गोर गीत गामे, गणेश कहे ते शिव सुख पासे ॥४॥

एक दूसरे गीत मे गणेश कवि ने रत्नकीर्ति की अनेक उपमाओ से प्रशसा की है।

कला बहोत्तरि कोटामणो रे, कमल बदन करुणाल रे ।
गछ नायक गुण आगलो रे, रत्नकीरति विबुध विशाल रे ॥
आवो रे भामिनी गज गामिनी रे, स्वामीजी वाणी विख्यात रे ॥
अभयनन्द पदकज दिनकरु रे, धन एहना मातने तात रे ।

मान मूकाव्या मिथ्यातिया रे, हाथिया ते वादी गजनी सोह।
मूलसघ मुनि माहि सरस्वती गछ माहि लीहरे ।।३।।
चारित्र रग सोहे रुवडो रे, समकित सुमति सोहत रे।
वागवादिनी मुखे रूबडी रे, रुग्रडला भविक जन मोहत रे ।।४।।
मान सरोवर सोहे हससु रे, तारा माहि सोहे जिम चन्द रे।
रत्नकीर्ति सोहे सीलसू रे, मुदडी नगीना केरा वृन्द रे।
जिनमत जाणे जाति युगतस्यु रे, जालणापुर प्रसिद्ध रे।
सघवी तोला आसवा माली रे, गणेश कहे पाट सिद्ध रे ।।६।।

भट्टारक रत्नकीर्ति के गुणानुवाद के अतिरिक्त भट्टारक कुमुदचन्द्र की प्रशसा में लिखा हुआ एक गीत मिलता है जिसका नाम गुरु स्तुति है। सवत १६५६ मे बारडोली नगर मे कुमुदचन्द्र को भट्टारक पद पर अभिषिक्त किया गया था प्रस्तुत गीत में उसी का उल्लेख किया गया है। कुमुदचन्द्र मोढवश के श्रावक थे उनके पिता का नाम सदाफल एव माता का नाम पदमाबाई था। वे दर्शन ज्ञान एव चारित्र मे सम्पन्न थे। पूरी स्तुति निम्न प्रकार है—

माई रे मन मोहन मुनिवर सरस्वती गच्छ मोहत रे।
कुमुदचन्द्र भट्टारक उदयो भवियण मन मोहन रे ।।माई।।१।।
गुण गम्भीर गरउ गछ नायक वायक रुडा रसाल रे।
रत्नकीर्ति गोर पाटि पटोधर मानदे भला भूपाल रे ।।माई।।२।।
सघपति श्री कहानजी भाइयो भन वीर रत्न जयवत रे।
करे प्रतिष्ठा पाट महोत्सव गो थाणे गुणवत रे ।।माई।।३।।
वित्त विलमे उलट भरे धन्य मल्लिदास।
कुमुदचन्द्र गछ नायक थाप्या, गोपाल पुहती आस रे ।।माई।।४।।
सवत सोल छपन्ने, वैसाखे, प्रगट पटोधर थाप्या रे।
रत्नकीर्ति गोर बारडोली वर, सूर मन्त्र शुभ आप्या रे ।।माई।।५।।
मूलसघ प्रगट मणि माहत, सरसति गच्छ सोहावे रे।
कुमुदचन्द्र भट्टारक आगलि वादि को वादे न आवे रे ।।६।।
मोढवश श्रृगार शिरोमणि, साह सदाफल तात रे।
जायो यतिवर जुग जयवतो पदमाबाई सोहात रे ।। ।।7।।
सील तणो रग अग अनोपम दर्शन ज्ञान चारित्र रे ।। ।।८।।

अभयनन्दि गोर पाट पट्टोधर, रत्नकीर्ति मुनिन्द रे।
तस पाटि सोहे कुमुदचन्द्र गोर, गणेस कहे आणद रे ॥ ॥९॥

इस प्रकार गणेश कवि ने भट्टारको के सम्बन्ध मे जो गीत, प्रभाति लिखी है वह इतिहास की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

लेकिन गणेश कवि के सम्बन्ध मे इन गीतो से कोई जानकारी नही मिलती। यह अवश्य है कि उन्होने कुमुदचन्द्र का पट्टोत्सव देखा था तथा कुछ समय तक जीवित भी रहे थे। क्योकि यदि अधिक समय तक जीवित रहते तो उनको सम्बन्ध मे और भी गीत लिखते।

५५ सुमतिसागर

ये भट्टारक अभयनन्दि के शिष्य थे। अपने गुरु भट्टारक अभयनन्दि के साथ रहते थे। उनके विहार के समय जन साधारण को भट्टारकजी के प्रति भक्ति-भावना प्रगट करने की प्रेरणा दिया करते थे। भट्टारक अभयनन्दि के पश्चात जब रत्नकीर्ति भट्टारक बने तो वे रत्नकीर्ति के प्रिय शिष्य बन गये। वैसे गुरु भाई होने के कारण रत्नकीर्ति इनका बहुत सम्मान करते थे। इन्होने रत्नकीर्ति की प्रशसा मे भी गीत लिखे हैं। इनकी अब तक जो कृतिया उपलब्ध हुई है उनके नाम निम्न प्रकार है—

१ हरियाली–दो
२ साधर्मी गीत
३ नेमिगीत
४ गणधर विनती
५ रत्नकीर्ति गीत
६ नेमिनाथ द्वादशमासा
७ अन्य गीत

१ हरियाली

कवि ने हरियाली के नाम से दो गीत लिखे हैं। इनमे मानव के जन्म के सम्बन्ध मे तथ्य लिखे गये हैं। मनुष्य का चारो ओर हरियाली ही हरियाली दिखती है उसमे वह अपना सब कुछ भूल जाता है जो उचित नही। इसी तथ्य को कवि ने अपने दोनो गीतो मे निबद्ध किया है। गीतो मे भट्टारक अभयनन्दि के नाम का उल्लेख किया है इससे ये उन्ही के समय के लिखे हुए गीत लगते हैं।

२ साधर्मी गीत

यह भी सम्बोधनात्मक गीत है। जिसमे १० अन्तरे हैं। इसे अभयनन्दि भट्टारक के समय लिखा गया था। गीत में ससार की भयानकता पर प्रकाश डाला गया है।

३ नेमि गीत

राजुल नेमि के अभाव मे अपने आपको कैसी समझती हैं इसी का गीत मे वर्णन किया गया है। गीत अच्छा है। इसीलिये यहा उसे दिया जा रहा है—

नेमि आत्मा राजिमति वर कामा छे सम्बन्ध करे।
परि परिना दुख सम र ने किम सहिये, कु वियोगन रे।।
नारि भणे गुणि मुझ नायक, तुम मुझ चलो सयोग न रे।
एक मेक थई खीर नीर जिम लीजे ग ीजो मारो भोगन रे।
तुझ बिन सुख न निद्रा स.री तुम बिन न हिय सयोगन रे।
तुझ बिन रजे एकला भाई, किमे दुखिया वियोगन रे।
हू छू नारी गुणवन्तीजी, नेमि कामु कीजे जायन रे।
रूपरल मयलि चतुराई, नाथ नही मुझ उछन रे।
जिम बिना प्रतिमा देहरो जी, गुण बिना रूप न सोभे रे।
जिम बिना परिमल फूल न सोभे सरोवर कमल विहूडन रे।
धर्म दया विना कदा न सोभे ज्ञान विहूणो जीवन रे।
क्रिया बिना जेम मुनिवर दीखे, दुखिया फिरे ससारन रे।
दान विना जिम लख ी िनि, पात्र बिना जिम दानन रे।
घीय बिना भोजन नवि सोभे कला विहूणो बोवन रे।
विवेक बिना जिम नर नारी भाई, नवि शाभे बहु मन्यत रे।
नह बिना जिम प्रीति न शाभे, तिमहू तुझ बिना नायन रे।
जलचर जल बिन टलवले जी, तिमहू तुझ बिना पन्यि रे।
एक दिवस गुणवन्त प्रीतडी, ते अब छडियन छडे रे।
गरखे मरिशु मेल थिने, करतार तु का खडे रे।
पुण्य बिना नवि मपजे जी, इम बोले राजुल मडिय रे।।५।।
अन्तर मुझ थी नवि करियेजी, तुम्ह बिन मुझ नवि कोइम रे।
तुम्ह बिन को नर महीतल दामे, नवि दीसे मुझ जो मन रे,
ते नारि किम मानस जी, करि सघला नर एक तालन रे।
श्री अभयनन्दि वादी पचायण, सुमतिसागर इस बोलन रे।

इति नेमिगीत

गीत

रत्नकीर्ति की प्रशसा मे कवि द्वारा निबद्ध दो गीत उपलब्ध हुए हैं। एक गीत मे सवत् १६३० में बैशाख सुदी ततीया के दिन पट्ट स्थापना का उल्लेख किया है। इसलिये गीत उसके बाद के लिखे हुए मालूम पडते है। दोनो गीतो मे से एक गीत मे रत्नकीर्ति के सम्बन्ध मे अच्छा प्रकाश डाला गया है इसलिये उसे यहा दिया जा रहा है—

गीत राग-धन्यासी

श्री जिनवर चरण कमल वर मधुकर गुण गण मणि भण्डार जी।
भव्य कुमुद वन रजन दिनकर, करुणा रस जी रे, करुणा रस आगार जी।
अभयनन्दि महोदय दिन मणि भविक कमल जी रे, भविक कमल मन रजे जी।
रत्नकीर्ति सूरि वादि शिरोमणि परवादी मद गजे जी॥ ॥१॥
पच महाव्रत पच सुमति व्रत, गुपति गह गोर मोहे जी।
दुक्ख शोक भय रोग निवारे, वाणिह त्रिभुवन मोहे जी॥ ॥२॥
धनि धनि हु बड वश एह कलि काल गणधर जाया जी।
मेहेजलदे देवदास सुनन्दन, रत्नकीर्ति सूरी राया जी॥ ॥३॥
दक्षण देश विचार विचक्षण जालणापुर जगिसारा जी।
सघपति पाक साह विख्यात सधवणि रुपाई उदार जी॥ ॥४॥
ते बहे कूखे कुअर उपमा सघवी, आसवा अति गुणभाल जी।
सघवी रामाजी अगे शुभ लक्षण, वघेरवाल सुविशाल जी॥ ॥५॥
सवत् सोलसा त्रिस सवच्छर वैशाख शुदि त्रीज सार जी।
अभयनन्दि गोर पाटि थाप्या रोहिणी नक्षत्र शनिवार जी॥ ॥६॥
आगम काव्य पुराण सुलक्षण तर्क न्याम गुरु जाण जी।
छन्द नाटिक पिगल सिद्धान्त, पृथक पृथक वखाण जी॥ ॥७॥
कनक काति शोभित तस गात्र, मधुर समान सुवाणि जी।
मदन मान मर्दन पचानन, भारती गच्छ सन्मान जी॥ ॥८॥
श्री अभयनन्दि सूरी यह धुरधर सकलसघ जयकार जी।
सुमतिसागर बस पाय प्रणमे निर्मल सयम धारी जी॥ ॥९॥

४ नेमिनाथ का द्वादश मासा

इसमे नेमि के विरह मे राजुल के बारह महिने कैसे व्यतीत होते हैं इसका वर्णन किया जाता है। इसमे १३ पद्य हैं जिनमे एक-एक महिने के विरह का वर्णन मिलता हैं। अन्तिम १३वे पद्य मे प्रशस्ति दी हुई है जो निम्न प्रकार है—

श्री लक्ष्मीचन्द्र मुनीश्वर अभिचन्द्र पोट सु सार।
तस पाटे चारित्र चतुर जाणु अभिनन्दि गुणधार।
बहु प्रकारिइ पूजो श्री जिन माणिक देवी सुमत।
श्री सुमतिसागर दीठव जिनवर नेमि जय गुणवन्त ।।
रूप सोभागिण वन्दन जइये ।।

५६ दामोदर

दामोदर भट्टारकीय पडित थे। इन्होने भट्टारक रत्नकीर्ति से लेकर भट्टारक अभयचन्द्र तक का समय देखा था। इसलिये तीनो ही भट्टारको के सम्बन्ध मे इन्होने गीत लिखे हैं। इसके अतिरिक्त "सघवी नागजी" गीत भी लिखा है। अभयचन्द्र के प्रति इनकी अधिक भक्ति थी। इनके द्वारा लिखा हुआ एक गीत देखिये—

राग धन्यासी

आदि जिणंद नमी करी प्रणमी सहू गोर पाय।
अभयचन्द्र गुण गायेश्यु माहरे हैडले हरष न माय।
सहिली सहे गोर गाइ ये रे गोर कुमुदचन्द्र ने भाण।
श्री अभयचन्द्र चतुर-सुजाण । २ ।
अभयनन्दी नवो गौतम ए गोर प्रगट्यो शील तणो सिणगार।
वादी तिमिरहर दिनकर, सरस्वती गछ साधार । ३ ।
हूबड वश शृगार शिरोमणि श्रीपाल साधन मात।
बारडोली नयरि उछव कीधो महोछव अग्र अवार।
सघवी नागजी अति आणदा, हेमजी हरष अपार । ४ ।
सघवी कुअरजी कुल मण्डन मेघजी महिमावत।
रूपजी मालजी मनोहार, सहु सज्जन मन मोहत ५ ।
सघवं भीमजी भावस्यु सुत जीवा मनें उल्हास।
सघवई जीवराज उलट घणो, पहोती छै मन तणी आस । ६ ।
संवत सोल पच्यासीये फागुण सुदि एकादशी सोमवार।
नेमिचन्द्र सुर मत्रज जाप्यो, वरतयो जयकार । ७ ।
उत्तर दक्षण पूरव पश्चिम माने सहे गोर आण।
तिलक करे श्री अभयचन्द्र गोर, वचन कर्यां प्रमाण । ८ ।

रत्नकीर्ति पाटे कुमुदचन्द्र गोर, बहुजन दे आशीष ।
तस पाटि श्री अभयचन्द्र गोर प्रतपो कोडि वरीष । ९ ।
सघ सहूनें ए यति बाहलो, धर्मसागरस्यु नेह ।
कहे दामोदर सेवो सज्जन, वाछित कण छै मेह । १०।

प्रस्तुत गीत को पण्डित श्रीपाल के पुत्र श्रखई के पठनार्थ लिखा गया था ऐसा भी उल्लेख मिला है ।

५७. कल्याणसागर

कल्याणसागर भट्टारकीय पडित थे तथा भट्टारक रत्नकीर्ति के सघ मे रहते थे । इनके अब तक चार गीत मिले हैं जिनके नाम हैं क्षेत्रपाल गीत, नेमिजिन गीत, गीत एव पद ।

५८ आणवसागर

ये भट्टारक शुभचन्द्र के सघ मे रहते थे । इनके द्वारा लिखे हुए तीन गीत मिले हैं और वे सभी शुभचन्द्र की प्रशसा मे लिखे गये हैं ।

५९ विद्यासागर

विद्यासागर ने अपनी चन्द्रप्रभनी बिनती मे अपना परिचय देते हुए लिखा है कि वे भट्टारक शुभचन्द्र के शिष्य थे । वे बलात्कारगण एव सरस्वती गच्छ के साधु थे । चन्द्रप्रभ विनती को इन्होने सवत् १७२८ मे समाप्त किया था । इनकी अब तक निम्न रचनायें उपलब्ध हो चुकी हैं—

१ सोलह स्वप्न
२ जिन जन्म महोत्सव
३ सप्तव्यसन सवैय्या
४ दर्शनाष्टाग
५ विषापहारस्तोत्र भाषा
६. भूपालस्तोत्र भाषा
७ रविव्रत कथा
८ पद्मावतीनी विनती
९ चन्द्रप्रभनी विनती

सोलह स्वप्न

सोलह स्वप्न लघु कृति है जिसमे तीर्थंकर की माता को आने वाले सोलह स्वप्नो के बारे मे वर्णन दिया हुआ है। जिन जन्म महोत्सव १२ पद्यो की कृति है। पद्मावतीनी विनती मे पद्मावतीदेवी का स्तवन है जो १० छप्पय छन्दो मे पूर्ण होती है। इसी तरह चन्द्रप्रभविनती १८ पद्यो की रचना है। कवि ने इसके अन्त में अपन परिचय निम्न प्रकार दिया है—

मूलसघ नभचन्द्र सम अभयचन्द्र, तस पाटे भूषण हुवा सौभ्यचन्द्र।
तेह नेह थि वाणि वदे उदार, प्रभू विद्यासागर तणो आयो पार।
शुभ सवत सत्तर चोबीस समे, नभ मास वदि सप्तमीं भौम दिने।
कर जोडी ने विनती एह कहे, बहु जीवन धन सुख तेह लेहे ॥८॥

कवि की रविव्रत कथा अच्छी कृति है जो ३६ पद्यो मे पूर्ण होती है। भाषा गुजराती प्रभावित है। काव्य रचना का एकमात्र उद्देश्य कथा कहना है। एक पद्य देखिये—

पुत्र कहे माता सुणो व्रत ए नहि सार।
खरच नहि जिहा धन तणु ते जाणो आसार।
एहवा वचने वहु कहि व्रत निंद्या किधि।
जाणे पाप जलाजलि षट पुत्रे पिधि

६० ब्रह्मधर्म रुचि

भट्टारक लक्ष्मीचन्द्र की परम्परा में दो अभयचन्द्र भट्टारक हुए। एक अभयचन्द्र [स १५४८] अभयनन्दि के गरु थे तथा दूसरे अभयचन्द्र भट्टारक कुमुदचन्द्र के शिष्य थे। दूसरे अभयचन्द्र का पूर्व पृष्ठो मे परिचय दिया जा चुका है किन्तु ब्रह्म धर्मरुचि प्रथम अभयचन्द्र के शिष्य थे। जिनका समय १६वीं शताब्दि का दूसरा चरण था। इनकी अब तक ९ कृतियाँ उपलब्ध हो चुकी हैं। जिनमे सुकुमालस्वामिनी रास[1] सबसे बडी रचना है। इसमे विभिन्न छन्दो मे सुकुमाल स्वामी का चरित्र वर्णित है। यह एक प्रबन्ध काव्य है। यद्यपि काव्य सर्गों मे विभक्त नही है लेकिन विभिन्न भास छन्दो मे विभक्त होने के कारण सर्गों में विभक्त नही होना खटकता नहीं है। रास की भाषा एव वर्णन शैली अच्छी है। भाषा की दृष्टि से रचना गुजराती प्रभावित राजस्थानी भाषा में निबद्ध है।

---

१ रास की एक प्रति महावीर ग्रन्थ अकादमी के संग्रह मे है।

ते देखि भयभीत हवी, नागश्री कहे तात ।
कवण पातिग एणे कीया, परिपरि पामइ छे घात । १ ।
तब ब्राह्मण कहे सुन्दरी सुणो तह्‌मो एणी बात ।
जिम आनद बहु उपजे जग माहे छे विख्यात । २ ।

रास की रचना घोघानगर के चन्द्रप्रभ चैत्यालय मे प्रारम्भ की गयी थी और उसी नगर के आदिनाथ चैत्यालय मे पूर्ण हुई थी । कवि ने अपना परिचय निम्न प्रकार दिया है—

श्रीमूलसघ महिमा निलो हो, सरस्वती गच्छ सणगार ।
बलात्कार गण निर्मलो हो, श्री पद्मनन्दि अवतार रे जी ।। २३ ।।
तेह पाटि गुरु गुणनिलो हो, श्री देवेन्द्रकीर्ति दातार ।
श्री विद्यानन्दि विद्यानिलो हो, तस पट्टोद्धर सार रे जी ।। २४ ।।
श्री मल्लिभूषण महिमानिलो हो, तेह कुल कमल विकास ।
भास्कर सम पट तेह तणो हो, श्री लक्ष्मीचन्द्रवास रे जी ।। २५ ।।
तस गछपति जगि जाणियो हो, गौतम सम अवतार ।
श्री अभयचन्द्र वखाणीये हो, ज्ञान तणो भडार रे जीवडा ।। २६ ।।
तास शिष्य भणि रुवडो हो, रास कियो मे सार ।
सुकुमाल नो भावइ जट्ठो हो, सुणता पुण्य अपार रे जी ।। २७ ।।
ख्याति पूजानि नवि कीय हो, नवि कीयु कविताभिमान ।
कर्मक्षय कारणइ कीयु हो, पामवा वलि रुडू ज्ञान रे जी ।। २८ ।।
स्वर पदाक्षर व्यजन हीनो हो, मइ कीयु होयि परमादि ।
साधु तम्नो सोधि लेना हो, समितवि करजो आदि रे जी ।। २९ ।।
श्री घोघानगर सोहामणू हो, श्री सघव से दातार ।
चैत्यला दोइ आमणाँ हो, महोत्सव दिन दिन सार रे जी ।। ३० ।।

कवि की अन्य कृतियो के नाम निम्न प्रकार है—

१ पीहरसासडा गीत
२ वणियडा गीत
३ झीणारे गीत
४ अरहत गीत
५ जिनवर वीनती
६ आदिजिन विनती
७ पद एव गीत

इस प्रकार कवि की सभी लघु रचनाये है तथा सामान्य शैली में निबद्ध है। पीहर सासरा गीत रूपात्मक गीत है। जो बहुत सुन्दर है तथा मानव स्वभाव को प्रकट करने वाला है इसलिये पूरा गीत पाठको के रसास्वादन के लिये यहाँ दिया जा रहा है—

सन्मति शिव यति प्रणमीनि, भजो बली भगवती माय रे।
सासरु पीहर भले गायस्यु, जेह गाता पातिग जाय रे।
ससार सासरु माँहि दोहिलू, सोहिलू नहीय लगार रे।
शिवपुर पीहर सास्वतु, जिहा नही सुखनो पार रे ॥ १ ॥
मोह सासरो मदि मलय तो, माया रे सासूडी कूलछ रे।
कुमत नणदडी सखि नित दये, नमी तेहना मागी पद पीठरे ॥ २ ॥
सयम पिता हमारे भति भलो, दया रे माता मझसार रे।
धर्म बाधव दश शोभता, सुमति बहेन भवतार रे ॥ ३ ॥

मदन महाभट नाहलो, रति बधूस्यू क्रीडे अज्ञान रे।
क्रोध जेठ करे पेखणा, राग द्वेष देवर मोडि मान रे ॥ ४ ॥
सयल कुटब तप व्रत तणो, सह्यकारी सवे परिवार रे।
शील आभरण अगि उपना, पुण्य फले सुख भंडार रे ॥ ५ ॥
असयम कुटब अलखा मणू, धामणु दीसे बहु रौद्र रे।
पाप पदारथ सासरु नही, एक घडी सुख निद्र रे ॥ ६ ॥

सखी एहवा पीहर अलजई, तहा रे जावानू बहू कोड रे।
दैवना दाढा किमनी गमू, कहीइ होसे तेहनो मोड रे ॥ ७ ॥
ससार सारडे मून्हे नवि गमे, भमि मन पीहर मझारि रे।
विविध वेष धरी दुख सहिया, भमि भमि अनत ससार रे ॥ ८ ॥
देवगुरु अभयचन्द सेवता, ससार साहारा होसे अत रे।
सुगति पीहर प्राणि पामसइ, कहे ब्रह्मरुचि सत रे ॥ ९ ॥

ब्रह्मरुचि ने अभयचन्द्र के गुरु कुमुदचन्द्र एव दादागुरु ज्ञानभूषण का उल्लेख भी नही किया है इसलिये ऐसा लगता है कि इनका उदय भट्टारक कुमुदचन्द्र के पश्चात हुआ होगा।

६१ आचार्य चन्द्रकीर्ति

भ रत्नकीर्ति ने साहित्य-निर्माण का जो वातावरण बनाया था तथा अपने शिष्य-प्रशिष्यो का इस ओर कार्य करने के लिए प्रोत्साहित किया था, इसी के फल-स्वरूप ब्रह्म-जयसागर कुमुदचन्द्र, चन्द्रकीर्ति, सयमसागर, गणेश और धर्म-सागर जैसे प्रसिद्ध सन्त, साहित्य-रचना की ओर प्रवृत्त हुए। "आ चन्द्रकीर्ति" भ रत्नकीर्ति के प्रिय शिष्यो में से थे। ये मेधावी एव योग्यतम शिष्य थे तथा अपने गुरु के प्रत्येक कार्यों मे सहयोग देते थे।

"चन्द्रकीर्ति" के गुजरात एव राजस्थान प्रदेश प्रमुख क्षेत्र थे। कभी-कभी ये अपने गुरु के साथ और कभी स्वतन्त्र रूप से इन प्रदेशो मे बिहार करते थे। वैसे बारडोली, भडौच, डू गरपुर, सागवाडा आदि नगर इनके साहित्य निर्माण के स्थान थे। अब तक इनकी निम्न कृतिया उपलब्ध हुई है—

१ सोलहकारण रास
२ जयकुमाराख्यान,
३ चारित्र—चुनडी,
४ चौरासी लाख जीवजोनि वीनती।

उक्त रचनाओ के अतिरिक्त इनके कुछ हिन्दी पद भी उपलब्ध हुए हैं।

१ सोलहकारण रास

यह कवि की लघु कृति है। इसमे षोडशकारण व्रत का महात्म्य बतलाया है। ४६ पद्यो वाले इस रास में राग-गौडी देशी, दूहा, राग-देशाख त्रोटक, चाल, राग-धन्यासी आदि विभिन्न छन्दो का प्रयोग हुआ है। कवि ने रचनाकाल का उल्लेख तो नही किया है, किन्तु रचना-स्थान "भडौच" का अवश्य निर्दिष्ट किया है। "भडौच" नगर मे जो शातिनाथ का मन्दिर था वही इस रचना का समाप्ति-स्थान था। रास के अन्त मे कवि ने अपना एव अपने पूर्व गुरुओ का स्मरण किया है। अन्तिम दो पद्य निम्न प्रकार है—

> श्री भरुयच नगरे सोहामणु श्री शातिनाथ जिनराय रे।
> प्रासादे रचना रचि, श्री 'चन्द्रकीरति' गुण गायरे ॥ ४४ ॥
>
> ए व्रत फल गिरना जो जो, श्री जीवन्धर जिनराय जी।
> भवियण तिहा जइ भावज्ये, पातिग दुरे पालाय रे ॥ ४५ ॥

2 जयकुमार आख्यान

यह कवि का सबसे बडा काव्य है जो ४ सर्गों मे विभक्त है। जयकुमार प्रथम तीर्थंकर भ ऋषभदेव के पुत्र सम्राट भरत के सेनाध्यक्ष थे। इन्ही जय कुमार का इसमे पूरा चरित्र वर्णित है। आख्यान वीर-रस प्रधान है। इसकी रचना बारडोली नगर के चद्रप्रभ चैत्यालय मे सवत् १६५५ की चैत्र शुक्ला दशमी के दिन समाप्त हुई थी।

"जयकुमार" को सम्राट भरत सेनाध्यक्ष पद पर नियुक्त करके शाति पूर्वक जीवन विताने लगे। जयकुमार ने अपने युद्ध-कौशल मे सारे साम्राज्य पर अखण्ड शासन स्थापित किया। वे सौन्दर्य के खजाने थे। एक बार वाराणसी के राजा "अकम्पन" ने अपनी पुत्री "सुलोचना" के विवाह के लिए स्वयम्बर का आयोजन किया। स्वयम्बर मे जयकुमार भी सम्मिलित हुए। इसी स्वयम्बर मे "सम्राट भरत" के एक राजकुमार "अर्ककीर्ति" भी गये थे, लेकिन जब सुलोचना ने जय-कुमार के गले मे माला पहिना दी, तो वे अत्यन्त क्रोधित हुए। अर्ककीर्ति एव जयकुमार मे युद्ध हुआ और अन्त मे जयकुमार की विजय के पश्चात् जयकुमार का सुलोचना के साथ विवाह हो गया।

इस "आख्यान" के प्रथम अधिकार मे जयकुमार-सुलोचना-विवाह का वर्णन है। दूसरे और तीसरे अधिकार मे जयकुमार के पूर्व भवो का वर्णन और चातुर्थ एव अन्तिम अधिकार मे जयकुमार के निर्वाण-प्राप्ति का वर्णन किया गया है।

"आख्यान" मे वीर-रस, शृंगार-रस एव शांत रस का प्राधान्य है। इसकी भाषा राजस्थानी डिंगल है। यद्यपि रचना-स्थान बारडोली नगर है, लेकिन गुज-राती शब्दो का बहुत ही कम प्रयोग हुआ है। इससे कवि का राजस्थानी प्रेम झलकता है।

"सुलोचना" स्वयम्बर मे वरमाला हाथ मे लेकर जब आती है, तो उस समय उसकी कितनी सुन्दरता थी, इसका कवि के शब्दो मे ही अवलोकन कीजिए–

जाणीए सोल कला शशि, मुखचन्द्र सोभासी कहु ।
अधर विद्रुम राजताए, दन्त मुक्ताफल लहु ।।
कमल पत्र विशाल नेत्रा, नाशिका सुक चच ।
अष्टमी चन्द्रज भाल सोहे, वेणी नाग प्रपच ।।
सुन्दरी देखी तेह राजा चितवे मन माहि ।
ए सुन्दरी सूर सूदरी, किन्नरी किम केहु वाय ।।

सुलोचना एक एक राजकुमार के पास आती और फिर आगे चल देती। उस समय वहां उपस्थित राजकुमारो के हृदय मे क्या-क्या कल्पनाए उठ रही थी— इसको भी देखिए—

एक हसता एक खीजे, एक रग करे नवा।
एक जाणे मुझ वरसे, प्रेम धरता जु जवा॥
एक कहे जो नही वरें, तो अम्यो तपवन जायसु।
एक कहतो पुण्य पाये, एह वलभ थासू॥
एक कहे जो आवयातो, विमासण सहु परहरो।
पून्य फल ने वातणोए, ठाम सुभ हैयडे धरे॥

लेकिन जब सुलोचना ने अर्ककीर्ति के गले मे वरमाला नहीं डाली, तो जयुकुमार अर्ककीर्ति में युद्ध भडक उठा। इसी प्रसग मे वर्णित युद्ध का दृश्य भी देखिए—

मला कटक विकट कबहू सुभट सू,
धरि धीर हमीर हठ विकट सू।
करी कोप कूटे बूटे सरबहू,
चक्र तो समर खडग मू के सहु॥
गयो गम गोला गणनागणे,
अ गो अ ग आवे वीर इम भणें।
मोहो माहि मू के मोटा महीपती,
चोट खोट न आवे डगमरती॥
बयो थवा करी वहद्दू डमू,
कोपे करता कूटे अखड सू।
धरी धरी धर ढोली नाखता,
कोपि कडकडी लाजन राखता॥
हस्ती हस्ती सघाते आथडे,
रथो रथ सूभट सहू इम भडे।
हय हषार व जब छजयो,
नीसाण नादे जग गज्जयो॥

कवि ने अन्त में जो अपना वर्णन किया है, वह निम्न प्रकार है—

श्री मूलसघ सरस्वती गछे रे, मुनीवर श्री पदमनन्द रे।
देवेन्द्रकीरति विद्यानदी ग्रयो रे, मल्लीभूषण पुन्य कद रे ॥
श्री लक्ष्मीचन्द पाटे थापयारे, अभय सुचन्द्र मुनीन्द्र रे।
तस कुल कमलें रवि समोर, अभयनन्दी नमे नरचन्द रे ॥
तेह् तणे पाटें सोहावयो रे, श्री रत्नकीरति सुगुण भडार रे।
तास शीष सुरी गुणे मडयो रे, चन्द्रकीरति कहे सार रे।
एक मना एह भणें साभले रे, लसे भलु एह ग्राख्यान रे ॥
मन रे वाछति फल ते लहे रे, नव भवें लहे बहु मान रे।
सवत सोल पचावनें रे, उजाली दशमी चैत्र मास रे ॥
बारडोली नयरे रचना रची रे, चन्द्रप्रभ सुभ आवास रे।
नित्य नित्य केवली जे जपे रे, जय-जयनाम प्रसीधरे ॥
गणधर ग्रादिनाथ केर डोरे, एकत्तरमो बहु रिध रे ॥
विस्तार ग्रादि पुराण पाडवे भणोरे, एह सक्षेपे कही सार रे।
भणे सुणे भवि ते सुख लहे रे, चन्द्रकीरति कहे सार रे।

समय

कवि ने इसे सवत् १६५५ में समाप्त किया था। इसे यदि अन्तिम रचना भी मानी जावे तो उसका समय सवत १६६० तक का निश्चित होता है। कवि ने अपने गुरु के रूप मे "रत्नकीर्ति" एव "कुमुदचन्द्र" दोनो का ही नामोल्लेख किया है, सवत १६६० तक तो रत्नकीर्ति के पश्चात कुमुदचान्द्र भी भट्टारक हो गए थे, इसलिये यह भी निश्चित सा है कि कवि ने रत्नकीर्ति से ही दीक्षा ली थी और उनकी मृत्यु के पश्चात वे सघ से प्राय अलग ही रहने लगे थे। ऐसी अवस्था मे कवि का समय सावत् १६०० से १६६० तक माना जा मकता है।

चारित्र चूनडी

कवि की तीसरी रचना चारित्र चूनडी है जिसके रूप मे भट्टारक रत्नकीर्ति के चारित्र की प्रशसा की हैं। चूनडी में विभिन्न रूपको का प्रयोग हुग्रा है। चूनडी निम्न प्रकार हैं—

श्री जिनपति पद कज नमी रे, भजी भारती अवतार रे।
चारित्र पछेडी भले गायेस्यु रे, श्री गुरु सुख दातार रे।

चतुर चारित्र पछेडली रे, सोहे श्री गुरु अगि रे।
सूरी श्री रत्नकीरती सोहे रे, मोहे महिमबल रग रे।
श्री जिनागम सूत्र नीपनी रे, विण अवगुणे वणी एह रे।
सयम सरोवरे धोई जेरे, पुरातन पले पाप जे हरे॥
श्री गुरुवाणी हरडा करी रे, तेह तणो दीधो पास रे।
आगम फटकी रग दोढ करी रे, अध्यातम अनोपम तीसरे॥
ध्यान कडाई रग उकालीजे रे, तप तेल दीधे ए भूर रे।
समकित चोल रग गह गयो रे, पुण्य पल्लव सुख सुख पूर रे।
विमल कमल पच व्रत तणा रे, पान पच सुमति ना फूला रे।
त्रण्य गुपति रेखा सोभती रे, धरती विविध परिनेह रे।
सील समोह फरती कुलडी रे, मूलगुण मणि गुण छीट रे।
उत्तर चोरासी लख्य बेलडी रे, जोये रुडी ग्यान नी प्रीत रे।
सुन्दर चारित्र पछेलडी रे, सोहे रत्नकीरति मुनीद रे।
चन्द्रकीरति सूरी वर कहे रे, चारित्र पछेडी सुख वृद रे॥

इति चारित्र चुनडी गीत समाप्त

कवि ने भट्टारक कुमुदचन्द्र पर भी पद लिखे हैं जिसमे कुमुदचन्द्र के गुणो का बखान किया गया है। एक पद देखिए—

राग धन्यासी

वदो कुमुदचन्द्र सूरी भवियण

सरस बखान मनोहरवाणी, सेवे सदा पद गुणियण॥ १॥
पच महाव्रत पच सुमति, त्रण्य गुपति वर मडल।
पचाचार प्रवीण परम गुरु, मथित मदन मद खडन॥ २॥
शास्त्र विचार विराजित नायक, विकट वादी मद भजन।
चन्द्रकीर्ति कहे शोभित सदगुरु, सकल सभा मन रजन। ३

चन्द्रकीर्ति द्वारा निबद्ध चौरासी लाख जीवजोनी विनती भी मिलती है।

६२ सयमसागर

ये भट्टारक कुमुदचन्द्र के शिष्य थे। ये ब्रह्मचारी थे। सघ मे रह कर अपने गुरु को साहित्य निर्माण मे योग देना तथा विहार के समय भट्टारक कुमुदचद्र

के गुणानुवाद करना इनका प्रमुख कार्य था। वे स्वय भी कवि थे। छोटे-छोटे गीत लिखा करते थे। अब तक इनके निम्न गीत मिल चुके हैं।

१ कुमुदचन्द्र गीत
२ पार्श्वनाथ गीत
३ शीतलनाथ गीत
४ नेमिगीत
५ गुर्वावली गीत
६ शातिनाथनी विनती
७ वलिभद्रनी विनती
८ लघु गीत

उक्त सभी गीत छोटे छोटे हैं। लेकिन इतिहास लेखन में सभी गीत उपयोगी है। यहा एक गीत जिसमें कुमुदचाद्र की विशेषताम्रो का वर्णन किया गया है दिया जा रहा है--

आवो साहेलडी रे सहू मिलि सगे।
वादो गुरु कुमुदचन्द्र ने मनि रगि ॥
छन्द आगम अलकारनो जाण, वारु चितामणि प्रमुख प्रमाण।
तेरे प्रकार ए चारित्र सोहे, दीठडे भवियण जन मन मोहे।
साह सदाफल जेहनो तात, धन जनम्यो पदमा बाई मात।
सरस्वती गच्छ तणो सिणगार, वेगस्यु जीतियो दुर्धर भार।
महीयले मोढवशे सु विख्यात, हाथ जोडाविया वादी सघात।
जे नरनारी ए गोर गुण गावे, सयमसागर कहे ते सुखी पाय ॥

६३ धर्मचन्द्र

ये भट्टारक रत्नकीर्ति के सघ मे रहते थे। छोटे छोटे गीत लिखने मे ये भी रुचि लेते थे। आपका एक गीत मिला है जिसमे भट्टारक परम्परा, प्रतिष्ठाकारको की प्रतिष्ठा आदि के सम्बन्ध मे लिखा गया है। रचना सामान्य है।

६४ राघव

ये भी भट्टारक रत्नकीर्ति के सघ मे रहते थे। विद्वान थे। कभी-कभी

छोटे छोटे गीत लिख दिया करते थे। इन्होंने अपने एक गीत मे खान मलिक द्वारा भट्टारक रत्नकीर्ति का सम्मान किया गया था, ऐसा उल्लेख किया गया है।

श्री अभयनन्द पाटि पटोधर, रत्नकीरति गोर बदो जी।
बदे सुख लक्ष्मी बहु पामो, तो जन्मना पाप निकन्दो जी।
बेठा सिहासन सभा मनरजन, ''' हा अधिकु · सचे जी।
आगम छन्द प्रमाण ए व्याकरण मलूहरी वमतिहो वाजे जी।

लक्षण बतीस सकल कला अगि बहोत्तरि, खान मलिक त्यिे मान जी।

धन्य ए घोघा नयर बखाणू, हू बड वश सुजाण जी।
श्री रत्नकीरति चरण नमीने, भवियण करे बखाण जी।
धन्य सहेजलदे मात बखाणु, देवदास सुत रतन जी।
कर जोडी ने राघव बीनवे, जीव दया शुभ मन जी।
गोरने जीव दया शुभ मन जी ॥

६५ मेघसागर

मेघसागर ब्रह्मचारी थे तथा भट्टारक कुमुदचन्द्र एव अभयचन्द्र के सघ मे रहते थे। इन्हे भी छोटे छोटे गीत लिखने मे आनन्द आता था। सवत १६८५ मे जब अभयचन्द्र को भट्टारक पद पर अभिषिक्त किया गया था तब ये वही थे। उन्होंने उसका एक गीत मे वर्णन भी किया है। पूरा गीत यहा दिया जा रहा है—

गुरुगीत–राग मल्हार

सकल जिनेश्वर प्रणमीने, सारदा नवू बली पाय।
कुमुदचन्द्र पाटि गाईए, अभयचन्द्र गुरु राय रे।
आवो सुन्दरी तम्हे सहु मिली, जिन मन्दिर मझार रे ॥आचली॥१॥
मूलसघ गुरु जाणिये, सरस्वती गछे जेह रे।
तेह तणा गुण वणवु, धरी अधिक सनेह रे। आवो॥२॥
सूरी कुमुदचन्द्र पाटि अभिनवो गौतम अवतार रे।
चारित्र पाले निर्मला, धरे पच आचार रे ॥आवो॥३॥
पच महाव्रत उजला, पच समिति सुखकार रे।
त्रण्य गुपति ने वश कर, चारित्र तेर प्रकार रे ॥आवो॥४॥

बारडोली नयर सोहामणू, चद्रप्रभ जिनधाम रे।
पाटि महोछव तिहा हवो, सरसा सघना काम रे ।।आवो।।५।।
सवत सोल पच्यासीई, फागुण सुदि एकादशी सोमवार रे।
कुमुदचन्द्र पाटि थापिया, अभयचन्द्र गुरु सार रे ।।आवो।।६।।
तप तेजो दिनकर समो, मिथ्यामत कीधो दूरि रे।
भव्य जीवने प्रतिबोधवा, दीठे आणद पूर रे ।।आवो।।७।।
श्री अभयचन्द्र गुण गाइये, घरी हरष अपार रे।
मेघसागर ब्रह्म इम कहे, सकल सघ जयकार रे ।।आवो।।८।।

६६ धर्मसागर

ये भट्टारक अभयचन्द्र द्वितीय के सघ मे ब्रह्मचारी थे तथा भट्टारक के प्रिय शिष्यो मे से थे। वे अपने गुरु के साथ रहते और बिहार के अवसर पर उनका विभिन्न गीतो के द्वारा प्रशसा एव स्तवन किया करते। नेमिनाथ एव राजुल भी इनके प्रिय थे इसलिये उनके सम्बन्ध मे भी इन्होने कितने ही गीत लिखे हैं। अब तक इनके निम्न गीत प्राप्त हो चुके है।

१ नेमि गीत
२ नेमीश्वर गीत
३ लाल पछेडी गीत
४ मरकलडा गीत
५ गुरु गीत
६ विभिन्न गीत

धर्मसागर ने नेमि राजुल के सम्बन्ध मे अपने पूर्व गुरुओ के मार्ग का अनुसरण किया और राजुल के सौन्दर्य एव उसकी विरह वेदना को व्यक्त करने मे उनसे भी बाजी मरने का प्रयास किया। उनके द्वारा निबद्ध एक नेमीश्वर गीत देखिये—

सखिय सहू मिलि बीनवे, वर नेमि कुमार।
तोरण थी पाछा वल्या, करीस्यो रे विचार ।। १ ।।
राजीमती अति सुन्दरी, गुणनो नही पार।
इद्राणी नही अनुसरे, जेहनू रूप लगार ।। २ ।।

बेणी विशाल सोहामणी, जीत्यो श्याम फरिंणद ।
भाल कला प्रति रुपडी, प्ररधो जस्यो चद ॥ ३ ॥
प्रांखडली कज पाखडी, काली प्रणियाणी ।
काम तणा शर हारिया, जेह ने सु नीहाली ॥ ४ ॥
प्रानन हसित कमल जस्यु, नाक सरल उत्तग ।
घगूप्र करीरयु बखाणीये, सूका चच सुचाग ॥ 5 ॥
प्ररुण प्रधर सम उपता जेहवी पर वाली ।
वचन मधुर जाणी करी, कोयल थई काली ॥ 6 ॥
कठे कबु हरावीयो हैयडं हरे चित ।
बाहु लता प्रति लहकती, कर मन मोंहत ॥ ७ ॥
प्रघर प्रनोपम पातलू, जेहवू पोमण पोन ।
हरी लकी करि जाणिये, प्रग रभ समान ॥ ८ ॥
पान्हीस उची प्रति रातडी प्रागलडी तेहवी ।
सर्व सुलक्षण सुन्दरी, नही मलमे एहवी ॥ ९ ॥
रहो लाल पाछा चलो, कह्यू बचन ते मानो ।
हास विलास करो तम्हे, प्रति घृण मा ताणि ॥ १० ॥
एह वचन मान्यु नही, लीधो सयम भार ।
तप करीस्या सुख पामिया, सज्जन सुखकार ॥ ११ ॥
कुमुदचन्द्र पद चादलो, प्रभयचन्द्र उदार ।
धर्मसागर कहे नेम जी, सहूने जय जय कार ॥ १२ ॥

इस प्रकार कवि ने राजुल की विरह गत भावनाओं को अपने गीतो मे सजो कर हिन्दी जगत मे एक नयी सामग्री प्रस्तुत की है ।

धर्म सागर ने भट्टारक प्रभयचन्द्र का भी खूब गुणानुवाद किया है । एक गीत मे तो भट्टारक जी लाल पछेवडी धारण करने पर कितने सुन्दर लगते थे इसका भी वर्णन किया गया है और लिखा है कि "लाल पिछेवडी प्रभयचन्द्र सोहे, निरखता भविकयनां मन मोहे" । भट्टारक प्रभयचन्द्र की प्रशसा मे लिखा है कि इनका यश देहली दरबार तक व्याप्त था तथा वहा इनकी प्रशसा होती थी ।

दिल्ली रे सिंहासन केरा राजियो रे, गाजियो यश त्रिभुवन माहि रे ।
वादि तिमिरहर दिनकरु रे, सुरतरु सरस्वती गच्छे रे ॥

अभयचन्द्र की प्रशसा मे लिखा एक और गीत देखिये जिसमे कवि ने अभयचद्र की विद्वता एव ज्ञान की खुल कर प्रशसा की है—

आवो रे भामिनी गजवर गामिनी, वंदवा अभयचन्द्र मिली मृगनयनी ।
मुगताफलनी थाल भरीजे, गछनायक अभयचन्द्र वधावीजे ॥ २ ॥
कुकुम चदन भरीय कचोली, प्रेमे पद पूजो मोरना सूहू भली ॥ ३ ॥
हूबड वशे श्रीपाल साहू तात, जनम्यो रुडी रतन कोडमदे मात ॥ ४ ॥
लघुपणे लीधो महाव्रत भार, मन वश करी जीत्यो दुर्द्धर मार ॥ ५ ॥
तर्क नाटक आगम अलकार, अनेक शास्त्र भण्या मनोहार ॥ ६ ॥
भट्टारक पद एहमे छाजे, जेहनो यश जगमो वास गाजे ॥ ७ ॥
श्री मूलसघे उदयो महिमा निधान, याचक जन करे जेह गुणगान ॥ ८ ॥
कुमुदचन्द्र पाटि जयकारी, धर्मसागर कहे गाउ नर नारी ॥ ९ ॥

६७ गोपालदास

गोपालदास की दो छोटी रचनाये यादुरासो तथा प्रमादीगीत जयपुर के ठोलियो के मदिर के शास्त्र भण्डार के ६७वें गुटके मे सग्रहीत है। गुटके के लेखनकाल के आधार पर कवि १७वी शताब्दी या इससे भी पूर्व के विद्वान रहते थे। यदुरासो मे भगवान नेमिनाथ के वन चले जाने के पश्चात् राजुल की विरहावस्था का वर्णन है जो उन्हे वापिस लाने के रुप मे हैं। इसमे २४ पद्य हैं। प्रमातीगीत एक उपदेशात्मकगीत है जिसमे आलस्य त्याग कर आत्महित करने के लिये कहा गया है। इनके अतिरिक्त इनके कुछ गीत भी मिलते हैं।

६८ पांडे हेमराज

प्राचीन हिन्दी गद्य पद्य लेखको मे हेमराज का नाम उल्लेखनीय है। इनका समय सत्रहवी शताब्दी था तथा ये पाडे रुपचन्द के शिष्य थे। इन्होने प्राकृत एव सस्कृत भाषा के ग्रथो का हिन्दी गद्य में अनुवाद करके हिन्दी के प्रचार मे महत्व-पूर्ण योग दिया था। इनकी अब तक १२ रचनाये प्राप्त हो चुकी हैं जिनमे नयचक्र-

भाषा, प्रवचनसार भाषा, कर्मकाण्ड भाषा, पञ्चास्तिकाय भाषा, परमात्मप्रकाश भाषा आदि प्रमुख हैं। प्रवचन सार को इन्होने १७०६ मे तथा नयचक्र भाषा को १७२४ मे समाप्त किया था। अभी तीन रचनायें और मिली हैं जिनके नाम दोहा-शतक, जखडी तथा गीत हैं। रचनाओ के आधार पर कहा जा सकता है कि कवि का हिन्दी गद्य एव पद्य दोनो मे ही एक सा ही अधिकार था। भाव एव भाषा की दृष्टि से इनकी सभी रचनायें अच्छी है। दोहा शतक, जखडी एव हिन्दी पद अभी तक अप्रकाशित हैं।

———

नेमिनाथ फाग

श्री जिन युग धन जाणिय, वखाणीये वाणि विख्यात ।
सारदा वरदा स्मामिनी, भामिनी भारती मात ।। १ ।।
विमल विद्या गुरु पूजीइ, बूझिये ज्ञान अनन्त ।
मुगति तणा फल पाईइ, गाइए राजुल कन्त ।। २ ।।
यादव कुल तणो मण्डप, खण्डन पापनो अंश ।
अवतर्यो अवनि अनोपम उपमना अधिकवतंश ।। ३ ।।
सुन्दर शिवादेवी नन्दन, वन्दन त्रिभुवन तेह ।
समुद्र विजय धन तात, विख्यात वसुधा एह ।। ४ ।।
कुअर करुणावन्त, महन्त कहत अपार ।
राज काज मनि आणिय, जाणिय करे मोरारि ।। ५ ।।
जोउ पारथ एह तणू, अह्यनणु माने मन्न ।
पन्नग सेजि पोढिय, कम्बू धनुष धरे धन्न ।। ६ ।।
मल्ल युद्ध जो ए करे, बहु परिप्राक्रमी होय ।
पारखे प्राक्रमे पूरो, सूरो ए समो नही कोय ।। ७ ।।
पाणिग्रहण करी पाडु, देखाडु विपरीत ।
परणो प्रभू कहे प्रेमे, इम मनोहेरा रीत ।। ८ ।।
सिषवी सुन्दरी सामले आमले पाडवा बात ।
खडी खली झीलवा चालिय, झालिय नेमने हाथि ।। ९ ।।
जुगल कमले करी कामिनी, स्वामिनी छाडे देह ।
पाणिग्रहण पर प्रेम रे, नेम धरो मनि नेह ।। १० ।।
बल छल कल करी, भोलव्यो भोले नेमिकुमार ।
उग्रसेन केरी कुवरी, राजुल रूप अपार ।। ११ ।।

दूहा

राजुल का सौन्दर्य

चन्द्र वदनी मृग लोचनी मोचनी खजन मीन ।
वासग जीत्यो वेरिगइ, श्रेणिय मधुकर दीन ॥ १२ ॥
युगल गल दीये सशि, उपमा नाशा कीर ।
अधर विद्रुम सम उपता, दन्तनू निर्मल नीर ॥ १३ ॥

ढाल

चिबुक कमल पर षटपद, आनन्द करे सुधापान ।
ग्रीवा सुन्दर सोभती, कजु कपोतने वान ॥ १४ ॥
कोमल कमल कलश वे उपरि मोती सोहे ।
जाणे कमल केरी बेलडी, वेलडी बाहोडी सोहि ॥ १५ ॥
कनक कजोपम सोभतु, नाभि गम्भीर विसेस ।
जाणे विधाताइ आगुनी वालिय रूपनी रेख ॥ १६ ॥
कटि हरिगति गज जीतिया, पूरिया वनमा वास ।
जघाइ जीतिय कदलिय, अगुलिय पद्म पलास ॥ १७ ॥
आभरण अग अनोपम, भूषण शरीर सोहत ।
कवि कहेस्यु वखाणीये राजुल रूप अनन्त ॥ १८ ॥
उग्रसेन को कुअरि सुन्दरी सुलक्षण अग ।
माधव बन्धव नेमनो, वीवाह मेलो मनरग ॥ १९ ॥

दूहा

नेमिनाथ का विवाह

वेहू धरि सुभ पर प्रेमस्यू, अही अण मिलिया अनेक ।
खरचे वित नित चितस्यु वीहवा वारु विवेक ॥ २० ॥
करी सगाई सुर मिलि यदुपति हलधर कहान ।
इन्द्र नरिन्द्र गयन्द चढी, ते पणि आव्या जान ॥ २१ ॥

ढाल

जान मान माहि मोटा, महीपति मलिया अनन्त ।
एकेक पाहि अधिका घणा, ईश्वर उभया कत ॥ २२ ॥
देई निसाण सजाण चतुर चढियो रथ सोहि ।
किरिट कुण्डल केरी कानि, शक्या रवि शशि सोहे ॥ २३ ॥
आवया मण्डप ढूकडा कूकडा मृग तणा वृन्द ।
देखी वल्यो तत खेचरे देव दया तणो कद ॥ २४ ॥

साभलो सारथि बात विख्यात असम्भव आज ।
तह्मे कांई कारण जाण्यो रे, ए आण्या कोण काजि ।। २५ ।।

दूहा

उग्रसेन राइ आणीआ पखी पशू अनेक ।
गोरव वेला मारसे, करस्ये तह्म विबेक ।। २६ ।।
बात धातनी सांभली, अन्तर पडियो त्रास ।
धिग ससार वीह्वा किस्यो ए पसु नेस्यो पास ।। २७ ।।

ढाल

नेमि वैराग्य

पास छोडावो एहना देहना काकरो घात ।
जाणी वात मे एह तणी विवाह तणी नही बात ।। २८ ।।
पाछो चालो रथ सारथि, सासो म करस्यो सोस ।
उपनी तृषा अति जल तणी, न समे दूधे तथाउस ।। २९ ।।
विषय भोगवे अग्यानी, ज्ञानी न भोगवे तेह ।
भूता तन्तु बाधे मक्षिका नवि बाधे करि देह ।। ३० ।।
इन्द्रिय सुख शुभ तव लगे, मुगति न जाणो खेल ।
दीये स्वाद नही जब लगे, तब लगे उत्तम तेल ।। ३१ ।।
विवाह बात निवारु, मारु मदन महत ।
सुध मने तप साधु, आराधु सिद्ध महत ।। ३२ ।।

दूहा

आलिये आवी इम कहु सखीस्यो करे श्रृंगार ।
तोरण थी पाछो वल्यो, यदुपति नेमिकुमार ।। ३३ ।।
साभली श्रवणे सुन्दरी, मनि धरी एक बात ।
चकित थई तब मति गई, कारण कहो मुझ बात ।। ३४ ।।

ढाल

राजुल का विलाप

मात तात सहु देखता, राजुल थई दिग मूढ ।
बात वारती सीघणी कर्मतणी गति गूढ ।। ३५ ।।
आभरण भूषण छोडती मोडती कंकण हाथ ।
मन्दर ह्मेलू वहेलिय, ह्वेलिय सहियर साथ ।। ३६ ।।
राखो रे रथ तम्हे समरथ, हसारप करे बहु लोक ।
लक्षण कोण स सन्तना, माहतना वचन सुफोक ।। ३७ ।।

का आये वन ह्राहला, कला कठिन का थाय।
साभली वीनती साहरी, ताहरी कोमल काय ॥ ३८ ॥
छए रति ग्रारति ग्रति घणी, वरसा लेरे विख्यात।
नाथ बात नो हे सोहिली दोहिली शियालानी राति ॥ ३९ ॥
सीयाले शीत पडे, पडे ग्रति निर्मल हीम।
हरी करी चरि मद मूके, चूके तापस नीम ॥ ४० ॥
माह उमाह ग्रति ग्रावयो, महियल माधव राय।
पच वाण ग्रह्रा हाथि ते, साथे मदन सहाय ॥ ४१ ॥
उष्ण कालि खल सरिखो, निरखो हस कठोर।
कोमल तनि लू लागस्ये, वागस्ये वायु निठोर ॥ ४२ ॥

दूहा

ग्रपराध पाषे का परिहरो, दया करो देव दयाल।
जलचर जल विना टलवले, विलवले राजुल वाल ॥ ४३ ॥
मैं जाण्युह तु मुझने, मिलस्ये ग्रगो ग्रगि।
उलट उपनो ग्रति घणो, रग मा काकरो भग ॥ ४४ ॥

ढाल

राजुल का नेमि से निवेदन

भग काकरि प्रिय भोगनो, भोगवो लोग विख्यात।
माहरो करग्रह करस्ये, करस्ये को जीवनो घात ॥ ४५ ॥
प्रारथी ने पाप लागू, मागो मया करो मुझ।
एक रयणी रहो पास रे, दास थाउ छु तुझ ॥ ४६ ॥
हरिहर ब्रह्मा इन्द्र रे, चन्द्र नरेन्द्र न नारि
परण्या दानव देवता, सेवता सहू ससारि ॥ ४७ ॥
सुर नर हरि हर परण्या, पशुनो न करस्यो तेणेमार।
राजुल साभलि वीनती, बोल्यो नेमिकुमार ॥ ४८ ॥
ग्रकेका भव ने सगपण, भल पण हिसा न होय।
सुगति सुग्रारसढोलिय, पीये हलाहल कोय। ४९ ॥
किहा थी ग्राव्यु एवडूँ डाहापण देव दयाल।
परण्या विग का परहरो बोले रायुल बाल ॥ ५० ॥
किम रहु दुख एकली, किम मानें मुझ मन्न।
रजनीपति दहे रजनीय, वासरपति दहे दन्न ॥ ५१ ॥

दूहा

स्यामाटि शशि काढीयो, व्रास्यो अतिशय सेस ।
सूर भली मेरु बरासीयो, वासुदेव विसेस ॥ ५२ ॥
के निधि माही थी काढीयो, विरहिणी केरो काल ।
शीतल शशि ते सहू कहे, विरहा दवानल झाल ॥ ५३ ॥

ढाल

झाल मेहेले परशी करु, धरु क मालि वेशि ।
भव माहि भव करु, ननका मन करे परवेस ॥ ५४ ॥
एम विलवन्ती जूवती, वीनती करे पीयू पासि ।
चतुर चिन्ता करो माहरीय, ताहरी रायुल दासि ॥ ५५ ॥
साभलि सुन्दरि सीख, सीखामण अहम तणि ।
सू जाणे ए सार ससार असार अनेक ॥ ५६ ॥
तन धन गृह सुख भोगव्या, ए भव माहि अपार ।
नरके जाये जीव एकलो, एकलो स्वर्ग दुआर ॥ ५७ ॥
देवता दानव मानव तेह तणा घणा कररया भोग ।
तोहे जीव नृपति न पामीयो, मानव भवनो सा जोग ॥ ५८ ॥
उपनी तृषा अति नीरनी, क्षीरधिने कीयो पान ।
तृपति न पाम्यो आतमा, तृण जल कोण समान ॥ ५९ ॥
तात मात सहू देखता, जीव जाये निरधार ।
धर्म विना कोई जीवने, नवि तारे ससार ॥ ६० ॥
रायुल मन मनाविय, आवी चढ्यो गिरिनारि ।
वार भेद तप आचरे, आचरे पचाचार ॥ ६१ ॥
सुकुमालो परिसा सहे, सहसा वन मझारि ।
पनर प्रमाद दूरें करे शील सहस अठार ॥ ६२ ॥
ध्यान बले कर्म क्षय करी, अनुसरो केवल ज्ञान ।
लोकालोक प्रकाशक भासक तत्व निधान ॥ ६३ ॥
रायुले तो परतो करी, मनधर रही वेराग ।
भूषण अगना मू किय, शरीर सोहाग ॥ ६४ ॥
भव्य जीव प्रतिबोधिय, कीधो शिवपुर वास ।
तव बने स्त्रीलिंग छेदिय, रायुल स्वर्ग निवास ॥ ६५ ॥

उदधि सुता सुत गोर नमी, प्रणमी अभेचन्द पाय ।
मानियो मोटे नरिन्द, अभयनन्दि गछपति राय ।। ६६ ।।
तेह पद पकज मन धरी, रत्नकीरति गुण गाय ।
गाये सूणे ए माहृत, वसन्त रिते सुखि थाय ।। ६७ ।।

दूहा

नेमि विलास उल्हासस्यु, जे गास्ये नरनारि ।
रत्नकीरति सूरीवर कहे, लहे सौख्य अपार ।। ६८ ।।
हासोट माहि रचना रची, फाग राग केदार ।
श्री जिन जुग घन जाणीये, सारदा वर दातार ।। ६९ ।।

इति श्री रत्नकीर्ति विरचित नेमिनाथ फाग समाप्त ।[1]

(२) बारहमासा

ज्येष्ठ मास— **राग आसावरी**

आ ज्येष्ट मासे जग जलहर नोउमाहरे ।
काई वाय रे वाय विरही किम रहे रे ।।
आए रते आरत उपजे अग रे ।
अनग रे सन्तापे दुख केहे नें कह रे ।। १ ।।

त्रोडक—

केहने कहे किम रहे कामिनी आरति अगाल ।
चारु चन्दन चीर चिते, माल जाणे व्याल ।।
कपूर केसर केलि कुकम केवडा उपाय ।
कमल दल छाटणा वन रिपु जाणे वाय ।।
भावे नही भोजन भूषण कर्ण केरा भाय ।
परीनगमे पान नीको रलि करे कर भाय ।।
गिरिनारि केरो गिरिवपे, मनि जेष्ठ मास विसेष ।
दु सह दीन दोहिला लागे कोमला मलेषि ।। २ ।।

---

१ गुटका, यशकीर्ति सरस्वती भवन ऋषभदेव, पत्र सख्या १२७ से १३२ तक

आषाढ मास—

आभर आषाढ आवयो ए पेर रे ।
काई घरे रे नाह नहीं हू किम रहु रे ।।
आ जल थल मही अल मेहनू मडाण रे ।
सजाण रे न सम्भारे दुख केहने कहु रे ।।
आगड अडे गगने गोहे रो अपार रे ।
काई धार रे न खचे उन्नत माहालो रे ।।
आजिम जिम तिम रीति मरासु माहाले रे ।
काई साले तिम तिम नेमनो नेहलोरे ।। ३ ।।

त्रोटक—

तिम तिम नाहनो नेह साले आषाढि अगाल ।
दादुर बोले प्राण तोले वरसाले विशाल ।।
दिवस अधारी रातडी वलि वाट घाटे नीर ।
वापीयडो पीउ पीउ बोले किम धरु मन धीर ।।
तरु तणी साखा करे भाषा सावजा सोहत ।
रितुकाल मोर कला करी मयूरी मन मोहत ।।
आज सखी अगाल आव्यो उन्हई ने मेह ।
झव झबक झबके वीजली किम सहे कोमल देह ।
आपो पणा पीउ ने पामे, करे कामिनी लाड ।
किम रहुं हु एकली रे आवयो आषाढ ।। ४ ।।

सावन मास—

आषाढ अनुक्रमे श्रावण मास रे ।
काई पास रे आस करु हु तम तणी रे ।।
आ अनुचरी जाणी आवयो एक बार रे ।
आधार रे नेमि जिन धम त्रिभुवन धणी रे ।। ५ ।।

त्रोटक —

त्रिभुवन धणी तम तणी जाणी आवयो एक बार ।
पछे नो हे अवसर अह्म तणो, जोवन नो आगार ।।
अवसर चूकी आपणो पछे कस्यो उगे चन्द ।
तिम तुझ विना निज नाथ मुझने सोहोये न आनन्द ।।
मालती मकरद चूको, कस्यु करे करी रे ।
मानसर मराल चूको, किम धरे मन धीर ।।
असवर गये सज्जन मिले पछे किम टले दुख देह ।

आपापणे अवसर चूको बरससेरयु मेह,
करुणा कर कृपा करो जी दयावत दयाल।
श्रामला मू को सामला श्रावण करो सभाल ॥ ६ ॥

भाद्रपद मास—

भाद्रवडे भरि जलथल महीयल मेघ रे।
मैं घर रे नेमि जिम तुम बिना किम रहु रे॥
आ हरी अ भूमि परि इद्र गोप आनन्द रे।
आनन्द रे सोभा तेहनी सी कहु रे॥
ज्यम ज्यम जलहार बरसे बहुरग रे।
अग रे अनग दहे सुणि सहचरी रे॥
आ दीनथइने वचन बहु भाषे इम।
अपराध पाखे का पीउ परहरी रे॥ ७ ॥

त्रोटक—

परहरी का अपराध पाखे वचक भाषे इम।
दिवस दोहिले नीगमु रे रयणी जावे किम॥
आक्रन्द करती दुख धरती रडन्ती चकवइ राति।
उदय थाये एकठा तोराननी सी बात॥
सुणि सखि मझ काई न सुझे धूजे काम शरीर।
निज नाथ केरो नेह साले नयन टलया नीर॥
रमे कुरग कुरगीणी तरगीणी ने तीर।
हाव भाव विलास निरखी नयन टलया नीर॥
अवनीय उपरि अब पूरा पूरया सुरचाप।
भाद्रवे भरतार पाखि सेजतलाई ताप॥ ८ ॥

आश्विन मास—

आ आसो आसा नेमि जिणद रे।
काई चद रे उदयो अवनी नीर भलो रे॥
आ उज्जल तृण जल अबुज आकाश रे।
मास रे सरद सजनी सोह जलो रे॥
सवया सुत विनसो करु शृगार रे।
मुगति नो हार हृदय मुझ दहे रे॥

आ रे नाथ साथ ले को कहे वयणें रे।
नयणे रे काजल सखि मुझ नवि रहे रे ॥ ६ ॥

त्रोटक—

नवि रहे काजल नयण माहरे प्राणता हरे प्रेम।
उडुपति केरा किरणबाले शरद कालि एम ॥
उह्या भरी किम रहु हु धरी वली करी तुमस्यु प्रीति।।
वाही ने वन माहि जाये लोक मासी रीत ॥
सुणि स्वामी सामल तुम बिना नवि रहे माहरु मन्न।
कठिन थई ने का रह्यो रे वचन ताहरु धन्न ॥
मंदिरमा में नवि लहू जे कर्यो पशुआ सोर।
ते देखि नीठोर थयोरे आसो नाह निठोर ॥ १० ॥

कार्तिक मास —

आह किम रहे कामिनी कातीय मास रे।
काई दास रे जाणी देव दया करी रे ॥
आ तुझ बिना नवि गमे तातने मात रे।
आज रे काई काज रे ए कुन सरे सुणि महि रे ॥ ११ ॥

त्रोटक

मुणि सही सु काज सारे न सभारे नाथ।
मुझ कनक कु डल कियूर ककण नही भावे हाथ ॥
मुझ राखडीनी आखडी पद कडि कडला दूरि।
तिलक अग नवि करु न धरु माग सिंदूर ॥
त्रोटी मोटी मोरलि मोती दहे मुझ अग।
घूघरी खमकार नेउर चूनडी ना रग ॥
आ।चरण भूषण अग दूषण एक क्षण नही आस।
किम रहे कामिनी एकलीरे आइ काती मास ॥ १२ ॥

मगसिर मास—

आ मागशिरे मन बल विह्वल थाये रे।
माय रे राय नेमी जिन कारणे रे ॥
आ जिम मृग मृगी चकित चूकी जूयो रे।
लोयणे लोपे रुये बारणे रे ॥

आ तुझ बिना दीन मुझ दोहिला जाये रे।
काई जाये रे जूवति योवन दोहिलू रे॥
आ पीहर तो दीन पाच नो प्रेम रे।
काई नेम रे सासरडे सहू सोहिलू रे॥ १३॥

त्रोटक—

साहेलू स्वामि राज ताहरु माहर तो नही कर्म।
चीर भव मे आल मेहेल्या बोला मोसा मर्म॥
कोडह्व तु एक मुझने एटली ता आस।
करस्यु' लीला नाथ साथे कांकरीनी रास॥
आस पूरो माहरी एटली ता खति।
अति घणू न ताणिये जी जूयो विमासी चिन्त॥
पाणिग्रहण नही कही पछे ना कहेस्यो धर्म।
काला तेटला कामणी रे ए मे जाण्यो मर्म॥
किम भव जास्ये एह माहरो क्षण वरसा सो थाय।
मागशिर गयो मुझ दोहिलो रे जूयो यादव राय॥ १४॥

पोष मास—

आ पोथे पोषन सोरंग सीयाले रे।
ए शीत कालि कापीउ परिहरो॥
आ शीत वाये उत्तर नो वाय रे।
काये रे कपे प्रभु मुझ परिकरो रे॥
आताधपडे ही मह लिही माले रे।
काई डाले रे तखी जुगल बे सीरहे रे॥
आ किल किले केलि करे सुन्दर शखारे।
काई भाषा रे भावता वचन ते ता कहेरे॥ १५॥

त्रोटक—

भाषा कहे शाखा रहे वलि सहि अगे शीत।
प्रीत ओढी पखि पेखी आवयो जी मित मित॥
करयो चित माहरी ताहरी दास दयाल।
विले वले वचन ता एम कहे किम रहे राजुल बाल॥
आपो पणे नरनारि मदिर करे सुन्दर राज।
हू नेमि विन एकली अनुदिन किम सरे मुझ काज॥

मुझ नयन थी निज नाह गयो रे रह्यो अंग शोष।
कृपा करो मुझ मन धरो किम रहु पीउडा पोष ॥ १६ ॥

माघ मास —

आ पोष महा मुझ दोहिले दिन राति रे।
काई मात रे जीवन यदुपति किस सहे रे ॥
आ जिम जिम पडे वन अति घन ठाई रे।
आधार रे उभो गिरि मा किम सहेरे ॥
आ एरते महीपति चाप चढावी रे।
काई आवी रे हेमन्त रित उभो रह्यो रे ॥
आ तो जीवु जो जइने जादव वालो रे।
हिमालो रे सरस सीयालो वही गयो रे ॥ १७ ॥

त्रोटक—

नेह गयो निज नाथ केगे आ भवे आधार।
सुणि धणी वीनती घणी तह्म तणी राजुल नारि ॥
आपणी जाणी प्रेम आणी आवयो एक वार।
पाछा वले यो नेह पगे रे जो ना वे विचार ॥
न करु रे नाथ माहरा प्राणे तमसु प्रीति।
साहीन राखु स्वामी तह्म ने नेह भर हो निश्चित ॥
नेह भणी त्रिभुवन धणी वीनती सुणो मुझ सोय।
माह मासि पीउ पासि पुण्य विना नवि होय ॥ १८ ॥

फागुण मास —

आ पीउ विना आवयो फू फूइने फाग रे।
काई रागरे वसंत विरही आल वे रे ॥
आ कुंकम केसर छांटिया अंग रे।
काई रंग रे पदमिनी प्रिय चित वाल रे ॥
आ केसू फूलिया झूलिया जाय रे।
काई माय रे माधव मधुकर रणझणे रे ॥
आ मोगरो मन्दार मालती ना छोड रे।
काई कोउ रे कानन दीसे गुण घणे रे ॥ १९ ॥

त्रोटक—

गुण घणे वोलसरी वेलि जासू अनारिंग ।
पाडल परिमल कमल निर्मल कणेर केतकी सग ।।
सहकार सुन्दर मोरीया बपोरीया ने रग ।
एलची रहूया अनेक वन श्रीफल सग ।।
ते वन मा वलीय सवाये गाये गीत सनेह ।
फागण मारे पीउ विना होली दहे मुझ देह ।। २० ।।

चैत्र मास—

आ मुझ देहे दुख दहे चैत्र नो मित्र रे ।
काई कत रे माहुत माहरे परहरी रे ।।
आ कोकिला कूजे सोरवर पालिरे ।
काई बोले रे बोल सखी मुझ सूडला रे ।।
आ वली वन वसता सारसडा विख्यात रे
विख्यात रे मात न लागे रूअडला रे ।। २१ ।।

त्रोटक—

रुडा न लागे वन्न वेरी व्हाला ने वियोग ।
तिलक अजन परहस्या दूरी करया सहु भोग ।।
चालया चिहु दिम पथि प्रेमे ताप तडका कीध ।
किम रहु हू एकली तजीनीदश ने दीध ।।
उष्ण कालि ए उन्हाने काम सहे मुझ तन्न ।
कठिन थई नेका जाये किम दहे माहरु मन्न ।।
सोह सहसने आठ आगे सारग धरने माथि ।
एक का अलखवा मणि ए मन कीजे निज नाथ ।।
मास पोस हू नीगमू वलिनीमगू षट् मास ।
जनमारो किम निगमू रे चैत्र मि रहो पामि ।। २२ ।।

वैशाख मास—

आ बैशाखै शाखा मोरि रसाल रे ।
विशाल रे काल उन्हाले जल घणी रे ।।
आ मेडिइ मदिर सुन्दर सोहावे रे ।
काई आवेरे गामथा पथी धर भणी रे ।।
आ मदिर आव्या स्वामी सोहाव्या रे ।
सधाव्या रे पशु तणी करुणा करी रे ।।

आ उनमद मनसिज मान नीवारि रे।
सभारी रे मुगति मानिनी करि धरी रे ।। २३ ।।

त्रोटक—

करि धरि वैराग्य वाहलौ चालयो गिरिनारि।
वार मास परीसा सहे किम रहे रायुल नारि ।।
निज मन्न ने ता तप सम्बोधी प्रतीबोधी रायुल राज।
मुगति पुरी गयो नाथ नेमि जिन करी आतम काज ।।
श्रीअभेचन्द उदार अनुक्रमे अभेनन्दआनन्द।
तस चरण सामी कहे यतिवर रत्नकीर्ति मुणिद ।।
प्रेम आणी एह वाणी गासे द्वादश मास।
तेह तणी श्री नेमि जिनवर बहू पूरे मन आस ।।
सायर तट घोघा गुणाले चैत्यालयचन्द।
तिहा रही रचना रची रे बार मास आनन्द ।। २४ ।।

इति श्री भ रत्नकीर्ति विरचिता बारहमासा समाप्त ।

पद एवं गीत

राग मल्हार (१)

सखी री सावनि घटाई सतावे ॥

रिमिझिमि बूंद बदरिया बरसत, नेमि नेरे नहि आवे ॥ १ ॥

कूजत कीर कोकिला बोलत, पपीया बचन न भावे ।

दादुर मोर घोर घन गरजत इन्द्रधनुष डरावे ॥ २ ॥

लेख लिखूं री गुपति वचन को, जदुपति कुं जु सुनावे ।

रतनकीरति प्रभु अब निठोर भयो, अपनो वचन विसरावे ॥ ३ ॥

राग न नारण (२)

नेम तुम कैसे चले गिरिनारि ।

कैसे विराग धरयो मन मोहन, प्रीति विसारि हमारी ॥ १ ॥

सारग देखी सिधारे सारगकुं, सारग नयनि निहारी ॥

उनपे तत मत मोहन हे वेमो नेम हमारी ॥ २ ॥

करो रे संभार सावरे सुन्दर, चरण कमल पर वारी ।

रतनकीरति प्रभु तुम बिन राजुल, विरहानलहु जारी ॥ ३ ॥

राग कनडो (३)

कारण कोउ पीया को न जाने ॥ टेक ॥

मन मोहन मडप ते बोहरे पसु पोकार बहाने ॥ १ ॥

मोपैं चूक पडी नही पल रति भ्रात तात के ताने ।

अपने हर की आली बरजी सजन रहे सब छाने ॥ २ ॥

आये बोहोत दीवाजे राजे सारग मय धूनी ताने ।

रतनकीरति प्रभु छोरी राजुल, मुगति बधू बिरमाने ॥ ३ ॥

राग कनडो (४)

सुदसर्ण नाम के मै वारि ॥

तुम विन कैसे रहु दिन रयणी, मदन सतावे भारी ॥ १ ॥

जावो मनावो आनो गृह मेरे यो कहे अभिया रानी ॥ २ ॥

रतनकीरति प्रभु भये जु विरागी, सिध रहे जीया धाई ॥ ३ ॥

राग कल्याण चर्चरी (५)

राजुल गेहे नेमी आय ।
हरि बदनी के मन भाय, हरि को तिलक हरि सोहाय ॥ १ ॥
कबरी को रग हरी, ताके सगे सोहे हरी,
ता टक हरि दोउ श्रवनि ॥ २ ॥
हरि सम दो नयन सोहे, हरिलता रग अधर सोहे,
हरिसुतासुत राजित द्विज चिबुक भवनि ॥ ३ ॥
हरि सम दो मृनाल राजित इसी राजु बार,
देही को रग हरि विशार हरी गवनी ॥ ४ ॥
सकर हरि अग करी, हरि निरखती प्रेम भरी,
तत नन नन नीर तत प्रभु अवनी ॥ ५ ॥
हरि के कुहरि कुपेखि, हरिलकी कु वैषी,
रतनकीरति प्रभु वेगे हरि जवनी ॥ ६ ॥

राग केदारो (६)

राम । सतावे रे मोहि रावन ॥
दस मुख दरस देखें डरती हूँ, वेगो करो तुम आवन ॥ १ ॥
निमेष पलक छिनु होत वरिषमो कोई सुनादो जावन ।
सारगधर सो इतनो कहीयो, अब तो गयो है आवन ॥ २ ॥
करुनासिधू निशाचर लागत, मेरे तन कु डरावन ।
रतनकीरति प्रभु वेगे मिलो किन, मेरे जीया के भावन ॥ ३ ॥

राग केदारो (७)

अबगरी करज्यो न माने मेरी ।
आ अनीत नीत काहे कु करतरी,
अति मीन मृग खजन घोरी ॥ १ ॥
कनक कदली हरि कपोत कबु,
अरु कुभ कमल करी करो ॥
सारग उरग अनेक सग मिलि,
देत डरानो नेरो ॥ २ ॥
चदगहन होवत राका निशि,
रे हे त्रिया निज गेह नेरो ॥
रतनकीरति कहेया तु कलकी,
राह गहत हे अनेरो ॥ ३ ॥

राग केदारो (८)

नेम तुम आवो घरिय घरे ।

एक रयनि रही प्रात पियारे, बोहोरी चारित धरे ॥ १ ॥ नेम ॥
समुद्र विजयनदन नृप तुही विन मनमथ मोही न रे ।
चन्दन चीर चारु इन्दुसे दाहत अग धरे ॥ २ ॥ नेम ॥
बिलखती छारि चले मन मोहन उज्जल गिरि जा चरे ।
रतनकीरति कहे मुगति सिधारे अपनो काज करे ॥ ३ ॥ नेम ॥

राग केनारो (६)

राम कहे अवर जया मोही भारी ॥

दश कमल सु शीतल सीता दाहत देह धारी ॥ १ ॥
नयन कमल युगल कर पदुमिनी गयन के इदु अपारी ।
रतनकीरति राम पीर तजु पलक जुग अनुवारी ॥ २ ॥

राग केदारो (१०)

दशानन, बीनती कहत होइ दास ।

तोही बिरहानर जरत या तन, मन मोहु आउ दास ॥ १ ॥
सूर तो सपन दश च्यार निवारे ते तोही अग निबास ।
चन्द वदन कु अधर सुधा कु स्पनदत केलास ॥ २ ॥
लावनि काम दुधा श्रीकाते रभा रूप के पास ।
गज गमनी जु हर द्रीगन कु धनुध भमे कबु पास ॥ ३ ॥
कठिन री हो कहा करत कठियाई या मोही पूरन आस ।
रतनकीरति कहे सीया कारण काहे नसावत सास ॥ ४ ॥

राग केदारो (११)

वरज्यो न माने नयन निठोर ।

सुमिरि सुमिरी गुन भये सजल घन,
उमगी चले मति फोर ॥ १ ॥ वरज्यो ॥
चचल चपल रहत नही रोके,
न मानत जु निहोर ॥
नित उठि चाहत गिरि को मारग,
जेही विधि चन्द्र चको ॥ २ ॥ वरज्यो ॥

तन मन धन योवन नही भावत ।
रजनी न भावत भोर ॥
रतनकीरति प्रभु वेगे मिलो ।
तुम मेरे मन के चोर ॥ ३ ॥

राग केदारो

(१२)

झीलते कहा कर्यो यदुनाथ ।
एही रुकमणि सत्यभामा छीरकत मिली सबु साथ ॥ १ ॥
छिरकते बदन छपात इतउत, व्याहान को दीयो हाथ ।
रतनकीरति प्रभु कैसे सीधारे मुगति बधू के पाय ॥ २ ॥

राग केदारो

(१३)

सरद की रयनि सुन्दर सोहात ।
राका शशधर जारत या तन, जनक सुता बिन भ्रात ॥ १ ॥
जब याके गुन आवत जीया मे, वारिज बारी बहात ।
दिल बिदर की जानत सीआ, गुपत मते की बात ॥ २ ॥
या विन या तन सहो न जावत, दु सह मदन को घात ।
रतनकीरति कहे बिरह सीता के, रघुपति रह्यो न जात ॥ ३ ॥

राग केदारो

(१४)

सुन्दरी सकल सिंगार करे गोरी ।
कनक बदन कचूकी कसी तनि, पेनीले आदि नर पटोरी ॥ १ ॥
नीरखती नेह भरि नेमनो साहकु रथ बेले आयेसग हलधर जोरी ।
रतनकीरति प्रभु निरखी सारग बेग दे गिरी गये मान मगेरी ॥ २ ॥ सुन्दरी ॥

राग मारुणी

(१५)

सारग उपर सारग साहे सारग व्यासार जी ।
ते तल पर सारग एक सुन्दर एवी राजुननार ॥
तरुणी तेजे मोहे जी ॥ १ ॥
सारग सारग हरी मोहे सारग माहे ।
सारग मुकी सारग पति ने जोवे ॥ तरु० ॥ २ ॥
सारग करीने सारग बैठो कोटे सारग समान जी ।
सारग उपर थी सारग उतरी सारग सु करे गन ॥ त० ॥ ३ ॥

सारग श्रवणे शामली बोले नेम दयाल जी ।

सहु सारग केरो ने हीतकर वाल्यो रथ गुणाल ॥ त० ॥ ४ ॥

सारग नी वारी सारग सधाव्यो सारग गज ए रहावे जी ।

अभयनन्द पद पजक प्रणमी रत्नकीरति गुण गावे ॥ ५ ॥

राग मारुणी (१६)

सुण रे नेमि सामलीया साहेब, क्यो बन छोरी जाय ।
कुण काहने रच्यो क्योन जाणो काहे न रथ फेरायरे ॥

जीवन जीवन सुण मेरी अरदास, हु होउगी तोरी दास ।
तू पूरण मोरी आस मोरी आस रे ॥ जी ॥ १ ॥

तात भ्रात अब मात न मोरी, तेरी चेरी होई आउ ।
सेवते देव ते दया न होवे तो सीर लख्या पाउ रे ॥ जी ॥ २ ॥

यु बील बील ते दया न आवे, काहावे क्यो कृपावत ।
रतनकीरति प्रभु परम दयालु, पास छो राजतु रे ॥ जी ॥ ३ ॥

राग सारग (१७)

सारग सजी सारग पर आवे ।

सारग बदनी, सारग सदनी, सारग रागनी गावे ॥ १ ॥
सारग सम णीर की बनाई, सारग अपनो लजावो ।
या छबी अधिक आपोरी दुवारो सारग सबद सुनावे ॥ २ ॥
सारग लकी सारग थे, सारग अग न भावे ।
सारग छोरति सारग मग दो रति रतनकीरति गुण गाये ॥ ३ ॥

श्री राग (१८)

श्री राग गावत सुर किनरी ॥

करत थेई थेई नेम कि आगि, सुधाग सुगीत देवत भमरी ॥ १ ॥
ताल पखावज वेणु नीकि बाजत, पृथक पृथक बनावत सुन्दरी ।
सारग आगि सारग नाचत देखत सुन्दरी धवल वरी ॥ २ ॥
रथ बैठो शिवया सुत आवे, बधावे मानिनी मोती भरी ॥
रत्नकीर्ति प्रभु त्रिभुवन वदित सोहे ताकि राम हरी ॥ ३ ॥

राग असाउरी (१९)

आजू अलि आये नेम नो साउरी ॥

चद्रवदनी मृग नयणी हिलि मिलि ।

या विधि गावत राग असाउरी ॥ १ ॥

मोन मूरत सूरत बनी सुन्दर ।

पुरदर पाछे करत नो छाउरी ॥

जय जय शबद आनन्द चन्द सूर सग ।

या विधि आये चग हलधर भाउरी ॥ २ ॥

किरीट कुण्डल छवि रवि ससि सोहन ।

मोहन आये मण्डप पाउरी ॥

रतनकीरति प्रभू पसूय देखी फिरे ।

राजीमती युवती भई बाउरी ॥ ३ ॥

राग असाउरी , (२०)

बली बन्धोका न करज्यो अपनो ॥

चरन परी परी करु री नोछाउरी ।

लघु वय कह्या तप जपनो ॥ १ ॥

रह्यो न परत छिनू निमेष पलक धरी ।

सोवत देखत सपनो ॥

वाच साच सम्भारो अपनी ।

रतनकीरति प्रभु चयनो ॥ २ ॥

राग केदारो (२१)

कहाँथे मण्डन करु कजरा नेन भरु,

होउ रे वेरागन नेम की चेरी ॥

सीस न मजन देउ माग मोती न लेउ ।

अब पोर हू तेरे गुननी वेरी ॥ १ ॥

काई सु बोल्यो न भावे, जीया मे जु एसी आवे ।

नही गमे तात मात न मेरी ।

आली को कह्यो न करे बाबरी सी होई फिरे ।

चकित कुरगिनी यु सर घेरी ॥ २ ॥

नीठर न होई ए लाल, बलिहु नेन विसाल।
केसेरी तस दयाल भले भलेरी ॥
रतनकीरति प्रभु तुम बिना राजुल।
यो उदास ग्रहे क्यु रहे री ॥ ३ ॥

राग केदारो

(२२)

सुनो मेरी सयनी धन्य या रयनीरे।
पीयु घरि आवे तो जीव सुख पावे रे ॥ १ ॥
सुनि रे विधाता चन्द सन्तापी रे,
बिरहिनी बध थे सपेद हुआ पापी रे ॥ २ ॥
सुन रे मनमथ बतिया एक मुझरे,
पथिक बधू बध थे देहे हानि मुझरे ॥ ३ ॥
सुन रे जलधर करत कहा गाजरे
मे चक भई तुझत न तग्रजू न लाज रे ॥ ४ ॥
सुन रे मेरे मीरा गोद बिठाउ रे,
सारग बचन थे दुख गमाउ रे ॥ ५ ॥
सुनो मेरा कता नही मुझ दोसरे,
मे क्या कीता इतना कहा रोस रे । ६ ॥
शशधर कर सम चन्दन तन लाया रे,
कमर कदरीवर दुख न गमाया रे ॥ ७ ॥
बियोग हुतासन दहे मुझ देहरे,
बीनती चरन परी करु धरी नेहरे ॥ ८ ॥
रे मन बिजोगे भोजन न भावे रे,
उदक हालाहल राग न सुहावे रे ॥ ९ ॥
पीउ आवन की को देवे बधाई रे,
रतन मोतिन का हार देउ भाइ रे ॥ १० ॥
रतनकीरति पीया तोरन जब आया रे,
सजनी सबे मिलि गुन गाया रे ॥ ११ ॥

राग देशाष

(२३)

रथडो नीहालतीरे, पूछति सहे साबन नी बाट।
कहो रे कत नेरे, मुझ नेमे हेले ते स्यामाटि ॥

कइ नोरा नेम जीरे, नीठोर न थाईये ना होला नाट ।
वेगें वलो वाहला वनिता कहे, सो गिरनार नो घाट ॥ १ ॥
सामलि सामला रे, आमला मे हलो मुझस्यु कंत ।
भोलवास्यु कह्यू रे महाजना वचन होये महात ॥
किम परणेवा अवीया रे, किनर सुर सोहत ।
हवे मेहली वन जाता वाहला, सोभासी जर हत ॥ २ ॥
सुणि राजमती रे युवती मुझ मन एता वात ।
मुझ जोतांथ कारे, जिनधर्म जग माहि वारु विख्यात ॥
एकेका भवने नातर रे अन्नर स्या बाधवा मात तात ।
ते माटह अह्मे तह्मे सेवीये रतनकीरति नो नाथ ॥ ३ ॥

(२४)

सखी को मिलाओ नेम नरिंदा ।

ता बिन तन मन योवन रजतहे चारु चन्दन अरु चन्दा ॥ १ ॥
कानन भुवन मेरे जीया लागत, दुसह मदन को फन्दा ।
तात मात अरु सजनी रजनी, वे अति दुख को कदा ॥ २ ॥
तुमतो सकर सुख के दाता करम अति काए मदा ।
रतनकीरति प्रभु परम दयालु सेवत अमर वरिंदा ॥ ३ ॥

(२५)

सखी री नेम न जानी पीर ॥
बहोत दिवाजे आये मेरे घरि, सग लई हलधर वीर ॥ १ ॥
नेम मुख निरखी हरषीयनमू अब तो होइ मनधीर ।
तामे पसूय पुकार सुनी करी गयो गिरिवर के तीर ॥ २ ॥
चन्द बदनी पोकारती डारती मण्डन हार उर चीर ।
रतनकीरति प्रभु भये बैरागी राजुल चित कियो थीर ॥ ३ ॥

राग असाउरी

(२६)

आजो रे सखि सामलियो वाहालो रथ परि रुडो भावे रे ।
अनेक इन्द्र अनग अनोपम उपम एहनी न आवेरे ॥ १ ॥
कमल वदन कमलदल लोचन, सुक चची सम नासारे ।
मस्तक मुगट उगट चन्दन तन कोटि सूरजि प्रकाशा रे ॥ २ ॥

कुण्डल अलक तिलक शुभ शोभा, अधर विद्रुम सम सोहे रे।
दत श्रेणि मुकताफल मानू मीठडे वचन मन मोहे रे ।। ३ ।।

बाहू सकोमल सजनी एहनी, केहनी उपमा दीजे रे।
गज गति वाले मण्डप आवे, भामिनी भामणा लीजे रे ।। ४ ।।

हरिहर हलधर साथे आवे, भावे रुअडी जान रे।
सारग नयनी सारग वयनी गाये मनोहर गान रे ।। ५ ।।

रथ आगलि अप्सरा आणदे छबे नाटिक नाचे रे।
रतनकीरति प्रभु निरखी निरखी त्याहा राजी मन राचे रे ।। ६ ।।

राग असाउरी (२७)

गोखि चडी जू ए रायुल राणी नेमि कुमर वर आवे।
इन्द्र सुरभ नचावता काइ अपछर मगल गावे रे ।। १ ।।

सही सोहासणि मुन्दरी तहने पहरो नव सर हार रे।
नेह ने उठो नवरग घाट रे रथ बसीने आवे छे।
माहरो जीवन जगदाधार ।। २ ।।

काई गाजते ने बाजते माहरा पीउ परणेवा आवे।
राजुल हेडे हरषन्ती काई सखिस्यु रुडु भावे रे ।। ३ ।।

काई तारण आव्या नेमि स्वामी, काई दीठो पशुनो पुकार रे।
रथवाली गिरिनारि गयो रतनकीरति नो आधार रे ।। ४ ।।

राग सारग (२८)

नेमि गीत

ललना समुद्र विजय मुत सामरे, यदुपति नेम कुमार हो।
ललना शिवा देवी तन धन युग केहे अनोपम अवनि उदार हो ।। १ ।।
ललना मस्तक मुकट कनक जर्यो, रवि छवि कुण्डल कान हो।
ललना नव शिख सोभा कहा वरणु,
जब चडियो हे व्याहान रे ।। २ ।।

ललना इद नरिंद गयद चरी गावत मर सधमार हो।
ललना नाचत सुखी अगना, नो सत जी सिगार हो ।। ३ ।।
ललना पच रग पहेनी पटोरी, गोरी राजुल गात हो।
ललना चन्द वदनी मृग लोचनी, चिपु क बिन्दु सोहात हो ।। ४ ।।

ललदा मनिता तक श्रवन दोउ शिर ए खरी अमूल हो ।
ललना कबरी शेष लजामणि नाशा शुक स्यु हो रहो ॥ ५ ॥
ललना दशन अनार अनोपम अधर अरुन परवार हो ।
ग्रीवा सारग सोहवनी उर बबि मुगता हार हो ॥ ६ ॥
ललना नाभि मण्डल कटि केसरी गजगनि लाज्यो मरार हो ।
ललना जानूकदरी पद बीछये नूपूर कुणि तर सार हो ॥ ७ ॥
ललना अग अंग छवि फबि कहा वरणु राजित राजुल बार हो ।
उग्रसेन क मण्डपे ले रही वर कर मार हो ॥ ८ ॥
ललना आयो नीसान बजावते हरि हलधर सब साथ हो ।
ललना सारग देखे दामरी, तब बोल्यो यदुनाथ हो ॥ ९ ॥
ललना सुणि सारथि कहे सामरो पमू वावे बुरा काज हो ।
ललना एति भोजन राजा करे, तुम कारन ए आज हो ॥ १० ॥
ललना जीव दयाग सामरो जान्यो अथिर समार हो ।
ललना रथ फेरी गिरिनार चरे, आई राजुल नारि हो ॥ ११ ॥
ललना सुनतो साह मुझ वीनती, मे दुलनी तुम दास हो ।
ललना करु नो छाउरी साम रे, या मुझ पूरे आस रे ॥ १२ ॥
ललना रतनकीरति प्रभु इउ कहे एको ग्रहे अयान हो ।
ललना सम्बोधी शिखरी गये हरे जीजीया धरी ध्यान हो ॥ १३ ॥

राग मल्हार (२९)

सुणि सखि राजुल कहे, हेडे हरख न माय लाल रे ।
रथ बैठो मोहामणो जीवन यादवराय लाल रे ।
मस्तग मुगट सोहामणो श्रवणे कुण्डल सार लाल रे ।
मुख सोभा सोहामणी, कांति तणो नही पार लाल रे ॥ १ ॥
गज गमनी मृग लोचनी, रायुल रूप अपार लाल रे ।
रतन जडित बाहे वेहषा, कठि एकावल हार माल रे ॥
रथ बैठाने निरखियु, सॉरिग ने तो पास लाल रे ।
वचन सूणी रथ चालियो, पूग्यो गिरिनारि वास लाल रे ॥
सखि कहे रायुल सुणो, नेम गयो गिरिनारि लाल रे ।
श्री अभयनन्दि पद प्रणमीने, रत्नकीर्ति कहे सार लाल रे ॥

राग रामश्री (३०)

सशधर वदन सोहमणी रे, गज गामिनी गुण माल रे ॥
हरिलकी मृग लोचनी रे, सुधा सम वचन रसाल रे ॥
रायुल रति सम वीनवे रे, जीवन जिन यदुराय रे।
सुणि सुणि जिन यदुराय रे, चरि चन्दन चन्द नवि गये रे ॥
नवि गये तात ते माय रे ॥ १ ॥

दशन दाडिम बीज शोभता रे, चम्पक वरण सेहि देह रे।
अधर विद्रुम सम राजता रे, धरती नाथस्यु बहु नेह रे ॥ २ ॥
कीर कोकिल बोल्यो नवि गमेरे, नोव गूथ्यो गमे केश कलाप रे।
नवि गये राग अलाप रे, नवशत करण ते नवि गमे रे ॥ ३ ॥
अन्न उदक निद्रा नोव गये, नवि गम सजनी निसी खरे।
हास्य विनोद महू परिहसो रे, अमृत भोजन लागे विष रे ॥ ४ ॥
विरह दवानल हू वली रे, तु तो त्रिभुवन तारण नाथ रे ॥
बलि वलि पाय पडी विनवू रे, मुन्हे राखो तुम्हारे पास रे ॥ ५ ॥
भोग भव भ्रमण कारण घणु रे, मुणि मुणि रायुल नारि रे।
ते किम ज्ञानवत आचर रे, तु तो ताहरे हृदय विचारि रे ॥ ६ ॥
प्रतिबोधी सामलिये मुन्दरी रे, जइ लीधो गिरिनारि वास रे ॥
रतनकीरति प्रभु गुणनिलो रे, पूरो पूरो मुझ मन आस रे ॥ ७ ॥

राग परजाउ गीत (३१)

नेम जी दयालुडारे, तु तो यादव कुल सिणगार रे।
जग जीवन जगदाधार रे, तह्मे करो ह्मारी सार रे ॥
स्वामि अड वडिया आधार ॥ १ ॥
हु तो हु ती मदिर राज रे, मैं तो हरिनु न जाण्यु काज रे।
तु तो आका अधिक दिवाज रे, हम जाता तुझने लागु लाज रे ॥ २ ॥
कोणे लायो तुझ मर्म रे, जे परण वस कर्म रे।
ते न जणि ससार नो शर्म रे, हवे कोण क्षत्रिय धर्म ॥ ३ ॥
मन्हे हससे सजनी नो साथ रे, केहेस्ये हनेली गयो किम नाथरे।
हू किम रहू अनाथ रे, तहमे देयो अन्तर हाथ ॥ ४ ॥
तु तो सकल साखय आनद रे, तु तो करुणा तरवर कद रे।
तुझ दीठडे मुज आणद रे, कहे रतनकीरति मुणिद रे ॥ ५ ॥

राग श्री राग (३२)

बदेह जनता शरण ॥

दशरथ नदन दुरित निकदन, राम नाम शिव सुख करन ॥ १ ॥
अकल अनत अनादि अविकल, रहित जनम जरा मरन ।
अलख निरजन बुध मनरजन, सेवक जन अघव्रत हुसन ॥ २ ॥
कामरूप करुना रस पूरित, सुर नर नायक नुत घरन ।
रतनकीरति कहे सेवो सुन्दर भव उदधि तारन तरन ॥ ३ ॥

राग श्री राग (३३)

कमल वदन करुणा निलय ॥

सिव पद दायक नरवर नायक राम नाम रघुकुल तिलय ॥ १ ॥
मधुकर सम शुभ अलक मनोहर, देह दीप्ति अघ तिमिर हर ।
कजदल लोचन भवभय मोचन, सेवक जन सतोष कर ॥ २ ॥
अधर विद्रुम सम रक्त विराजित, द्विजवर पक्ति मोक्तिक कलन ।
शीता मनसिज ताप निवारन दीर्घ बाहु रिपु मद दलन ॥ ३ ॥
अमर खचर कर नायक सेवित चरण कमल युगल विमल ।
रतनकीरति कहे शिवपदगामी कर्म कलक रहित अमल ॥ ४ ॥

(३४)

आवो सोहासणि सुन्दरी बृद रे, पूजिये प्रथम जिणद रे ।
जिम टले जनम मरण दुख दद रे, पामीये परम आनन्द रे ॥ १ ॥
नाभि महीपति कुल सिणगार रे, म्अडला मरेवी मल्हार रे ।
युगला धर्म निवारण ठार रे, करयो बहु प्राणी उपगार रे ॥ २ ॥
त्रण्य भुवन केरो राय रे, सुरनर सेवे जेहना पाय रे ।
सोहे हेम वरण सम काय रे, दरशन दीठे पाप पलाय रे ॥ ३ ॥
एक शतय नीलजस रूप रे, विघटचू दीठु त्य ह्यारे रूप रे ।
मन धरीयो बेराग अनूपरे, जे तारे भव कूप रे ॥ ४ ॥

श्री राग (३५)

श्रीराग गावत सारग धरी ॥

नाचती नीलजसा रिषभ के आगे ।

सरीगमपधु–निध-पम-गरी ॥ १ ॥
मूर्छनाता न बधानउ देखाडउ हू मान।
ठेया ठेवन के जू तार मान मृदग करी ॥
घूनीत घघरी बाजे देखत सवर लाजे,
नोसत श्रीराग सोहे सुन्दरी ॥ २ ॥
सगीत रगीन रूप निरखीन चलो भूप,
जय जय जय जिन आनद भरी ॥
नीलजसा बिहाटी पेखी करी करुना,
रतनकीरति प्रभु देखी करी ॥ ३ ॥

राग वसत (३६)

पार्श्व गीत

वणारसी नगरी नो राजा, अश्वसेन गुणधार।
वामादेवी राणी ए जनम्यो, पाश्वनाथ अवतार ॥
विमल वसत फूल लेई पूजो, श्री सकट हर जिन पास।
दर्शन दूरितअघ निवारे पहोचे मन नी आस ॥ १ ॥
नव कार उन्नत जिनवर राय, इद्रनील मणि काय।
इद्र नरेन्द्र नित्य नमे पाय, समरे सकट जाय ॥ २ ॥
मदन गहन दहन दावानल, कालसर्प सुपर्ण।
मान मत्त मातग केसरी, भव्य जीव ने सर्ण ॥ ३ ॥
मिथ्यातम नाशन तू सूर्य सम, लोभ दवानल मेह।
दुर्द्धर कमठ वैरी मद मू की, पाय नम्यो तुझ तेह ॥ ४ ॥
घरणेन्द्र पदमावती करे सेव, भव्य कमलवर भान।
ससार आवागमन निवारो, हु तुम्ह माग् मान ॥ ५ ॥
श्री हासाट नगर सोभा कर, सकलसघ जयकार।
रतनकीरति सूरि अनुदिन प्रणमे, श्री जिन पास उदार ॥ ६ ॥

अथ बलभद्र नी वीनति (३७)

प्रणमी नेमी जीनेन्द्र, सारदा गुण गण मडणीये।
गौतम स्वामीय पाय वदन करू भव खडणीये ॥
सोरठ देश विशाल इद्र नरेन्द्र मनोहरु ए।
सोभावत अपार नर नारि तिहा सुदरु ए ॥

नगर द्वारिका राय रूपकला गुण वारिधि ए।
कामिनी रूप विसाल रोहिणी नाम सुसोमीये ए ॥
साली क्षेत्र वर मे ' चन्द्र परमोहतीए।
॥ २ ॥

स्वपन दीठा ते नार देव पहुपरमु गल ए।
अवतरीया वलदेव त्रीभोवन मोहन पर बल ए ॥
देव की पुत्र उदार नारायण मध वसुरणेए।
माहाराज वर तेह, त्रीण खडना सुघर्म ए ॥ ३ ॥
पद्मनाम बलभद्र चितवता सुख पामीए।
कीधा राज महत भोगवे पुन्य वखाणिये ए ॥
थीयो द्वारिका ना सबे बाधव तव निसराए।
कर्म तणी रे नीरखेव ज्ञानवत दुख वीसर्या ए ॥ ४ ॥
सर्व अचलनो राय तु गो गिरवर सोभतोए।
कोड नवाण सीध्द ते जे त्रीभोवन मोह तोए ॥
श्री नारायण भग वैराग पामी धीर मन।
चारीत्र लीधू वन्य स्यान ऐ त वन ॥ ५ ॥
राम नाम गुणवत पू जता भव नासीये ए।
नामे रोग समूह नाग गजेंद्र सु त्रासीवे ॥
भूत पिसाच ' " शाकनी डाकनी रोग हरे ॥ ६ ॥
लक्ष्मी नारि सुरूप पुत्र धुरधर नादीये ए।
सकल कला गुणवत अभय नदि गुरु वादीये ए ॥
वीनति राम नरेन्द्र रतनकीर्ति भणे भाव धरी।
स्वर्ग मोक्ष नर नारि लहे भणे जे सुरु मन करी ॥ ७ ॥

भट्टारक रत्नकीर्ति

की

कृतियां

श्री भरत-बाहुबली छन्द

मंगलाचरण

स्तुत्वा श्रीनाभेय सुरनरखचरालि राजिपदकमलं ।
रौद्रोपद्रवशमन वक्ष्ये छंदोति रमणीयक ॥ १ ॥
पणविवि पद आदीश्वर केरा । जेह नामे छूटें भवफेरा ।
ब्रह्मसुता समरु मतिदाता । गुणगणमंडित जग विख्याता ॥ २ ॥
बंदवि गुरु विद्यानंदि सूरि । जेहनी कीर्त्ति रही * भरपूरी ।
तस पद कमल दिवाकर जाणु । मल्लिभूषण गुरु गुण वखाणु ॥ ३ ॥
तस पट्टे पट्टोधर पण्डित । लक्ष्मीचन्द्र महाजश मण्डित ।
अभयचन्द्र गुरु शीतल वायक । सेहेर वंश मंडन सुखदायक ॥ ४ ॥
अभयनंदि समरु मनमांहि । भयभूला बलगाडे बांहि ।
तेह तणि पट्टे गुणभूषण । वंदवि रत्नकीरति गत दूषण ॥ ५ ॥
भरत महीपति कृत महीरक्षण । बाहुबली बलवंत विचक्षण ।
तेह तणो करसु नव छंद । सांभलता भणता आणंद ॥ ६ ॥
देश मनोहर कोशल सोहे । निरखता सुरनर मन मोहे ।
ते माहि गाजे अति सुन्दर । शाकेता नगरी नव मन्दिर ॥ ७ ॥

महाराजा ऋषभदेव का शासन

राज्य करे तिहा वृषभ महाभुज । सुख सुखमा जितहंसि तनवानुज ।
जुगलाधर्म निवारण स्वामी । भव भय भंजन शिवपद गांमी ॥ ८ ॥
अंग सुरंग अनूपम राजे । रूप सुरूपें रतिपति लाजे ।
कनक कांति सम काय कलाधर । धनुष पांचसे उच्च मनोहर ॥ ९ ॥
ज्ञान त्रण्य शोभे अति जेहने । कोण कला उपदेशे तेहनें ।
कल्पवृक्ष क्षय जाता जाणी । जेणे सर्व सतोष्या प्राणी ॥ १० ॥
जैनधर्म जेणे उपदेश्यो । जीव जन्तु कोई नवि रेस्यो ।
दीनदयाल दयानो सागर । भावदभंजन भूरि गुणाकर ॥ ११ ॥

रानी यशोमति का वर्णन

गजगामिनी कामिनी कृशअंगी । नयन हरावी बालकुरंगी ।
सारद चारु सुधाकर वदनी । कुंद कुसुमसम उज्जल रदनी ॥ १२ ॥

वजुल वेणी वीणा वाणी । रूपरसे जीती रति राणी ।
अधर अनुपम विद्रुम राता । नलवट केसर तिलक विभाता ।। १३ ।।

नासा सरल सभर कुच सारा । मजुल रुचि मुक्ताफल हारा ।
कदली सार सुकोमल जघा । कटि तट लक लजावित सिघा ।। १४ ।।

प्रथम यशोमति अति अभिरामा । बीजी रम्य सुनन्दा भामा ।
मात जसोमति जे जाया सुत । भरत आदि सो ब्राह्मी सयुत ।। १५ ।।
जनम्यो वीर सुनन्दा माये । बाहुबली सुन्दरी तनुजाये ।
सहु परियण सु राज्य करता । हास विलास विशेष वहता ।। १६ ।।

आशी लाष पूरव सवच्छर । विविध बिनोदेव्योलाविस्तर ।
एक समय नीलजस रूप । देषी मति चमक्यो वृष भूप ।। १७ ।।

ऋषभ का वैराग्य

ऊठ्यो अति वैराग्य विचारी । छडी लछि वहु अतिसारी ।
राज्य तणु आडबर आप्यु । भरत महीपति नामज थाप्यु ।। १८ ।।

भरत को राज देना

पोतनपुरी भुजबली बेसारया । अवर यशोचित तनुज वधार्या ।
च्यार हजार महीपति साथे । लीधो सयम त्रिभुवन नाथे ।। १९ ।।

पच महाव्रत पच समितिसु । पाले जिनपति त्रण्य गुपति सु ।
अति ऊजड अटवी म्हा रहेना । होडे सबल परीसह सेहेता ।। २० ।।

एक दिवस ते राज्य करतो । बैठो भूप सभा सोहतो ।
त्यारे त्रण्य वधामणी आवी । साभलिता सहुने मने भावी ।। २१ ।।

वृषभानथने केवलनाण । प्रगटयु चक्ररयण जिमभाण ।
पुत्र जन्म सामलीयो नरपति । कीधो मत्र सहु मली शुभमति ।। २२ ।।
धर्म कर्म कीजे ते पेहेलु । जिम नवछित सोझे वेहेलु ।
त्यारे भूपति भावधरीने । केवलबोध कल्याण करीने ।। २३ ।।
चरच्यु चक्र कर्यु आडम्बर । पुत्र जन्म उच्छव करी सुन्दर ।
मही साधन मचरीयो नायक । मलीया गजरथ तुरग सुपायक ।। २४ ।।

भरत द्वारा दिग्विजय

पूछवि पडित ज्योतिष जाणा । बर मगल दिन कर्या पयाणा ।
चाल्या चतुर महीपति मोटा । शूर सुभट अति चागण चोटा ।। २५ ।।

जीत्या जोर छखड अखडा । वेरी वहु कीधी बहुरड्या ।
दड्या षड्या गढपति गाठा । त्राठा नाहागजे उपराठा ॥ २६ ॥

गिरि गह्वर जल थल खखोल्या । व्यतर विद्याधर झकझोल्या ।
साठ हजार वरसधरे आव्यो । लच्छि सुलक्षण ललना लाव्यो ॥ २७ ॥

दिन जोइ नगरी पेसता । चक्र न चल्ले सुर ठेलता ।
त्यारें वचन चवे ते चक्री । बोलाव्या मतिसागर मन्त्री ॥ २८ ॥

कहो किम चक्र न पेसे पोले । ते मन्त्री बोल्या अध बोले ।
स्वामी साभलि वचन अम्हारा । आण न मानें बन्धु तम्हारा ॥ २९ ॥

तेम्हा बाहुबली बल पेषे । कोन्हे नवि मन माहे लेषे ।
धीर वीर गम्भीर महाबल । वेरी गज केसरी अति चचल ॥ ३० ॥

निज तेजे तरणी पण झप्यो । एह्वा वचन सुणीनें कप्यो ।
रोष चढयो राजा ते बोले । कोण महीपति म्हारे तोले ॥ ३१ ॥

मारु मान उतारु तेहनु । ग्णारझलावु बहुदल एहनु ।
त्यारे ते मन्त्री सुविचारी । बोल्या भूपति ने हितकारी ॥ ३२ ॥

रहो रहो स्वामी रोश न कीजे । तेहनु पेहेलो लेख लखीजे ।
ते लेई विचारु चर जाये । वाटें कही खोटि नवि थाये ॥ ३३ ॥

जेम तिहाजईने देहेलो आवे । जोईये साज पडूतर लावे ।
एह विचार सभी मनें भाव्यो । आप्यो लेख सुदूत चलाव्यो ॥ ३४ ॥

बाहुबली के पास दूत भेजना

चाल्यो दूत गयो ते तत्क्षण । भेट्या राजकुमार सुलक्षण ।
आप्यो लेख सभा सहु बेठा । वाची वचन चवे ते रूठा ॥ ३५ ॥

कहे रे चर ते किम पग धार्यो । त्यारें बोले बोल विचार्यो ।
मानो आण महीपति केरी । आपे भूमि वली अधिकेरी ॥ ३६ ॥

त्यारे दूत वचनें कलमलीया । बलता वचन चवे ते बलीआ ।
आण अम्हे तेहनी शिर वहीये । जेह थी भवसागर ऊतरीये ॥ ३७ ॥

एहवु कहि चढीआ कैलाशे । लीधो सयम स्वामी पासे ।
त्यारे ते चर पाछो वलीयो । आवीने राजा बिनवीयो ॥ ३८ ॥

स्वामी तेणें सुहु ऋद्धि छडी । सेवा आदि जिनेश्वर मडी ।
एहवु वचन सुणी तह सीयो । मनमाहे वेराग न वसीयो ॥ ३९ ॥

आर्या

कोह केय वसुधा, बभूवुरस्या कियत ईशगणा ।
तं साक न गता सा, यास्यति कथ मयेति सह ॥ १ ॥ ४० ॥

बोल्यो वचन वली वसुधापति । बाहुबलीनी सीज मनोगति ।
चारु सो एक दूत चलावो । तेहनो आशय वेगे अणावो ॥ ४१ ॥
त्यारे ताणे मत्र विचारी । दूत चलाव्यो बहुमति धारी ।
चाल्यो दूत पयाणें रेहेतो । थोडे दिन पोयणपुरी पोहोतो ॥ ४२ ॥

पोदनपुर का वैभव

दीठी सीम सघन कण साजित । वापी कूप तडाग विराजित ।
कलकारजो नल जल कुडी । निर्मल नीर नदी अति ऊडी ॥ ४३ ॥
विकसित कमल अमल दल पती । कोमल कुमुद समुज्जल कती ।
वन वाडी आराम सुरगा । अब कदब उदबर तुगा ॥ ४४ ॥
करणा केतकी कमरष केली । नवनारगी नागर वेली ।
अगर तगर तरु तिदुक ताला । मरल सोपारी तरल तमाला ॥ ४५ ॥
बदरी बकुल मदाक्ष बीजोरी । जाई जूही जबु जभीरी ।
चदन चपक चाउर ऊली । वर वासती वटवर सोली ॥ ४६ ॥
रायणरा जबू सुविशाला । दाडिम दमणो द्राख रसाला ।
फूल सुफुल्ल अभुल्ल गुलाबा । नीपनी वाली निबुक निबा ॥ ४७ ॥
कणपर कामल लत सुरगी । नालीयरी दीशे अति चगी ।
पाडल पनश पलाश महाघन । लवली लीन लवगलता घन ॥ ४८ ॥
बोलें कोयल मोर कीगरा । होला हस करे रवसारा ।
सारस सूडा चचु उतगा । लावा तीतर चारु विहगा ॥ ४९ ॥
कौक चकोर कपोत सरावा । भ्रमरा गुजारव रस भावा ।
कुसुम सुगन्ध सुवासित दिग्मुख । मद मरुत उत्पादित अतिसुख ॥ ५० ॥
दूत चल्यो घन वन निरखतो । पेठो पोल विषय हरषतो ।
दिठी ऊची पोल पगारा । अति ऊडी खाई जल फारा ॥ ५१ ॥
कोशीसें मडित बहुमारा । गोला तालन लागे पारा ।
नगर मझार चल्यो निरखतो । मन सु देवनगर लेखतो ॥ ५२ ॥
शिखर बद्ध जिन मदिर दीठा । जाणे लोचन अमीअ पइठा ।
सुन्दर सत्तखणा आवासा । मृगनयणी मडित सुविलासा ॥ ५३ ॥

मेडी मण्डप बहुमत बारण। घरे घरे लेहेके मगल तोरण ॥ ५४ ॥
ते जोतो मने थयो अचभित। चाल्यो चर चहुदे अविलम्बित।
दीठो माणिक चोक मनोहर। च्यारे पासे विराजित गोपुर ॥ ५५ ॥
मणिमोती हीरा पर वाला। काली बेले अगर अतिकाला।
चोराशी चहुटा हटशाला। चित्र-विचित्र न भाक भमाला ॥ ५६ ॥
कुकुम कस्तूरी कपूरा। चूआ चन्दन चमर सु चीरा।
मखमल लालम सज्ज रसेसरु। बहु शकलात दुरगीटशरु ॥ ५७ ॥
ने सहु नगर तमासा जोतो। राज दुआर जइ चर पोहोतो।
पूछवि पोल धणी गयगतीने। अवर जइ मनीयो रतिपतिने ॥ ५८ ॥

बाहुबली की राज सभा

त्यारे भूपति आप्यु आसन। कुशल प्रश्न कीधु रभासन।
बोल्यो दूत वचन ते वलतु। स्वामी साभलीये कहु चर तु ॥ ५९ ॥
आज कुशल सविशषे तेहने। तम्ह सरषा बाधव छे जेहने।
तो पण तेहने मलचा जईये। जेम जगमाहे मोटा थईये ॥ ६० ॥
तम्ह थी ते बाधव पण मोटो। ते सु मान धरो ते खोटो।
ते माटे सु फोकट ताणो। ते छे त्रण्य दुषडह राणो ॥ ६१ ॥
साभलि सव कहु ते माडी। मु को रोब हईयानो छाडी।
साध्यो विजयारध अतिसुन्दर। धजाव्या विद्याधर वितर ॥ ६२ ॥
म्लेछराय मारी वश कीधा। तेह तणे शिर दण्ड जदीधा।
नेमि विनेमि नमाव्या चरणे। मागध वर्तुन आव्या शरणें ॥ ६३ ॥
तरल तरग पयोनिधि तरीयो बाणे भूरि प्रभासविडरीयो।
गगासिधु नदी अति डोहोली। आपो भेट अनूपम बोहोली ॥ ६४ ॥
रुठ चढीयो हिमवबहराव्यो। नट्टमालि निज सेव कराव्यो।
पुण रमतो वृषभाचल आव्यो। जुगति करी तिहा नाम लिखाव्यो ॥ ६५ ॥
लाट मोट कर्णाट कस्या बस। मेदपाठ मारु लीधा घस।
मानी मरहट्टा ऊजाड्या। सोगल सोर घषगे पाड्या ॥ ६६ ॥
मालव मागधनें मुलतान। कन्नड द्राविड मोड्या मान।
जाहल मलबार सवराड। कामरूप नेपाल सलाड ॥ ६७ ॥
अ ग बग कबोज तिलगा। कुकण केरल कोर कलिगा।
पचाला बगाला बब्बर। जालधर गधार सुग जर ॥ ६८ ॥

पारस कुरुजागल आहीर । कोशील काशी लका तीर ।
रूम सूम हर मजहृद कीधा । कच्छ वच्छ वर मुद्रा दीधा ॥ ६६ ॥
भक्खर देश पड्या भगाणा । हलफलीया हेलाहीदुआणा ।
एवनादि बत्तीश हजार । देश मनावी आण अपार ॥ ७० ॥
बमणा सोल हजार मुगटधर । गाजे लक्ष चोराशी गयवर ।
तत्समान रथ पाचक चल्ले । पाद प्रहारे मेदिनी हल्ले ॥ ७१ ॥
छन्नु सेहेसर माललिअगी । कोड अठार तुरग सुरगी ।
बे अडतालीश कोडि सुगाम । सुन्दरसर शोभित बरचाम ॥ ७२ ॥
कर्वट खेट मटबक राजे । पत्तन द्रोण मुखादिक छाजे ।
नवनिधान मनवछित पूरे । चउद रयण दालिद्दवि चूरे ॥ ७३ ॥
जीणें लच्छि करी घरे दासी । कीर्ति कलाक कुबर्तनि दासी ।
चक्रपति सु बक न थइये । तेसु मानधरी नवि रहीये ॥ ७४ ॥
मान त्यजी तस आणज वहीये । भरत महीपति पद अनुसरीये ।
नही तर तस कोपानल चढस्ये । नाहार भुजबल दल मलस्ये ॥ ७५ ॥
देशे विषय भगाण पडस्ये । सुन्दर पोयणपुर उजडस्ये ।
भिते भीत पडि आथडस्ये । गढ पाडी मे दानज करस्ये ॥ ७६ ॥
मणिमोती हाटक लू टाम्ये । बदि पडचू माणस विघटास्ये ।
नाशी नर देशातर जास्ये । तीहारु लोकह मारथ थास्ये ॥ ७७ ॥
ते माटे डब-डब सहु मूको । भरतपतिनी सेवम चूको ।
एहवा दूत वचन बहु बोल्यो । तो पण मन माहि नवि डोल्यो ।
रोस चढयो बोले रतिनायक । खोटु दूत भवेसु वायक ॥ ७८ ॥

आर्या

पूज्योग्रजोत्रभुवने रीत्यापि न मान्यते मर्येति नृप ।
बाहुबलीत्यभिरुपं मज्ञा मकथ्यते हि वृथा ॥ २ ॥ ७९ ॥

बाहुबली का उत्तर

जे जनपद मुझ आप्यो जिनवर । ते लीधो किम जाये नरवर ।
त्रण्यलोक माहारे दशवर्ति । एहने खण्ड छखण्डज धरती ॥ ८० ॥
तो एहनी किम आणज मानु । साहा मुहु वेसारु कानु ।
इन्द्र चन्द्र नागेन्द्र नमावु । दानव देव दिनेश भमावु ॥ ८१ ॥

मद झरता मय गय सघारु । धसमसता झटपट हठ दारु ।
हणहणता हयवर झकझोलु । रणसायर कल्लोले रेलु ।। ८२ ।।

भूतपिशाच परेत हकारु । व्यतर विद्याधर चक्कारु ।
लडथडता भडघड नच्चाडु । सुत्तो यमराणो जग्गाडु ।। ८३ ।।

भूख्या राक्षस ने सतोष । क्षेतल्लो षेडे बल पोषु ।
रोस चढयो रण अगणे आडु । गडगडता गिरि चरते पाडु ।। ८४ ।।

मुकटबद्ध राजाने मारु । छत्रभग करी नाद उतारु ।
शाकेता नगरी उज्जाडु । म्हारे को नवि आवे आडु ।। ८५ ।।

विद्याधर बाजीगर माया । व्यतर अन्तर चचल छाया ।
ए जीते किम शूर वखाणु । मुझसु आणि भडे तो जाणु ।। ८६ ।।

चक्रे करी कुम्भारज कहीये । दण्ड धरे दरवानज लहीये ।
यमवाहन गजवेशर वाजी । बाल रमति सरषी रथ राजी ।। ८७ ।।

पायक पूतलडा समभासे । ते सार किम मझने त्रासे ।
आण वहु हु तेहनी माथे । जे सुरगिरि अच्यो हरि हाथे ।। ८८ ।।

ते विण आण चहै जे केहनी । तो लाजे जननी जग तेहनी ।
जा जा दूत जबानी करतो । एके बोल न बोले नर तो ।। ८९ ।।

धानो जाय धणी ने केहेजे । मुझ पहलो रण आवो रहेजे ।
नही तर हु आबु छु वहेलो । चापी भूमि पडु तझ पहिलो ।। ९० ।।

वीर वचन साचु हू भाषू । युद्ध करी जगे नाम उ राखु ।
त्यारे दूत गयो शाकेता । जाइ वीनवीयो भरत विनेता ।। ९१ ।।

दूत का वापिस भरत के पास आकर निवेदन करना

बाहुबली तझ आण न माने । तेहना बोल न पोथे पाने ।
जो बली आतो दहेला जाऊ । नही तर बैठा गीत जगाऊ ।। ९२ ।।

ते साभली ने राजा रूठो । हाबु ढील कसी ते ऊठो ।
साजो कटक शटक सु चालो । बाहुबलीनी षडभड टालो ।। ९३ ।।

त्यारे सैन्य-सजाई कीधी । रण जावाने फेरी दीधी ।
मदमाता मयगलमलयता । तिजतरल नेजा झलकता ।। ९४ ।।

सेना की तैयारी

घम-घम घुघर वाला । गुम-गुम गुजताल भमराला ।
घण्टा टकार रव रणकन्ता । लकती ढाल धजा लेहे कता ।। ९५ ।।

मग मगता मद जल मेहेकता । उत्तगा अजनगिरि वन्ता ।
हस्त खडग गहि कर कर भाला ।
दन्तूशल मूशल सम चाला ॥ ६६ ॥

गुलगुलत मद गलता धाता । सादूरे कुम्भस्थल राता ।
चचल चमरालाशु डाला । उद्डा चडा ऊडाला ॥ ६७ ॥

हिलि-हिलि कलित-कलित ह पारा ।
जलथलगामिकछी सारा ।

नीला पीला धवल तुरगा । काला कविला शबल सुरगा ॥ ६८ ॥

रणझणता गल कदल चगा । रग विरग मनोरम मत्त गा ।
आकुड वाकुड आकडी आला ।
कसम सभाकी तलर ढीआला ॥ ६६ ॥

ते उपरे चढी आठ कराला । मारु मरह ढाडढी आला ।
टाकचदलाने चहुआणा । सोलकी राठौड़ सुराणा ॥ १०० ॥

दहिआडा भीनेबोडाणा । परमारा मोरी मकठाणा ।
रोमी मुगल मत्या मुलताना । खान मलिक साथे सुलताना ॥ १०१ ॥

हबशी हूड फरगी फलका । चपल बलोच पलठाण सुठलका ।
चाल्या कटक विकट अति केहरी । अगा टोप शिल्हे सहु पेहरी ॥ १०२ ॥

भास्याँ षचरषजीने पेटी । भरी आभार बईल्ल झपेटी ।
ऊँट कस्या अरडाता वाषर । तम्बू वाड तबेला पाषर ॥ १०३ ॥

भेसा भार भर्या अति भारी । शलकी शाढकजावेफारी ।
चाल्या चित्तभृ तारहवर । ताणे तरल तुरगम रवभर ॥ १०४ ॥

देता डोट झपेटा पाला । छूटा भट छोटा छोगाला ।
दडेवडता दोगा ठयेटाला । मारे गाल फटाकाठाला ॥ १०५ ॥

कडछ्या कु छाला मु छाला । झगझगता झाल्या ते भाला ।
षेडा खङ्ग गदा फरशी धर । चक्र चाप तोमर मुद्गर कर ॥ १०६ ।

खपूआ छुरी कटारी मूशल । डीगा डाग च जाडे चचल ।
होका नाल हवाइ हाथे । वहु बन्धूक चलावी साथे ॥ १०७ ॥

विद्याधर निर्ज्जर मनोहारा । रचित विमान विनोद विहारा ।
देखी सैन्य षडगाडबर । हरष्यो भरत धराटमणीवर ॥ १०८ ॥

चढीयो छत्रपति सुविलास । चोषा चमर ढले ते पास ।
कीधू कूच दमामा वाजे । नादे गड़गड अम्बर गाजे ॥ १०९ ॥

ढम-ढम जगी ढोल धसूके । साभलता कायर मुख सूके ।
दो-दो मद्दल तवल नफेरी । झ झ झल्लरी भम्भा भेरी ॥ ११० ॥
बाजे काहल ताल कशाल । पूरे शख सुवश विशाल ।
बोले भाट भटाइ गाढे । खाखरीग्रा ग्रागल थी काढे ॥ १११ ॥
एहवि ग्रधिक दिवाजे जाये । वोहोला दल पोहोवी नवि माये ।
रुनकटीग्रा ग्रागल थी बाधर । कापी झाड करेते पाधर ॥ ११२ ॥
ऊड ग्रडारा मोटा पाडी । वाकी वाट समारेखाडी ।
ग्रति ग्रलगार करे ते मोटी । वाटे कहीथाये नवि खोटी ॥ ११३ ॥
चोप करी चाल्या चक्रीबल । वेगे जई पोहोता ग्रतुली बल ।
ते पहेलो ग्राव्यो बाहुबली । दीवो चापि खड्यो रणभूतल ॥ ११४ ॥
करयु मुकाम रह्या ते रजनी । उग्यो दिनकर चाली धजिनी ।
त्यारे रणवाजित्र ज वागा । साभलता कायर मन भागा ॥ ११५ ॥
शूर सुभट रहवट खलभलीग्रा । वेहलारण ग्रगणे जइमलीग्रा ।
माडयु युद्ध महीपति चढीग्रा । धीर वीर ग्रागल थी बढीया ॥ ११६ ॥
छूटेशरघोरगी रग माथे । काढि कटारी घ्रीसे हाथे ।
थामे धनुष चढावी पाला । ग्रहमहमिकया न दीये टाला ॥ ११७ ॥
झग झगता भाला भल भोके । भक भकता लोदी मुखे ऊके ।
छूटे नाल हवाई हेका । बन्धूके मारे बहु लोका ॥ ११८ ॥
मोडे मुगर शिल्हे मह फोडे । चचल छत्र चमर वर त्रोडे ।
नाचे धड वाजे रग तूरा । मुग्दर मारि करे चकचूरा । ॥ ११९ ॥
मदगेहे लागज शकल शूडे । पाछल थी हाला पग गूडे ।
धसता धड नाखेत कटकी । झटकेशटकक ते कटकी ॥ १२० ॥
नाना घाय पड्यो बहु प्राणी । बलबलता वहु मागे पाणी ।
हरष्या भूत पिशाच निशाचर । व्यतर वेताला शकाकुलर ॥ १२१ ॥
रुडमुड रग भूमि कराला । रुधिर नदी दीशे विकराला ।
नेजा तेज करता मारे । तो पण नवि को जीते हारे ॥ १२२ ॥

ग्रार्या

सदयँ समर घोर, कृतवन्तो वर्जिता भटा सचिवै ।
कार्यं नृपतिनियोग, विनापि कर्तुं युक्तमिति किंचित् ॥ ३ ॥ ११३ ॥

त्यारे महिमति मन्त्री मलीग्रा ।
मन्त्रविचार विषय ग्रतिकलीग्रा ।
ते सहु मन्त्र विचारो मोटा । जेहना बोल न थाये खोटा ॥ १२४ ॥

स्यान्हे क्षत्रिय भट सहारो । चारु एक विचार विचारो ।
ए बेहु चरम शरीरी राजे ।एहने नवि काटो पण लाजे ॥ १२५ ॥

ए सुन्दर नर मयम पामी । कर्महणीने शिवपद गामी ।
ते थी बात विचारो वेहेली । जेम भाजे सघलीए जे हेली ॥ १२६ ॥

परस्पर मे तीन प्रकार के युद्ध करने का निर्णय

त्रण्य युद्ध त्यारे सहु बेठा । नीर नेत्र मल्लाहव परठ्या ।
जे जीते ते राजा कहीये । तेहनी ग्राग्ग विनय मु वहीये ॥ १२७ ॥

इह विचार करीने नरवर । शल्या सहू साथे मच्छर भर ।
दीठु चारु सरोवर विमल । भरीउ नीरह मित सित कमल ॥ १२८ ॥

जलयुद्ध

अति गम्भीर तरल तरंगे हरि । पेठा भूप ग्रपर पट पेहेरी ।
झीले भूप भर्या बहु ग्राँटे । साहा माहे रमे जल छांटे ॥ १२९ ॥

रमता भरत तगायो रेले । हार्यो सहु जोता जल बेले ।
त्यारे बाहुबली दल हरस्यु । भरत कटक मन मठ ग्रतिनिरस्यु ॥ १३० ॥

नेत्र युद्ध

नेत्र युद्ध करता पण हार्यो । बाहुबली महाबल जयकारयो ॥ १३१ ॥
चाल्या मल्ल ग्रखाडे बलीग्रा । सुरनर किन्नर जोवा मलीग्रा ।
काछ्या काछ कशीकड तागी । बोले बागड बोली वाणी ॥ १३२ ॥

मल्ल युद्ध

भुजा दण्ड मन मु ड समाना । ताडता बषोर नाना ।
हो हा कार करि ते धाया । बच्छोबच्छ पड्या ते गया ॥ १३३ ॥

हक्कार पच्चार पाडे । वलगा वलग करी न त्राडे ।
पग पडघा पोहा वीतल बाजे । कटकडता तरुवर ते भाजे ॥ १३४ ॥

नाठा वनचर त्राठा कायर । छूटा मय गल फूटा मायर ।
गरगडता गिरिवर ते पडीग्रा । फतकरता फणिपति उरीग्रा ॥ १३५ ॥

गढ गड गडीआ मंदिर पडीआ ।
दिगदन्तीव मक्या चलचलीआ ।
जन खल भलीआ बालक छलीआ ।
भय भीरु अबला कलमलीआ ॥ १३६ ॥

तो पण ते धरणी धवढू के । लडथडता पडता नवि चूके ।

भरत द्वारा चक्र फेंकना

त्यारे बाहुबली नवि डोल्यो । हलवेसे चक्री हीदोल्यो ॥ १३७ ॥
देखी बाहुबली भट हसीओ ।
भरत तणा भट अति कशमशीआ ।
वलते रीश करी ने मुक्यु । चक्र बाहुबली करें ढुक्यु ॥ १३८ ॥

मान भंग दीठो नृप रागे । बाहुबली चढीयो वैरागे
धिग धिग यह ससार असार । कदली गर्भ समान विचार ॥ १३६ ॥

बाहुबली का वैराग्य

विषय तणा सुख विष सम भासे ।
तन धन यौवन दिन-दिन नासे ।
सज्जन सहु मलीआ निज कामे । सु कीजे हय गय वर धामे ॥ १४० ॥

घर धंधे पडीयो ते प्राणी । पाप अनन्त करे ते जाणी ।
मेते मूढ पणु सू कीधु । ज्येठा बंधवने दुख दीधु ॥ १४१ ॥

पहवो मनि वैराग धरीने । भरतपती सु अरज करीने ।
निज राजे महाबल वेसार्यो ।
क्रोध लाभ मद मदन निवार्यो ॥ १४२ ॥

छडी ऋद्धि गयो जिन पासे । लीधी संयम भव भय त्रासे ।
बरस एक मरयादा कीधी । अन्न उदकनी बाधा लीधी ॥ १४३ ॥

बाहुबली की तपस्या

प्रतिमा योग धर्यो मनमाहे । उभा रही आलंबित बाहे ।
ध्यान धरे बहु जीव दया पर ।
नवि बोले नवि चाले मुनिवर ॥ १४४ ॥

आँष न फरके रोम न हरषे । वनसावज आवीने निरखे ।
वनचर तनुऊ घसता दीसे । तो पण मुनि न चढे ते रीसे ॥ १४५ ॥

नग्न सु भिल्ल घसे ते भल्ली । देह चढी नाना विध वल्ली ।
विष विकराल भुजग भयकर । लबित गल कदल अति सुन्दर ।। १४६ ।।

कान विषय माला ते कीधा । पषीयडे बहुपरे दुख दीधा ।
वरसाले बहु बीज झबूके । तो पण ध्यान थकी नवि चूके ।। १४७ ।।

सघन घनाघन अम्बर गाजे । झझावात असेहेलो वाजे ।
लाबी झड माडीने दरषे । दादुर जल देषीने हरषे ।। १४८ ।।

माता मोर करे रगरोल । बापीयडो बोले पीउ बोल ।
खलखल नीर बहेते कोतर । भरीया वारि सरोवर दुस्तर ।। १४९ ।।

झर-झर बरसे रात अधारी । झूरे विरही नर नवनारी ।
जे रे हेतो वर चित्र अवासे । ते ऊभो बाहेर चोमासे ।। १५० ।।

धू जे वनचर जाभी टाढे । नीलु वन न रहे हिम साढे ।
नवि सूये बेसे दढ सवर । नवि ऊढ नवि पेहेरे अम्बर ।। १५१ ।।

जे सूतो निशि ललना सगे । ते शीयाले सह हिम अगे ।
जे पड रस नव भोजन करतो । त वनवासी अनशन धरतो ।। १५२ ।।

अति उन्हाले लू बहु वाजे । तरस थकी नवि पाछो भाजे ।
दाझे देह तपे रवि मस्तक । तो पण न चले बोल्यु पुस्तक ।। १५३ ।।

त्रण्य काल कीधु तप दुर्द्धर । तो पण मान न थाये जर्ज्जर ।
वरस दिवस पूगाते जे हुँ । आवी भरत नम्यो पदनेहुँ ।। १५४ ।।

जपे भरत विनय मने आणी । मू को मान हईयासु जाणी ।
मुझ सखा पोहोवीतल केता । हवा हमे नेछे अण देता ।। १५५ ।।

तु मुनि मण्डन मझ मद खण्डन ।
जनमनरजन भव भय भजन ।
कर करुणा करुणामय सागर ।
मुझ अपराध क्षमो गुण आगर ।। १५६ ।।

मन थी शल्य तजो मुनिनायक । जिम प्रगटे केवल सुखदायक ।
इम क्षमावी चोल्यो नरवर । जग वेगे पोहोतो कोशलपुर ।। १५७ ।।

बाहुबली को केवल ज्ञान होना

धरयु ध्यान हवे मुनि ज्यारे । केवल प्रकट थयु ते त्यारे ।
भाव घरी भवियण सम्बोधे । कर्म कलक कला न दिऊधे ।। १५८ ।।

जय-जय भुजबलि नमित नरामर।
सकल कलाधर मुगति वधूवर।

रचना काल

सवत सोलसमे सतसहे। ज्येष्ट शुकल पक्षे तिथि छहे ॥ १५६ ॥
कविवर वारे घोघा नयरे। अति उत्तग मनोहर सुघरे।
अष्टम जिनवर ते प्रासादे। साभलीये जिन गान सुसादे।
रतनकीरति पदवी गुण पूरे। रचिया छद कुमुद शशि सूरे ॥ १६० ॥

कलश

उत्कट विकट कठोर रोर गिरि भजन सत्पवि।
विहत कोह मदोह मोहतम अघ हरण रवि।
विजित रूप रति भए चारु गुण रूप विनुत कवि।
धनुष पाचसै पचवीश वर उच्च तनुछवि ॥ १६१ ॥
समार सरित्पति पार गत,
विवुध वृन्द वन्दित चरण।
कहे कुमुदचन्द्र भुजबली जयो,
सकल सघ मगल करण ॥ १६२ ॥

इति श्री बाहुबली छद वेग्रक्षरी समाप्त

ऋषभ विवाहलो

समरवी सरसति घो मुझ शुभमति,
करो वर वाणी पसाउ लोए ।
प्रथम तीर्थंकर आदि जिनेश्वर वरणवू तास बिवाहलोए ।।
जे नर नारिए भासए सारिण,
साभलसे मन नीरमलीए ।
पामसे सुख घणा वांछित मनतणा,
भवि भवि नवल वलीए ।। १ ।।

उलावो—

वलीय धणुसु बखाणीए जाणीए भूनले नामए ।
सरस सीम सोहमणि धन वन अनुपम गामए ।।
झलहले नीर भर्या सरोवर, कमल परिमल महे महे ।
हस मारस रमे रगे, नदी नीरमल जलवहे ।। २ ।।

चाल

नाभिराजा एव मरुदेवी राणी

देश कोशल वर तिहा सुरपनि पुर,
सम सोहे नगर रलीया मणु ए ।
कोशला सुन्दर सतखणा मन्दिर,
सुरे वरवाणु करु गढ़ तणु ए ।। ३ ।।
माणिक चोकए चतुर सुलोकए,
बहु टा चोराशी जिहा नव नवाए ।।
भोग पुरदर नर रुपे रतिवर,
कामिनि कठे कोयलपिय ।। ४ ।।
राज रगे करे महिपति नाभि राजा नय भलो ।
चउदमो कुलकर मकल सुखकर जगत जाणे गुण निलो ।
तस पटराणी कविवर-वाणी चतुर मरुदेवी भली ।
अति मधुरवाणी रुपरवाणी रति हरावि रसकली ।। ५ चाल ।।

स्वप्न दर्शन .

एके समे सुन्दरी पाछली सखी शरवरी,
सोलसपन रूडा नीरखती ए।
पहिलोए गजवर मदझर गिरिवर,
सरषो देवीने मनि हरषतीए ॥ ६ ॥
बीजे धुरधर सबल चपलतर धवल नवल ते मनोहरए।
सहज सोहामणो पामीए त्रीजले हरी वरए ॥ ७ ॥
हसित पदमासने जेठी हस्त पदे सोहए।
सपन चौथे लाछि दीठी जगत जन मन मोहए ॥
लहिकति लाबी फूल माला झबर गुंआरव करें।
पाचमे परियल मनमगाटमे नाशिकाने सुख करे ॥ ८ ॥
छवेस रजनीकर अमीझर सुखकर सोल कलाकर छाजतोय।
कुमुद विकामए दश दिशा भासए, छट्ठेय रजनो राजतोय ॥
उगतो दिनकर सकल तमोहर कमल सोहाकर सातमेए।
मछ युगल जलमाहि रमे झल झलते अवलोकिनु आठमोए ॥ ६ ॥
अभ पुरण कलश नवमे सरोवर दशमे भर्यू।
लहे लहे लहेरि नीर निरमल, कमल केशर पीजर्यु ॥
लोल जल कल्लोल गाजे, वारि राशी अग्यारमे।
वर हेम वडीउ रयणजीडनु सिहासण ते बारमे ॥ १० ॥
देव विमानए चित्र निधानए,
रचना मनोरम तेरमेए।
नाग भुवन जन जोता हरे तनु मन,
समणे सोहामणे चउदमेए ॥ ११ ॥
राशी रतन तणी पच वरण गणी,
जगमग करतीए पनरमेए।
अनल अधूमए तेजे घग्ग घूमए,
ऊच शिखायें दीने सोलमेए ॥ १२ ॥
मरुदेवी जागी प्रिय कन्हे गइ सपन फल पुछू वली।
नरपति कहे तब पुत्र जिनवर हसे मनणे होती रली ॥
साभली राणी सफल जाणी मलयती थाकि गइ।
नाना विनोदे दिवस जाता न जाणे हर्ष पत थइ ॥ १३ ॥

हवि मास आषाढ तणो बीजो वदि पक्ष।
तिथि बीज मनोहर वार विराजित कक्ष ॥ १४ ॥

चवियो अहमिंदर अवतरीयो जिनराज,।
मरुदेवी कुषि धन्म सफल दिन आज ॥ १५ ॥

देवियों द्वारा माता की सेवा—

इन्द्रादिक आव्या कीधू गर्भ कल्याण।
मति थोडी सारु सुकरीये रे ते वखाण ॥ १६ ॥

गया हरि निज थानकी मूकी छपन कुमारी।
जिन माय तणी सेवा करवा मनोहारी ॥ १७ ॥

एक नित नहरावे, एक पखाले पाय।
एक वीजणडे चटकावे सटके नाखे वाय ॥ १८ ॥

एक वेणी समारे, नयणे काजल सारे।
एक पीयल काढे एक अमरी सणगारे ॥ १६ ॥

एक चोसर गूथे, एक आपे तबोल।
एक पगते पीले, कुकम सुरग रोल ॥ २० ॥

एक आछा अबर पहरावे सुरनारी।
एक नलवटि केशर तिलक करे ते समारी ॥ २१ ॥

एक रयण अरीसो देखाडे जिनमाय।
एक वेणवजोडे एक सुकठि गाय ॥ २२ ॥

एक नवरस नाटक नाचे ने नव रगे।
एक बात कथारस कहे सकल सहेली सगे ॥ २३ ॥

इम हसता रमता पूगाते नवमास।
मधूमासे जनम्या पहोती सहुनी आस ॥ २४ ॥

ढाल दो

इन्द्र एव देवताओ द्वारा जन्माभिषेक

आसन कपीया इन्द्रनाए, जाणीयो जिन तणो जनम।
नमो नमो जय जिणंद ॥ १ ॥

इन्द्र एरावण गजि चढ्या ए ॥ साथि चाल्या सुरवृद ॥ नमो० ॥ २ ॥

मरुदेवि मदिर आगणेए, आवीया सकल सुरेन्द्र। नमो० ॥ ३ ॥

इन्द्र आदेश लेई सचीइए, गई जिन मातने पास। नमो० ॥ ४ ॥

आणीया जिन जी इन्द्राणीइए, आपीवा इन्द्र तें हाथि । नमो० ॥ ५ ॥
इन्द्र उसगे बैसारीयए, चामर छत्र सोहत । नमो० ॥ ६ ॥
आगीले अमर विलासनीय, नाचती घरीय आणद । नमो० ॥ ७ ॥
धवल मगल बहु मगल गावतीय, बाजता वाजिम कोडि । नमो० ॥ ८ ॥
मेरु शिखरे पधरावीयाए, कीधलु जनम विधान । नमो० ॥ ९ ॥
क्षीर सागर तणे जले भरयाए, कनक कलश सुविसाल । नमो० ॥ १० ॥
जिन प्रभु उपरि ढालीयाए, नहवण करयु मनरगी ॥ नमो० ॥ ११ ॥
जय जयकार अमर करे ए, दीधलूं वृषभ जी नाम ॥ नमो० ॥ १२ ॥
अमल अबर मणि मण्डनेए, शचीये करो सणगार ॥ नमो० ॥ १३ ॥
रूप अनूपम पेखतीए, नयण नृपति नवि थाय ॥ नमो० ॥ १४ ॥
जन्म महोछव हरी करीए, हयडले हरष न माय ॥ नमो० ॥ १५ ॥
मेरु थकी ते पाछा वल्याए, आविया जिनपुरी चन्द्र ॥ नमो० ॥ १६ ॥
जिन प्रभु जननी ने आपीयाए, स्तुति करी गया सुरराय ॥ नमो० ॥ १७ ॥
जनम महोछव जिन तणोए, हरषीया सूरि कुमुदचन्द्र ॥ नमो० ॥ १८ ॥

ढाल तीन

बाल क्रीडा—

आवो रे जोवा जइये, सखि मरुदेवी मल्हारे रे ।
गुण सागर रलिआमणो, ए त्रिभुवन तारणहारे रे ॥ १ ॥

सो सूरज सो चादलो, स्यो रतिराणी भरतारे रे ।
सुर नर किन्नर मोही रह्या,
काई रूप अनोपम सार रे ॥ २ ॥

सोहासणि सुर सुन्दरी, जिन हरषधरी हुलरावे रे ।
भामणडलि भामिनी, काई गीत मनोहर गावेरे ॥ सो० ॥ ३ ॥

रमत करावे रगस्यु, सुरनारि के सिणगारे रे ।
दे आशीस ते रुअडी, तु जय जय जगदाधारे रे ॥ सो० ॥ ४ ॥

दिन दिन रूपे दीपतो, काई बीज तणो जिम चन्दरे ।
सुर बालक साथे रमे, सहु सज्जन मनि आणदरे ॥ सो० ॥ ५ ॥

सुन्दर वचन सोहामणां, वोले बादुयडो बाल रे ।
रिम झिमबाजे घूघरडी, पगे चाले बाल मरालरे ॥ सो० ॥ ६ ॥

जीन सेहजे विद्या सीखीयी,

काई सकल कला गुण जाणीरे ।

योवन बेस विराजता, काई तेजे जीत्यो भाण रे ।। सो० ।। ७ ।।

एक समे सुत देखीने, नाभि राजा करे विचार रे ।

रिषभ कुवर परणावीयो,

जिन सफल थाये अवतार रे ।। सो० ।। ८ ।।

त्यारि बोल्या नाभि नरेन्द्ररे, तेडीय मन्त्री आणदरे ।

मझ मनें एह्वो उमाहरे, कीजे रिषभ बिवाहरे ।। ९ ।।

जो जो कन्या सुगुण सुरूपरे, इम कही रह्या भूप रे ।

वचन चवे परधान रे, साभलो चतुर सुजाण रे ।। १० ।।

कछ महाकछ रायरे, जेहनू जग जस गायरे ।

यशोमति सुनन्दा की सुन्दरता

तस कुअरी रूपे सोहेरे, जोता जन मन मोहेरे ।। ११ ।।

सुन्दर वेणी विशाल रे, अधर शशि सम भाल रे ।

नयन कमल दल छाजेरे, मुख पूरण चन्द्र राजे रे ।। १२ ।।

नाक सोहे तिलनु फूल रे, अधर सुरग तणू नही मूल रे ।

थन ६न कनक कलश उतग, उदरे राजे त्रीबली भग रे ।। १३ ।।

बाहूलता लाबी तेह केरे, हाथे रातडि रुडी झल केरे ।

कु० कदली सरखी चगरे, पगपानी अलतानो रग रे ।। १४ ।।

रूपे रम्भ हरावी रे, जेहने तोले रति पणनावे रे ।

प्रथम यशोमति नाम रे, बीजी सुनदा गुण अभिराम रे ।। १५ ।।

तेहने रिषभ कुअर परणावोरे, मोकली माणस नरत करावो रे ।

एह विचार सभा मन भाव्योरे, ततक्षण वाह दूत चलावो रे ।। १६ ।।

तेणे जइ विनवीया राय रे, वात साभलता हरष न माय रे ।

हरख्या अतेउर परिवार रे, सज्जन कीधो जय जय जयकार रे ।। १७ ।।

कीधू विवाह वचन प्रमाण रे, घरे आप्यु कुलट दान रे ।

वेहेलो दूत जइने आव्योरे, पाणी ग्रहण वधामणी लाव्योरे ।।

जय जय रत्न कीरति मुनिन्द्ररे, पाठ कमल रवि कुमुदचन्द्र रे ।। १८ ।।

पाचवीं ढाल

हवि साजन सहू नहोतरीआ आव्या परवारे परवरीया ।
इन्द्र आव्या तेध सप्त सता, सूर गुरुनें साथे हसता ॥ १ ॥

विवाह मण्डप

आवी इन्द्राणी सूरनारी, करे हास विनोद ते भारी ।
चारु मण्डप जन मन मोहे, बहू मूल चन्दु रुआ सोहे ॥ २ ॥
टोडे तलीआ तोरण ते लहे के, हेम थभ तेजें बहु झलके ।
वेदी वारु करीने समारी, चोरी चित्र महा मनोहारी ॥ ३ ॥
दीशे चारु मोतिनि माला नाना रयणनो झाक झमाला ।
रभा रोपि मण्डपने आगलि, पवने फरके ध्वज आवलि ॥ ४ ॥
हवे जमणवार साभल ज्यो,
चित देह उरआ लोमा करज्यो ।
पील्या चोषा कचोले भरीया सकट बासहु नोहु वरीआ ॥ ५ ॥
आगणे मण्डप सुविशाल, घेरि च्यार पासे पटशाल ।
तिहा चतुर सोहासणी नारी, माड्या बेशणा ने महु हारी ॥ ६ ॥
मोटा पाटला नहो डग डगता, सोहेते कीया बेपासे लगता ।
माडी आडणी रूपा केरी, थाली बावन पलनीगुनेरी ॥ ७ ॥
मूक्या रजत कचोला आणी, सोहे मखर सुनानी चलाणी ।
चारु विनय करि तेडाबीजे, चालो चालो असूरन कीजे ॥ ८ ॥
देव पूजीया प्रथम अघोली, आव्यु साजनु सहुमली टोली ।
वर चित्र पीताम्बर पेहेरी, हाथे झारी सोहे रूपेरी ॥ ९ ॥
पग धोई करीनि लगतें, बेट्ठु साजनु ते यथा गुणतें ।
च्यार थीज भली परि बेठी, श्रीसवामि पदमनि पेठी ॥ १० ॥

विविध प्रकार के स्वादिष्ट व्यंजन

आप्या हाथ परवालवा नीर, प्रीसे नारी नवल पेहेरी चीर ।
खाजा षाजा ताजा घी गलता,
झीणो फीणी डोठा परिमलता ॥ ११ ॥
देखीहे समीहे इट्ठु हीसे, वेसणीये जलेबी प्रीसे ।
रुचि लागे घेवरने दीठा, कोलहापाक पतासा मीठा ॥ १२ ॥

दूध पाक घणा साकरीया, सारा सकरपारा कर करीया ।
कोटा मोति अमोदक लावें, दलीया कसमसीआ भावे ॥ १३ ॥

अनि सुरवर से बरूआ सुन्दर, आरोगे भोग पुरन्दर ।
प्रीमे पापड मोटा तलीया, मुरी आला अति उजलिया ॥ १४ ॥

सीरे सरसीये राई दीधी, मेल्हे केरी अथाणे कीधो ।
आम्बां केर काकड स्वाद लागे,
लिंबू जमता जीभ रस जागे ॥ १५ ॥

नीलू आतीला छम काव्या, मू की तेल मरी भम काव्या ।
घी सोड़ा घणू करी छोल्या, लाबी चीरी करीने मोल्या ॥ १६ ॥

रूडो राइये वघारले दीघो, रसनाइ भल्यो रसलीधो ।
भगी आदाल्हो लवघरी, जमता फली लागे सारी ॥ १७ ॥

वृताकनु शाक समार्यू, राइ तुम धरे हुहि वास्यू ।
लावे सेवनु माई सटके, खांड खोबा भरि मूके लेखे ॥ १८ ॥

मामा करता नामे घी खलके, भर्या डाबरिया ते भलके ।
माडा मोटी मोठि क्षीर पोली,
जमे रसिया भबोली भबोली ॥ १९ ॥

तली वेढ़मीये वाकटाल्यो, मन गमते बडे आक वाल्यो ।
लापसीये मन ललचाये, धारी पूरीये नृपति न धायो ॥ २० ॥

राजभोग कमोदनो कूर, जीरा साल सुगधनो पूर ।
चोखी दाल तूव परिनी सोहे, टून सरषी पीली मनमोहे ॥ २१ ॥

वाठ घाट राईत मतमता, कढी माहि मरीचमचमता ।
पांका कूट जीरा सु वधारया,
बीजा शाक ते आगलू हास्या ॥ २२ ॥

सथरा दही कातली आला, धोलुआ मोहि लवण जीराला ।
दुध कढी आचलाणी भरीया, गले घट घट ते ऊतरीया ॥ २३ ॥

चलु लीधा पछे सहु साथे, मुख शुद्ध करी सली हाथे ।
आव्या माडवे साजनु हसता, वारें वारे वधाण ते करता ॥ २४ ॥

खेर सार सोपारी ते रग, पानएलची सखर लविंग ।
मांहि मुक्यू कपूरब रास, जिन आवे मोटे रूडो वास ॥
पछे आड अनूपम कीधी, नाभि राजाये आग्यना दीधी ॥ ढा ॥ २५ ॥

छठवीं ढाल

जिन इन्द्राणीये नह्लारावीया, पछे कीधोरे वरनें सिणगारके
वर वारु सोभतो ।। १ ।।

आदिनाथ का शृंगार

माथे रेषूव भर्यो भलो, रुडु नलवटेरे सोहे तिलक अपार के ।। २ ।।
आखिरे काजल सारीआ, गाले कीधलु रे रक्षानु इधाण के ।। ३ ।।
कान रे कुडल झलकता, तेजे जितीआरे पूरण शशि भाण के ।। ४ ।।
बाजु-प्रबध विराजता, हइये लहेक तोरे मणि मोतीनो हार के ।। ५ ।।
हाथें बाधी रुडी राखडी, आगलीये रे घाल्या बेढवे ध्यार के ।। ६ ।।
केडे कणीदोरो बेसतो, पगे झाझरे करे रण झणकार के ।। ७ ।।
सेहे जे रुप सोहामणू, वलीये हस्यारे बहु भूषण सार के ।। ८ ।।
रूपेरे त्रिभुवन मोहीउ, हवे करीयेरे वली घणु सु बखाण के ।। ९ ।।
इद्र अमरी मलु साजनु, आडि चादलोरे करे सजन सुजाण के ।। १० ।।
केशरना कर्या छाटणा, वली छाटेरे ते गुलाबना नीर के ।। ११ ।।
फोफल पान आये घणा, मरदनी यारे नाखे शीतल समीर के ।। १२ ।।

सातवीं ढाल

इन्द्र अणाव्योरे घोडली सोहे ।
पचवरण वारु अग ।। रिषभ घोडे चडे ।। १ ।।

विवाह के लिए घोडी पर चढना

जोवा मलीया छे आसुर नर वृन्द । रिषभ घोडे चढे ।। २ ।।
कनक पलाण विराजतु, जेर बन्ध अनोपम तग ।। रिषभ ।। ३ ।।
चोकड ले चित चोरीयु, गेले रण झणकतो चग ।। ४ ।।
रग विरग सोली घणी, जग मोहे ते वाग अमूल ।। ५ ।।
रत्न जडयु मषीआ रड्यु वचे झलके सु नाना फूल ।। ६ ।।
शीस भरीरे सोहासणि, सोहे सुन्दर श्रीफल हाथ ।। ७ ।।
इन्द्र प्रभूकरि लीधला, घोडे सटक चढ्या जगनाथ ।। ८ ।।
माथेरे छत्र विराजतु, हरि ढाले चमर बेहु पास ।। ९ ।।
लुण उतारति बेहेनडी, सहु विघन गया ते नासि ।। १० ।।

एरावण सणगारियो, चाल्यो आगल झाक झमाल ।। ११ ।।
कोटेरे घटारण कति बाजे, धम धम घूघर माल ।। १२ ।।
भ्रमर भ्रमरी नाचे रगसु, माहो माहि करे घणी केलि ।। १३ ।।
गध्रव राग करे घणा, वाजे ताल-परबालज मृदग ।। १४ ।।
बाशलि वेण मनोहर वाजे नाना छन्द सुरग ।। १५ ।।
ढोल दमा मारे गड गड़े, रुडा सारणाइ नासाद ।। १६ ।।
वाजे पच सबद ते सोहामणा, भ्राहे तबलन फेरीना नाद ।। १७ ।।
भूगल मेरी मदन भेर, ते साभलता सुख थाय ।। १८ ।।
भाट भणे वीरदावली, त्यारि दान अनेक देवाये ।। १९ ।।
रग विरग वे साजनु, तीह साबे लानो पार ।। २० ।।
इम उछव करताते घणो, वर आवीयो तोरण बार ।। २१ ।।
दोखी उलट मन मो धरे, बहु भव्य कुमुदचन्द्र राय ।। २२ ।।

आठवीं ढाल

विवाह

मोड इन्द्राणीए बाधीयोए, ,नीमालीरे पोकीआ अरधीया देव ।
साहेलीयेपो कीया आरधीया देव,
नाक साही वर निरखीयोए ।। १ ।।
घाट घाल्यो तत क्षेव, माहि दामाहि वेसारीए ।। २ ।।
अन्तर पडधरु जाम, कन्या बेमारिए बीजटिए ।। ३ ।।
लगन वेला थइ नाम, सकल आचार गुरुये करयोए ।। ४ ।।
काली गाँठी सावधान हस्ते मेला वहवोए ।। ५ ।।
कीधला अवर विधान, देव वाजिश्र ते वाजीआए ।
फुलनी वृष्टि अपार गीत गाये सुन्दरी ए ।। ६ ।।
सुर करे जय जयकार, चोरीये रीति सहु कीधलीए ।
वरतीआ मगल च्यार, विनम वारु कस्यो जुगतिसु ए ।। ७ ।।
आपीयां अढलिक दान, लोक व्यवहार ते सहु कर्‌यो ए ।। ८ ।।
सज्जन दीधला मान, अधिक आडम्बर आवीआ ए ।। ९ ।।
बहुयर आपणे घेरि, मनना मनोरथ सहु फल्याए ।। १० ।।
उछव थयो भलिपेरि, इन्द्र उछव करि घरि गयाए ।। ११ ।।
मन माहि हरष न माय हास विनोद करे घणाए ।। १२ ।।
राज्य करे जिन राय, ताहेलोये कीया, अरधीया देव ।। १३ ।।

नवीं ढाल

आदिनाथ का परिवार

पाले अनूपम न्यायरे जोन्हा सेवे सुरनर पाय।
त्रिण भुवन जस गायके, अभिनवो राजीयोरे ॥ १ ॥

भोगवे मनोहर भोगरे, नाना विध सुख सयोग।
धन धन कहे छे सहु लोग के, जगे जश गाजियोरे ॥ २ ॥

यसोमतीये जाया पुत्ररे भरतादिक सो सुचित्र।
ब्राह्मी तनया पवीत्र के, जगमाहि जाणीयेरे ॥ ३ ॥

बाहुबली बलवन्त रे, सुन्दरी बेहुने सोहत।
जनम्यो सुनन्दाये सतके, रूप वरवाणीयेरे ॥ ४ ॥

सेवे त्रिभुवन सर्व रे मन माहि न धरे गर्व।
त्र्याशी लाख पूरब के, व्येल्या भोगसु ए ॥ ५ ॥

चिन्तन एवं वैराग्य

एक समयते भूपरे, दीखी नीलजश रूप।
जाणी अथिर सरूप के, मन धर्‌यु योग स्यु रे जी ॥ ६ ॥

धिग धिग एह ससार रे, बहु दुख तणो भण्डार।
जुठो मल्यो सहु परिवार के, को केहु नही रे ॥ ७ ॥

राज्ये नहि मुझ काज रे, सु कीजे सेना साज।
भोगे त्रपति न आज के, लग शौवली सहीरे ॥ ८ ॥

क्षण क्षण खूटे आयरे, योवन राख्यु नवि जाय।
स्यु कीजे महीराय के, तणी पदवो भलीरे ॥ ९ ॥
काले पडसे कायरे, नहि रासे बापने माय।
न थसे कोइ सहाय के, नरक जता वली ॥ १० ॥
नाना योनि मझार रे, भमीयो भव धणी एक बार।
न लह्यो धर्म विचार के, लोभ न पर हर्‌यो रे ॥ ११ ॥
नही पालो व्रत आचार रे, जीव कीधा पाप अपार।
विषय वलुधो गमार के, हा हुतो फर्‌यो रे ॥ १२ ॥
इम धरी मन वेराग रे, कर्‌यो मोह तणो परित्याग।
कोसु लाग न भाग उदासी जिन थयो रे ॥ १३ ॥
भरत ने आप्यू राजरे, महिपतिनु मुक्यु साज।
चरित्र लेवाले काज के, अखय बड़े गयारे ॥ १४ ॥

दसवीं ढाल

तपस्या

च्यार हजार राजस्यु ए, माल्हतडे लीधलो सयमभार।
सुणे सुन्दर, लीधलो सयमभार ।। १ ।।
राज मुक्यु अण लोकनुए ।। मा ।। सफल कीधो अवतार ।। सु ।। २ ।।
आवीआ इन्द्र आणद सु ए ।। मा ।। सुर करे जय जयकार ।। सु ।। ३ ।।
जय जग जीवन जग धणीए ।। मा ।। जय भय सागर तार ।। सु ।। ४ ।।
त्रीजु कल्याणक तपत तणु ए ।। मा ।।
करि गया हरि सुरलोग ।। सु ।। ५ ।।
सयम लेइ छमासनोए ।। मा ।। लीधलो स्वामीये योग ।। सु ।। ६ ।।
पारणे भामरें उतारयाए ।। मा ।। कोइ न जाणें आचार ।। सु ।। ७ ।।
इम करता छह महीना गयाए ।। मा ।। नही मलें शुद्ध आहार ।। सु ।। ८ ।।
एकदा ढेचरी ने गयाए ।। मा ।। श्रेयास रावने धामि ।। सु ।। ९ ।।
आहारनी प्रगति दीठी भली ए, तिहा रह्या त्रिभुवन स्वामि ।
एक बरसे कर्‍यू पारणु ए, ईक्षुरस अमीय समान ।। १० ।।

आहार

लेइ आहार जिनवरे कर्‍यु ए ।। मा ।। रुयडलु अक्षयदान ।। सु ।।११।।
श्री जिनवर पछे वने गया ए ।। मा ।। योग लीयो त्रणकाल ।। सु ।।१२।।
बार प्रकारे तप करे ए ।। मा ।। जिम आहारनु यू गति दीठी ।। १३ ।।
तिहा रह्या त्रिभुवन स्वामी सू टल कर्म जजाल ।। १४ ।।
ध्यान धरे अति नीर्मलुए ।। मा ।। अचलमन मेरु समान ।। सु ।। १५ ।।

कैवल्य प्राप्ति

घातीया कर्म्मनो क्षय करीए ।। मा ।। अपनु केवल ज्ञान ।। सु ।।१६।।
समोसरण अमरें रच्यु ए ।। मा ।। बार सभाने सोहत ।
धर्म उपदेश दे उजलोए ।। मा ।। सुरनर चित मोहत ।। सु ।।१७।।

निर्वाण

विहार करीनें सबोधयाए ।। मा ।। भव्य प्राणी तणा वृद ।। सु ।।१८।।
अचल अष्टापदे जाइ चढ्याए ।। मा ।। केवली आदि जिनेंद्र ।। सु ।।१९।
तिहा अई स्वामीये टालीयु ए ।। थाकता कर्म नु नाम ।। सु ।।२०।।
निर्वाण कल्याणक सुर करु ए ।। मा ।। पामीया मुगति वर ठाम ।। सु ।।२१।।

रचनाकाल एवं रचना स्थान :

सवत सोल अठ्योतरे ए ।। मा ।। मास आषाढ़ घनसार ।।२२।।
उजली बीजरलीयां मणीए ।। मा ।। अतिभलोते शनिवार ।। सु ।।२३।।
लक्ष्मीचन्द्र पाटें निरमलाए ।। मा ।। अभयचन्द्र मुनिराय ।। सु ।।२४।।
तस पदे अभयनन्दि गुरुए ।। मा ।। रत्नकीरति सुभकाय ।। सु ।।२५।।
कुमुदचन्द्रे मन उजलेए ।। घोघा नगर मझारि ।। सु ।।२६।।
रिषभ विवाहलो कीघलोए ।। मा ।। सीखसेजे नर नारि ।। सु ।।२७।।
तेहने घरें आणंदह स्येए ।। मा ।। पोहोचसे* मनतणी आस ।।२८।।
स्वर्ग तणा सुख भोगविए ।। मा ।। पामसे मुगति विलास ।। सु ।।२८।।

इति ऋषभ विवाहलो समाप्त ।

नेमिनाथ का द्वादश मासा

(३)

आषाढ मास

मास आसाढ सोहामणो जी घन बरसे घोर अंधकार जी ।
नीदये नीर वहे घणा बारु मोर करे किंगार जी ।। १ ।।

मदिर आवो मोहन मुझ उपरि धरिय सनेह जी
एकलडी घरि किम रहु माहरी पल पल छीजे देहजी ।। २ ।।

सावन मास

श्रावण नाले सरवडा त्यारिं थर थर धूजे शरीर जी ।
राति अंधारि झूरता किम करी मनि धरी धीर जी ।
मदिर ।। ३ ।।

भाद्रपद मास

भाद्रवडो भरि गाजियो लवे बीजली वारो वार जी ।
त्यारिं साभरे वारो वार जी त्यारि साभरे प्राण आधार जी ।। ४ ।।

आसोज मास

आसो दिवस सोहामणो, नही कादवनो लवलेश जी ।
वाटलडी रलिया मणी, किम नाविया नेम नरेश जी ।। ५ ।।

कार्तिक मास

कातिय दिन दिवालिना सखि घरि-घरि लील विलास जी ।
किम करु कत न आवियो ह्लेस्यु करिये घरि वासि जी ।। ६ ।।

मगसिर मास

मागशिरे मन नवि रहे, किमकरि मोकलू सदेस जी ।
मनि जागू जे जई मिलू, धरि योगण करो वेस जी ।। ७ ।।

पोष मास

पोसिउ सपडे घणी पीउडे माग्यो तप सोस जी ।
कोणस्यु रोस धरी रहु, करमने दीजे दोस जी ।। ८ ।।

माघ मास

माहि न आणी मोहनी, किम निठोर थया यदुराय जी ।
प्रेमे पधारो पम्हणा, हू लागु हू लालन पाय जी ।। ९ ।।

श्रावण मास

फागुण केसू फूलियो नरनारी रमे वर फाग जी ।
हास विनोद करे घणा, किम नाहें धर्यो वेराग जी ॥ १० ॥

चैत्र मास

कोयलडी टहूका करे, फल लहे अम्बा डाल जी ।
चैत्रे चतुर चित चालिये, किम तजीइ अबला काल जी ॥ ११ ॥

वैशाख मास

वैशाखें तडको पडे लयु , दाझे कोमल काय जी ।
ते माटियाउ धारिये एह योवन्या दिन जाय जी ॥ १२ ॥

जेठ मास

नीट जेठोडी नवि रहे, घरि पथियडा सहु आवे जी ।
नेमि न आव्या किम करु , मुन्हे धरियण न सुहावे जी ॥ १३ ॥

उजल जिन जर चढ्या, रह्या ध्यान विषय चितलावजी ।
जय जय रत्नकीर्ति प्रभु, सूरी कुमुदचन्द्र वलि जाय जी ॥ १४ ॥

(४) नेमिश्वर हमची

श्री जिनवाणि मनि धरु रे, आपो वचन विलास ।
नेमिकुमर गुण गायस्यु तो, हैडे धरी उल्हास ॥ हमचडी ॥

हमचडी हलि हेलि रे, घरि करिये नवरग केलि ।
राजमती वर नेमिकुमरते, गाता मनि रग रेलि रे ॥ १ ॥

हमची हमची सहिय साहेली, आवो करि सिणगार ।
समुद्र विजय सुत रगे गाइये, जिम तरीये ससार रे ॥ २ ॥
सोरठ देश सोहामणो रे, वन वाडी आराम ।
गोधन कलि करता दीसे, रधिया रुडा गाम रे ॥ ३ ॥
निरमल नीर भर्या ते सरोवर, फूल्या कमल अपार ।
परिमल ना लीघा ते भमरा, उपरि करे गुजार रे ॥ ४ ॥

सुन्दर सोहे सारडा रे, बगला बेठा टोले ।
हसा हसी केलि करता, चकवा चकवी बोले रे ॥ ५ ॥

वाटलडी रलिया मणी रे, पथियडा पथि चाले ।
सबल मीस सोहामणी तो, अणगमतु नही चाले रे ॥ ६ ॥

ते माहि नवरगी नगरी द्वारवती वर ठाम ।
गढ मढ मदिर मालियडा, तो निरखता अभिराम रे ॥ ७ ॥

जेहनें पासे सागर राजे, गाजे कुल कल्लोल।
मणि मोती पर वाली भरीयो जल चरना झक झोल रे ।। ८ ।।
राज करे तिहा राजीयो रे, रूपे रति भरतार।
साभलियो बलियो अति, कलियो पातलियो सकुमाल रे ।। ६ ।।
त्रण्य खण्ड नो राणो जाणो, नारायण तस नाम।
बलभद्र बन्धव मनी सोहे, सोभागी गुण धाम रे ।। १० ।।
नेमि कुवर स्यु प्रेम धरता, करता क्रीडा हासु।
अह निसि गीत विनोद वहता, घडियन मुके पासु रे ।। ११ ।।

वनक्रीडा के लिए जाना

तेह तणी रमणी सुर रमणी सारखी सोलह हजार।
तेहस्यु हास विलास करता, सफल करे अवतार रे ।। १२ ।।
एहेवे शरद समे ते आव्यो, खेले अबला बाल।
निरमल कमल-कमल बन सोहे, बोले बाल मराल रे ।। १३ ।।
त्यारि नेमि कुअर कान्हुयडो, बलग हलधर हाथि।
सत्यभाभा रा हीने रुखमणी, अतेउर सहु साथे रे ।। १४ ।।
वन क्रीडा करवाने चाल्या, वाटे रमता रहेता।
मनरगे मनोहर नामे, कमला कर जई पुहता रे ।। १५ ।।
झटकेस्युं झीलीनि कलिया नेमिकुवर ने पहेला।
मोतियडु नाखी ने पहेर्या बीजा अबर हेलारे ।। १६ ।।
हसता हसता टोलि करता नेमिकुअर महाराजे।
पोतीयहुनी चोवा आप्पु सत्य भामा ने काजेरे ।। १७ ।।
ते तो रीस करनी बोली, सत्यभाभा अति गहेली।
एवहूं हासू न कीजे मझस्यु हूं पटराणी पहेली रे। १८ ।।
जेणे सारिग धनुष चढाव्यु हेला शख बजाइयो।
नागतणी सेजडिये सूतो, नागिनही बीहाव्यो रे ।। १६ ।।
तेहनू पोतीयडु नीचोऊ अवर न जाणू कोई।
मोटा सरिसू मान न कीजे, मनस्यु विमासी गोई रे ।। २० ।।
नेमिकुमारे साभलीयू रे, तेहनू वचन अटारू।
मनस्यु एह विचार कर्यो जी, एहनु मान उतारो रे ।। २१ ।।
तिहाँ थकी ते पाछा वलिया आव्या नगर मझारि।
नेमिकुअर आयुधशालाई पेठा मच्छर भारि रे ।। २२ ।।

नेमिनाथ द्वारा शस्त्र बल दिखाना

सटकें धनुष चढाव्यु लटके, नाग शय्याइ सूता।
पूर्‌यो शख निशक करीने, लोग कर्‌या भय भूता रे ॥ २३ ॥
तरु कटू कडीया गोपुर पडिया गढ मोटा गड गडिया।
भट भड भडिया भय लड थडिया, दो गति दड बडिया रे ॥ २४ ॥
गिरि थर हरिया फरिग सल सलिया कायर ते करिण करिणया।
सुर खल भलिया ससि रवि चलिया, सायर ते झल हलियारे ॥ २५ ॥
फूटा मान सरोवर मोटा, वचचर सघला नाठा।
हरण हणता हयबर ते छुटा माता मयगल त्राठा रे ॥ २६ ॥
राज सभाई बैठो राजा, साँभलि ने कल मलियो।
नगर विषै कोलाहल करीयो कोरण महीपति बलिओरे ॥ २७ ॥
तेहनू वचन सूरणी बलभद्रे बल तो उत्तर दीधो।
सत्यभामा ना बचन थकी ए, नेमिकुमारे कीधु ॥ २८ ॥
त्याहारि ते मन माहि सक्यो कीधो मनस्यु बिचॉर।
राजा अहमारु लेस्ये बलियो, करस्ये मान उतार रे ॥ २९ ॥
बलता हलधर बधव बोल्या ए राजेस्यु करस्ये।
वर वेराग तरण ए कारण, पामीय सयम लेस्ये रे ॥ ३० ॥
ते सामलीने मनस्यु रचीयो सयम लेरण सच।
उग्रसेन कु अरिस्यु कीधो, तस ह्वीह्वा परपचारे ॥ ३१ ॥
घरि आवीने मण्डप रचियो सज्जन सादर करीया।
छप्पन कोडि यादव नो हतरिया परिवारि परिवारिया रे ॥ ३२ ॥
जमरणवार कीधी ते युग ते, सतोख्या नरनारी।
जान जवाने काजि केहवी, नादरणी सिरणगारि रे ॥ ३३ ॥

राजमती का सौन्दर्य

रुपे फूटडी मिन्ने जूठडी, बोले मीठडी वाणी।
विद्रुम उठडी पल्लव ग्रोठडी, रसनी कोटडी वरवाणी रे ॥ ३४ ॥
सारग वयणी सारग नयणी, सारग मनी श्यामा हरी।
लकी कटि भमरी वकी, शकी हरिनी मारिरे ॥ ३५ ॥
सिथडलो सिदूरे भरियो, केसर टीला करियां।
पानतणी बीडीये मुखडा, भरिया ते रग बग्या ॥ ३६ ॥
झग मग कानि झालि झबूके, उगलिया नग जडिया।
अबला सबला नाग वलाया, सु दर सुनें घडिया रे ॥ ३७ ॥

सार पदकडी कबु कोठडी, मोटडी फूली फावे ।
सेस फूलनू मूल न थापे, सिंथडलो सोहावेरे ॥ ३८ ॥

भूमकडु झमके ते झाझु, जोता मनडु मोहे ।
बारु बीटी मिली अगूठी नल वट टीली सोहेरे ॥ ३९ ॥

जपकली पीला रतलिया मादलिया मचकाला ।
मोती केरो हार मनोहर भूमकडा लटका लारें ॥ ४० ॥

राखडली रढियाली जालि जोता हैडे हरखी ।
खीटलडी मीटलडीराखी, खते, जोवा सरीखी रे ॥ ४१ ॥

हाथे चूडी रगे रुडी, काकरण चागरण चोटा ।
बाहोडली सरीखा बेहरखडा, मलियां वलिया मोटा रे ॥ ४२ ॥
कर करि यालिका रेली रे, मोरली मोहन गारी ।
माणिक मोती जडी मनोहर बेसरनी बलिहारी रे ॥ ४३ ॥

धम धम धम के घुघरडारे, बीछीयडा ते वाजे ।
रमझम रमझम झाझर झमके, का बीषल के राजे ॥ ४४ ॥
किसके पहेरण पीत पटोली नारी कुजर चीर ।
किसके आछा छापल छाजे सालू पालव हीर रे ॥ ४५ ॥
किसके अमरी रग सुरगी किसके नीला कमषा ।
किसके चूनडियाला चमके किसके राता सरिषा रे ॥ ४६ ॥
किसके पहिरण जाद रचायो किसके चोली चटकी ।
किसकी अतलस उची उपे, रग तणो ते कटको रे ॥ ४७ ॥
किसका चरणा घुधरियाला, किसका ते वषीयाला ।
किसका कमल बना कनियाला, किसका ते मतियालारे ॥ ४८ ॥
मयगल जिम मलयती वाले, कोयल सादे गाये ।
धवल मगल दीये मनरगे, मुनि जनवि चलावे रे ॥ ४९ ॥

बारात का प्रस्थान

हयवर गयवर रथ सिणगार्‌या, पायक दल नही पार ।
बाकी बहेले हरि जोतरिया, चग नणो झणकार रे ॥ ५० ॥
पालखडी चकडोल सुखामरण बेठा भोग पुरन्दुर ।
चाली जाँन कर्‌यो आडबर, मलिया सुरनर किन्नर रे ॥ ५१ ॥
समुद्रविजय सिव देवी राणी, हरि हलधर सहु माहे ।
नेमिकुमर ने परणावाना भरिया ते उछाहे रे ॥ ५२ ॥

नेमिकुयर हाथीयडे चढिया, माथे खुप विराजे।
काने मणि कुडल देखीने, वीर जनीकर लाजे रे ।। ५३ ।।
बेनडली बेठि ते पासें भाभणडा उतारे।
रूप कला देखी ने जेहनी, रतिपति हैडे हारे रे ।। ५४ ।।
गाये गीत सोहामणि रे, दीये वर आशीस।
जय जगजीवन वर जय जग नायक, जीवो कोडि वरीस रे ।। ५५ ।।
धन धन मात पिता से धन धन, धन धन यादव वश।
जिहा जग मडण भव भय खडन, अवतरिया जिन हस रे ।। ५६ ।।
ढमके ढोल दमामा मद्दल, सरणाई वाजत।
पच शब्द भेरी न फेरी, नादि नभ गाजत रे ।। ५७ ।।
वाटि हास विनोद करता, चाल्या यादव वृद।
वहेला जई जूनेगढ पहोता, सज्जन मन आणद रे ।। ५८ ।।
उग्रसेन आदरस्यु साहमू कीधे ते मल भासे।
लाजते वाजते वारू पहोता ने जनवासे रे ।। ५९ ।।
धसम सती धाई ते त्याहारि साथे सहीयर वाल्ही।
गोखि चढी ते वन जोवाने, राजामतीमनि ह्याल्ही रे ।। ६० ।।

बरात देखने की उत्सुकता

राजमती बोली ते त्याहारि, साभलि सहीयर मोरी रे।
जो तु नेमिकुअरि देखाडे, हू बलिहारि तोरी रे ।। ६१ ।।
चामर छत्र टलेबे पासे रूपे मोहन गारो।
हाथिडा उपरि जे बैठो उपेलो वर ताहरो रे ।। ६२ ।।
राजीमती ने वचन सुणीने, साहमू जोवा लागी।
नेमिकुयर वर देखि हरषि प्रेमे मनस्यु जागी रे ।। ६३ ।।
त्यारि ते तेडावी माये राजीमती न्हवरावी।
सणगारी सहूने मन गमती, रूपे रभ हरावी रे ।। ६४ ।।
तेहवे तेज मणी आखडलली बहेल कदेता मटकी।
राजीमतीना मन माहे ते वारे बारे खटकी रे ।। ६५ ।।
जेहवे लगन समय थयो जाणी, हरषे सहु हल फलिया।
नेमिकुअर परणवा चढिया, साहमासोनी मलिया रे ।। ६६ ।।
ते देखी सका ता चाल्या, मन माहि चल चलिया।
आगलि थी गाढेगा गरता, रडता पशुआ साभलिया रे ।। ६७ ।।

वाडि भरी राख्या ए स्याहने, पूछ्यु ते जग दीशो ।
तह्य गोखनें कारणि स्वामी, ते सघाला मारीसेरे ।। ६८ ।।
तेहनू वचन सूणी ने स्वामि, मन माहि कल मलिया ।
घिन धिग परणे व ने माथे नेमिजी पाछा वलिया रे ।। ६९ ।।

नेमिनाथ का वैराग्य

मन माँहि वेराग धरीने, मूक्यो सहु ससार ।
नेमिकुयर सयम लेवाने, जई चढिया गिरनारि रे ।। ७० ।।
सहसा वन मा सयम लीधू, कीधू आतम काज ।
त्यारि तप कल्याणक कीधु आव्या ते सुरराज रे ।। ७१ ।।
कोलाहल बाहिर साभलिने, सु सु करती उठी ।
पूछी सजनी वल तु बोली, नेमि गया गिरि रूठी रे ।। ७२ ।।
तेडे वचने पुहवीतलि, लोटे जग अछाडे ।
हैडूताडे चोली फाडे, रडती गढि आडेरे ।। ७३ ।।

राजुल का विलाप

रोसें हार एकाबल ओडे, चटके चूडी फोडे ।
ककण मोडे मन मचकोडे, आपण पू व खोडेरे ।। ७४ ।।
केमे अणगल पाणी नाख्या, के तरु चोडी डाल ।
साधु तणी निंद्या मे कीधी, जूठा दीधा आल रे ।। ७५ ।।
के मे रजनी भोजन कीधा,के मे उबर खाधा ।
के मे जीव दया नही पाली, वन माहि दव दीधा रे ।। ७६ ।।
के मे बहुयर बाल विछोह्या, के मे परधन हरिया ।
कद मूलना' खल्यण करिया कि मे व्रत नही धरिया ।। ७७ ।।
के मे कूडा लेखा कीधा, खोटी माया माडी ।
छाना पाप करया ते माटे, नेमि गया मभ छाडी रे ।। ७८ ।।
इम कहेती लडथडती पडती, अडबलती वल वलती ।
अ ग वलू रे मनस्यु झूरे, आखि आसू ढलती रे ।। ७९ ।।
लावी नही बोले बाला रातिपण नवि सूये ।
मनुस्यु भूख तरस नही वेदे, जिन जिन जपति रोवे ।। ८० ।।
किम करी दिननि गमस्यु पीउडा तुम पाखि कम करस्यु ।
जिम जल पाखे माछलडी तिम विलखी थइने मरस्यु रे ।। ८१ ।।
वाडि बिना जिम बेलि न सोहे, अर्थ विना जिम वाणी ।
पडित बिन जिम सभा न सोहे, कमल बिना जिम पाणी रे ।। ८२ ।।

राजा विरण जिम भूमि न सोहे, चद्र बिना जिम रजनी ।
प्रीउडा विन जिम अबला न सोहे, साभलि मोरी सजनी ।। ८३ ।।

ते स्याहिरि सजनीं ते बोली शोक न कीजे गहेली ।
एह थी रुडो वर परणावू उठिखूसी था वहेली रे ।। ८४ ।।

राजीमती वल तीते बोली फटि मु डीस्यु बोली ।
नेमि विना नर सघला बीजा, माहरे बधव तोले रे ।। ८५ ।।

सहीयर सहू समझावी थाकी ते मनमा नवि आवे ।
उजल गिरि जई सयम लीघु, ते सघलो जगि जाणे रे ।। ८६ ।।

राजीमति ते व्रत पाली ने, पहोती स्वर्ग दुवारि ।
नेमि जिनेश्वर मुगति गया ते, कुमुदचद्र जयकारे रे ।। ८७ ।।

भट्टारक श्री कुमुदचद्र कृत श्री नेमिश्वर हमची गीत समाप्त

राग मारुणी गीत (५)

गीत

नेमजी ने वालो रे भाई, जादव जीने वालो रे भाई ।।
हु तो योवन भरि किम रहेस्यु रे, बलि विरह तणा दुख सहेस्यु रे ।
घरि कोण थकी सुख लहेस्यु रे, हसी बात कोह्ने जइ कहेस्यु रे ।। १ ।।
तह्मे जूउ जूउ मनस्यु विचारी रे कोई नारि तजै निरधारी रे ।
पूछो वाटे जता नर नारी रे, कोई कहेस्ये ए बात न सारी रे ।। २ ।।

तु तो अण्य भुवन केरो राणो रे, रखेरी सहैयामा आणो रे ।
अह्मस्यु एवडु तह्मे ताणो रे, अह्मे दासी तह्मारडी जाणो रे ।। ३ ।।

जूउ आवे छे यादव राय रे, बली रोवे शिवा देवी माय रे ।
बिलखी थई पूठई धाय रे, वछ तुझ बिना मे न रहे वाय रे ।। ४ ।।

तह्मे मोहन दीनदयाल रे, तह्मे जीवन दया प्रतिपाल रे ।
किम छाडो छो अबला बाल रे, इणि वाते देसे सहुगाल रे ।। ५ ।।

तह्मे जग जीवन आधार रे, तह्मे मन वाछित दातार रे ।
ताहरा गुणनो न लाभे पार रे, ताहरा वचन सुधारस सार रे ।। ६ ।।

ताहरा सुरनर प्रणमे पाय रे, ताहरु नाम योगीश्वर ध्याय रे ।
ताहरा गुण इन्द्रादिक गाय रे, सूरी कुमुदचन्द्र बलि जाये रे ।। ७ ।।

राग सारंग (६)

सखी री अब तो रह्यो नहि जात ।।

प्राणनाथ की प्रीत न विसरत, क्षुनु क्षुनु क्षीजत गात ।। सखी री० ।।१।।

नाहि न भूख नही तिसु लागत, घरहि घरहि मुरझात ।

मन तो उरझ रह्यो मोहन सु सोबन ही सुरझात ।। सखी री० ।।२।।

नाहि ने नीद परती निलिवासर होत बीसुरत प्रात ।

चन्दन चन्द्र सजल नलिनीदल मद मरुत न सोहात ।। सखी री० ।।३।।

गृह आगन नु देख्यो नही भावत दीन भई विललात ।

विरही वाउरी फिरति गिरि, गिरि लोकन ते न लजात ।। सखी री०।।४।।

पीउ बिन पलक कल नहीं जीसकू न रुचत रसिक जु बात ।

कुमुदचन्द्र प्रभु सरसदरस कु नयन चपल ललचात ।। सखी री० ।।५।।

राग सारंग (७)

किम करी राखु माहारु मन्न ।

जिन तजी गयो रे सेसा वन्न ।।

मयण वृथा मुन्हे अन्न न भावे, सामलिया वीण झूरू ।

आसडली मुन्हे नेम मलानी कोण जुगति करु पुरु ।। किम० ।। १ ।।

भूषणभार करे अति अगे, काम कथा न सुहावे ।

कुमुदचन्द्र कहे तेम करो जेम, नेमि नवल घर आवे ।। किम० ।। २ ।।

राग मलार (८)

आलीरी आ वरखा रित आजु आई ।

आवत जात सखी तुम की तह्न, पीउ आव न सुध पाई ।।आ०।। १ ।।

देखीत तम भर दादुर दरकारे, बसत हे झरलाई ।

बोलत मोर पपईया दादुर, नेमि रहे कत छाई ।आ०।। २ ।।

गरजत मेहु कुदीत अरु दामिनि, मोपे रह्यो नही जाई ।

कुमुदचन्द्र प्रभु सुगति बधुसु, नेमि रहे वीरमाई ।आ०।। ३ ।।

राग नट नारायण (६)

आजु मे देखे पास जिनेन्द्रा ।। टेक ।।

सावरे गात सोहामनी मूरत सोभित सीस फणेंदा ।।आजु०।। १ ।।

२/कमठ माहामद भजन रजन, भविक चकोर सुचन्दा ।
१/पाप तमोपह भुवन प्रकासक उदित अनूप दिनेंदा ।।आजु०।। २ ।।
भुविज दीछिजपति दिनुज दिनेसर सेवित पद अरवेंदा ।
कहत कुमुदचन्द्र होत सबे सुख, देखत वामानन्दा ।।आजु०।। ३ ।।

राग भैरव (१०)

जय जय आदि जिनेश्वर राय, जेहने नामे नव निधि थाय ।
मन मोहन मरुदेवी मल्हार, भवसागर उतारे पार ।।जय०।। १ ।।
हेमवरण अति सुन्दर काय, दरसण दीठे पाप पलाय ।।जय०।। २ ।।
युगला धरम निवारण देव, सुरनर किंनर सारे सेव ।।जय०।। ३ ।।
दीनदयाल करे दुख दद, कुमुदचन्द्र वादे आणद ।।जय०।। ४ ।।

राग भैरव (११)

चन्द्र वरण वादो चन्द्रप्रभ स्वामी रे ।
चन्द्रवरण पचम गति पामी रे ।। १ ।।
मोह महाभट मद दल्यो हे लारे ।
काम कटक माहि कीधा जेणे भेला रे ।। २ ।।
विघन हरण मन वाछित पूरे रे ।
समर्या सार करे अध चूरे रे ।। ३ ।।
घोघा मण्डन चन्द्रप्रभ राजे रे ।
जेहनो जस जग माहि वारु गाजेरे ।। ४ ।।
परम निरजन सुर नमे पाय रे ।
कुमुदचन्द्र सूरी जिन गुण गाय रे ।। ५ ।।

राग कल्याण : (१२)

जन्म सफल भयो, भयो सुकाज रे ।
तन की तपत टरी सब मेरी, देखत लोडण पास आजरे ।।जन्म०।। १ ।।
सकट हर श्रीपास जिनेसर, वदन विनिजिते रजनी राज रे ।।
अक अनोपम अहिपनि राजित, श्याम वरन भव जलधियान रे ।। २ ।।
नरक निवारण शिवसुख कारण सब देवनी को हे शिरताज रे ।
कुमुदचन्द्र कहे वाछित पूरन, दुख चूरन तु ही गरीबनिवाज रे ।। ३ ।।

राग कल्याण (१३)

चेतन चेतत किउ बावरे।

विषय विषे लपटाय रह्यो, कहा दिन दिन छीजत जात आयरे ।। १ ।।

तन धन योवन चपल सपन को, योग मिल्यो जेस्यो नदी नाउ रे ।।

काहे रे मूढ न समझत अजहु, कुमुदचन्द्र प्रभु पद यश गाउ रे ।। २ ।।

राग कल्याण चर्चरी (१४)

थेई थेई थेई नृत्यति अमरी, घुघरी सु धमकार।
भमरी अमर गण नचावे ।।

सरीगम धुनि सुसप्त स्वर विराज राग रग।
तान मान मिलित वेणु बसरी बजावे ।।थेई।। १ ।।

धु धुमि धुधुमि ध्वनी मृदग चग तालवर उपाग।
श्रवण अति सोहावे ।।

जय जिनेश नत नरेश शची सुरचित चारु वेश।
देश देश कुमुदचन्द्र, वीर ना गुण गावे ।।थेई।। २ ।।

राग कल्याण चर्चरी (१५)

वनज वदन रुचिर रदन काम कोटिरूप कदन।

श्रृणु सुवचो रटति राज नन्दनी ।। वनज ।। १ ।।

स्वीकृत यदि तज्यते यद्भवति किं कुल धर्म एष इति।

मुदा निधान तदनु मन्द स्कदीनी।

कृपा कूप विनत भूप प्रिया धुनानु गृह्यता।

कुमुदचन्द्र स्वामी मुदा सुधा स्कदनी ।। २।।

राग कल्याण चर्चरी (१६)

श्याम वरण सुगति करण सर्व सौख्यकारी ।।

इन्द्र चन्द्र मानवेन्द्र वृन्द चारु चचरीक।
चुं बित चरणारवृंद पाप ताप हारी ।।श्याम।। १ ।।

सकल विकट संकट हरन हस तट।
सुहर्ष कारण शेष अक धारी ।।

पास परम आस पूरी कुमुदचन्द्रसूरी।
जय जय जिनराज तुं भववारि राशि तारी ।।श्याम।। २ ।।

राग देशाख . (१७)

मास्युरे इम कीधु माहरा नेमजी अण समझे किम जाय ।
तोरण बढीने पाछा वलतां लोक हसारत थाय ॥आंचली॥ १ ॥

अह्यने आस हती अतिमोटी, नेमिकुमार परणीस्ये ।
मास अधमास इहा राखीने, मन गमतु ते करीस्ये ॥आ०॥ २ ॥

आपासे अति उची मेडी, पाछलि छे हाट श्रेणी ।
ते उपरि थी नगर तमासो, जो इस्ये जालिये हेरी ॥आ०॥ ३ ॥

बोली टोली टोल करता गीत साहेली गाये ।
हास विनोद कथा रस कहेता, दिन जातो न जणाइ ॥आ०॥ ४ ॥

आवो आवो रे मोहन मदिर माहरे, रीझइ मन माहरु ।
बालेक आखडली मचकावत सूजाये छे ताहरु ॥आ०॥ ५ ॥

तह्यनेंसू वलि वलि वीनवीइ तम्हे छो अन्तरयामी ।
रहो रहो रसिक वलो तुह्ये पाछा, कुमुदचन्द्र ना स्वामी ॥आ०॥ ६ ॥

राग धन्यासी (३८)

मे तो नरभव बाधि गमायो ।

न कीयो तप जप व्रत विधि सुन्दर ।
काम भलो न कमायो । मैं०॥ १ ॥

विकट लोभ ते कपट कूट करी ।
निपट विषै लपटायो ॥

विटल कुटिल शठ सगति बेठो ।
साधु निकट विघटायो ॥मैं तो०॥ २ ॥

कृपण भयो कछु दान न दीनो ।
दिन दिन दाम मिलायो ॥

जब जोवन जजाल पड्यो तब ।
पर त्रिया तनु चित लायो ॥मैं तो०॥ ३ ॥

अन्त समे कोउ सग न आवत ।
झूठिहि पाप लगायो ॥

कुमुदचन्द्र कहे चूक परी मोहि ।
प्रभु पद जस नही गायो ॥मैं तो०॥ ४ ॥

राग धन्यासी . (१९)

प्रभु मेरे तुम कुं एसी न चहीये ।।
सघन विघन घेरत सेवक कु ।
मौन धरी किउ रहीये ।।प्रभु०।। १ ।।
विघन हरन सुख करन सबनिकु ।
चित चिन्तामनि कहीये ।।
अशरण शरण अबन्धु बन्धु ।
कृपासिंधु को बिरद निवहीये ।।प्रभु०।। २ ।।
हम तो हाथ बिकाने प्रभु के ।
अब जो करो सोई सहिये ।।
तो फुनि कुमुदचन्द्र कहे शरणागति की ।
प्रभु सरम जु गहीये ।।प्रभु०।। ३ ।।

राग धन्यासी (२०)

आजु सबनी मि हू बडभागी ।
लोडण पास पाय परसन कु , मन मेरो अनुरागी ।।आजु०।। १ ।।
वामा नन्दन वृजिनि विहडन, जगदानन्दन जिनवर ।
जनम जरा मरणादि निवारण, कारण सुख को सुन्दर ।।आजु०।। २ ।।
नीलवरण सुर नर मन रजन भव भजन भगवन्त ।
कुमुदचन्द्र कहे देव देवनीको, पास भजहु सब सत ।।आजु०।। ३ ।।

राग श्री राग (२१)

वन्दे हं शीतल चरण ।।
सुरनर किन्नर गीत गुणावली, मतुल रुच भव भयहरण ।।वन्दे०।। १ ।।
निज नख सुखमा चित द्विजपति चय, मुदित मुनि निश्चित शरण ।
जन्म जरा मरणादि निवारण,
नत कुमुदचद्र श्री सुख करण ।।वन्दे०।। २ ।।

राग असाउरी · (२२)

अवसर आजू हेरे हवेदान पुण्य काई कीजे ।
मानव भव लाहो लीजे ।।अव०।। १ ।।

भव सागरना भमता भमता, नर भव दोहिलो मलियो रे।
सपति मति रुडू कुल पाम्यौ, तो धर्म विषय थी रलियो रे ॥अव॥ २ ॥

यौवन जाय जरा नितु व्यापे, क्षण क्षण आयुस घावे रे।
रोग शोग नाना दुख देखी, तोस्ये नहीं सान न आवे रे ॥अव०॥ ३ ॥

क्रोध मान माया सहु मू को, परधन परस्त्री वर जोरे।
चरचो चरण कमल प्रभु केरा, जिम ससार न सरजो रे ॥अव०॥ ४ ॥

वृद्ध पणे तप जप नही थाये, जीवन वय जालविये रे।
घर लागे कूउ खोदीने तो कहो किम घर उल्हविये रे ॥अव०॥ ५ ॥

बहु परिवार घणी हु मोटो, मूरिख मोटि *सभखी रे।
स्वारथ बीते कोई नवि दीखे, तो जिम तरुवर ना पखी रे ॥अव०॥ ६ ॥

मे मे रत्तोरा माए तो, बृह्म तिजनिवारो रे।
मन मरकट नो हठ वशि आणो तो, नरभव फोकम हारो र ॥अव ॥ ७ ॥

पर उपगार करी जस लीजे, पर निंदा नवि करीये रे।
कुमुदचद कहे जिम लीलाई, तो भवसागर उतरीये रे ॥अव०॥ ८ ॥

राग गोडी (२३)

लालाद्यो मुझ चारित्र चूनडी, वेराग करारी रग रे।
व्रत भान भली घणी सोभती, वारु समकित पोत सुचगरे ॥ १ ॥

रुडी सोहे माहि तप फूदडी, छ'बियालि दयानि वेल्लि रे।
दशलक्षण डालि दीपती, शिल पत्र तणी रगरेलि रे ॥ २ ॥

मूल गुणनी विराजे मजरी, पच समिति पाखडी सोहत रे।
उची त्रण्य गुपति रेखा भजे, जेह्ने जोता मन मोहत रे ॥ ३ ॥

वर सवरनी तिहा चोकडी, वे ध्यान पालव सोहाय रे।
रटियालि रत्नत्रय कोर रे जोता मनुस्यु तृपति न थाय रे ॥ ४ ॥

एह उढी राजीमती साचरी, तेणे मोह्या सुरनर राय रे।
मोही मुगति साहेली रूपने, सूरो कुमुदचन्द बलि जाय रे ॥ ५ ॥

हतिगीत (२४)

ए ससार भमतडारे न लह्यो धर्म विचार ॥
मे पाप कर्म की धाधणी ते थी पाम्यो दुख अपार रे।
मन मोहन स्वामी मोरा अतरयामी, नमु मस्तक नामी देवरे ॥ १ ॥

ए तो कष्ट करीने पामीयोरे, मानव भव अवतार।
ते निष्फल मे नीगम्यो कहु सांभली तेहनी बात रे॥ २॥

मे कपट कीधा अति पाडूआ रे, रचियो अति परपंच।
मर्म मो सावलि बोलिया, बलि पोस्या इंद्रिय पांच रे॥ ३॥

क्रोध पिशाचि हु नम्यो रे, डसियो काम भुजुंग।
लहेरबाजी महा मोहनी, हु तो राच्यो पर त्रिय संगरे॥ ४॥

लोभ लपट थयो अति घणू रे, धन परियण ने काजि।
जोवन मद मातो थयो, तिणे आण्यो घणू एक वाजिरे॥ ५॥

आप वखाणू अति घणू रे, कोधी परनी तांति।
कूडा आलि चढाबियो, थयो उन्मत्त दिनराति रे॥ ६॥

मन वांछित सुख कारणे रे, कीधा पाप अघोर।
अति उज्जलता कारणे, धोयो कादव मांहि चीर रे॥ ७॥

कर्म कीधा अण जाणता रे, ते के कहेता थाय ते लाज।
ए मन मादा भे घणू कहु ते कोहने जई आजार॥ ८॥

हवे तु जग गुरु मझनें मल्योरे जगजीवन जगनाथ।
सूरी कुमुदचन्द करे वीनती, निज सेवक कीजे सनाथ रे॥ ९॥

राग परजीउ (२५)

वालि वालि तु वालिम सजनी, विण अवगुण किम छडी नारि।
तोरण थी पाछो जे वलियो, जइ चढियो गिरि गढ गिरिनारि॥ १॥

लीधो सयम श्री जिनराजि सुन्दर सहेसावन्न मझारि।
सुरनर किंनर कर्यो महोछव, जिम वलता नावे ससार॥ २॥

रोस इवेस्यु करियो पोफट, ते यदुनदन नावे बार।
कुमुदचन्द्र स्वामी सामलियो, उतारे भव सागर पार॥ ३॥

राग परजीयो. (२६)

लाल लाल लाल लाल तु माजासरे।

तोरण थी पाछो वल्यो ताहरी लोक करस्ये हास।
यदुनद रे, सुखकदरे, नेम एक सांभलो माहरी बीनती।
जिम वाघे ताहरी माम।
लीधा बोलज मूकता स्यु रहस्ये ताहरू नाम॥यदु०॥ १॥

एक बार तु जो पाछो बले तो किजे हास विलास ।
सखी सहुनें भूमखे रमता, फूलडा रुडा गास्य ।। २ ।।

कर जोडी ने वीनवू , वाल्हारथ पाछो वालि ।
ओ श्राम मुन्हे वाडी जसे, ताहरे माथे चढस्ये गालि ।। ३ ।।

रहे रहे रे यादवा जो डग भरे तो नेम ।
योवन वेशें एकली, वेर तुझ बिना रहु किम ।। ४ ।।

रहे उभो जो पाछु वली, तु सांभलि सुन्दर वाणि ।
श्रावे यादव मडली तेहनी, जाण हइयास्यु काण ।। ५ ।।

हुवे प्रेम करी पाछावलो, हठ मुको नेम नूरेन्द्र ।
दीन दयाल दया करो, इम बोले कुमुदचन्द ।। ६ ।।

राग धन्यासी (२७)

सगति कीजे रे साधु तणी वली, लीजे ते अरि रत नाम ।
जेह थी सीझे रे मन नू चीतव्यु , जिम लहो अविचल ठाम ।। १ ।।

जीवडा तुम करे सि माहरु, माहरु मनस्यु विमासी रे जोय ।
स्वारथ जाणी रे सहु आवी मल्यु, अत समे नही कोय ।। २ ।।

लक्ष चोरासी रे जोनि भमतडा, माणस जनम दुर्लभ ।
इम जाणी रे तप जप की जोई, घडियन करिये विलब ।। ३ ।।

तन धन यौवन जीवन थिर नाही, विघटी जास्ये सुजांण ।
ते माटइ करी सीख अह्यारडी पाल तो जिनवर आण ।। ४ ।।

पापज कीधा ते अति पाडुआ, रड चडिया ससार ।
धर्म ज पाम्यो रे कष्ट घणू करी, मूरख फोकम हार ।। ५ ।।

जे दुखदीठा ते अति दोहिली, ते जाणे जिन चद ।
हवे है यास्यु रे धर्मज कीजीये, जिम छूटो भव फद ।। ६ ।।

रामा रामा रे धन धन झखतो, पडियो तु मोहनी जाल ।
विषय विलूधो रे जिन गुण विसर्यो दिन दिन आवे छे काल ।। ७ ।।

सगा सहू नेरे सग पण कारिमू , सगो ते सही जिनराज ।
तेह नामइ थी रे शिवसुख पामीइ सरे ते जीवनू काज ।। ८ ।।

जोता जोता रे जग गुरु पीमीयो तेहथी मरहेसि दूरि ।
जनम मरण ना जिम दुख सहुटले, कहे कुमुदचन्द सूरि ।। ६ ।।

राग गुञ्जरी (२८)

म करीस परनारी नो सग ।, टेको ॥

हाव भाव करे ते खोटो जेह वो रग पतग ॥ म० करीस ॥ १ ॥

पेहेलु मन सताप चटपटी, सोक सताप ते भ्रावे ।
जेम लागो होये भूत भमता, ते मने चित भमावे ॥ म० ॥ २ ॥

भूखत रस नवि लागे तेहाथी, अन्न उदक नवि भावे ।
न रुचे वात विनोद कथा रस, नहि निसि निद्रा भ्रावे ॥ म० ॥ ३ ॥

लपट लोक कही बोलावे, सहु सज्जन रिसावे ।
माथे भ्राल चढे पतजाय, लोकहू सारथ थाते ॥ म० ३ ॥

राज दण्ड धन हाराग विगुचरगा, नरक माहे दुख कारी ।
कुमुदचन्द्र कहे करी वीमासरग, तजो चतुर परनारी ॥ मकरीस ॥ ५ ॥

राग सारग (२९)

नाथ भ्रनाथनी कु कछु दीजे ।

विरद सभारी छारीहउ मन ति, काहे न जग जस लीजे ॥ नाथ ॥ १ ॥
तुम तो दीनदयाल ही निवाज, कीयो हू मानुष गुरग भ्रव न गरगीजे ॥
व्याल बाल प्रतिपाल सविषतरु, सो नही भ्राप हरगीजे ॥ नाथ० ॥ २ ॥
मे तो सोई जोता दीन हूतो जा दिन को न छूई जे ।
जो तुम जानत उरु भयो हे, वाधि वाजार बेचीजे ॥ ३ ॥
मेरे तो जीवन धन सबहु महि, नाम तिहारे जीजे ।
कहत कुमुदचन्द्र चरग सरग मोहि जे भावे सो कीजे ॥ ४ ॥

राग सारग (३०)

जो तुम्ह दीन दयाल कहावत ॥

हमसी भ्रनाथनि हीन दीन कु काहे न नाथ नीवाजन ॥ जो० ॥ १ ॥
सुर नर किंनर असुर विद्याधर, सब मुनि जन जस गावत ।
देव महीरुह कामधेनु ते, भ्रधिक जपत सच पावत ॥ जो ॥ २ ॥
चन्द चकोर जलद ज्यु सारग मीन मलिलज ध्यावत ।
कहित कुमुदपति पावन तुहि, त हिरिदे मोहि भावत ॥ जो० ॥ ३ ॥

(३१) **मुनिसुव्रत गीत**

मुरत मोहन वेलडी रे, दर्सरग पाप पलाय ।
मुख दीठे दुख विसरे रे, सेवे छे मेवे सुरासुर पाय ॥

गज गामि आवो भामिनी ए; पुजेवा पुजेवा सुव्रत पाय ।।गज।।
तात सुमीत्र मनोहर रे, जेहनी पोमादेवी माय।
मुख सोहे जेहवो चांद लो, रे, स्यामल स्यामल वर्ण सुकाय ।। २ ।।
उचयणू अति जेहनुरे, बीश धनुष परमाण।
मोह माहाभट निर्दल्योरे, मयण मयण मनाव्यो आण ।।गज०।।३।।
नयर राजगृह उपना रे, जग गुरु जगदानद।
ध्यान करे नित जेहनु रे, मुनिवर मुनिवर केव वृ द ।।गज०।। ४ ।।
प्रगट्यु तीर्थ जेणे वीसमु रे, मनवाछित दातार।
गुणसागर अति रुवडारे, जेहना वचन अतिसार ।।गज०।। ५ ।।
दीनदयाल सोहमणी रे, सुदर करुणा सीधु।
जगजीवन जग राजीयोरे कारण कारण वीणए बधु ।।गज०।। ६ ।।
रोग साग नामे टले रे सहान वीघन हरे दूर।
सेवो भविक तम्हे भावसु रे, विनवे विनवे कुमुदचद सूर ।।गज०।। ७ ।।

।। इति मुनिसुव्रत गीत समाप्त ।।

(३२) हिन्दोलना गीत

विनय करीने वीनवू हीदोली डारे, भगवति भारति माय।
जेह नामि मति पामीये हिन्दोलीडारे वलि रे विमलमति थाये ।।
एक समय सू हिन्दोलडारे हीवती सखिय बे च्यार।
चन्द्र किरण सम उजलो ।।
हैडले झलके तोहार रातिरुडी अजूवालडी ।। हि० ।। २ ।।
धरि धरि उछव रास ।।
गाय ते गीत सोहामणी कामिनी करे रे विलास ।। ३ ।।
त्यारि राजुल कहे हे सखी, साभलो एक सन्देश।
जाउ सखी जइ बीनवो, सुन्दर नेमि नरेश ।। ४ ।।
माहरी वती करो वीनती, प्रणमीय तेहना पाय।
तुझ बिना पल एक मुझने घडीय बराबरि थाय ।। ५ ।।
घडी एक पहोर समानडी, पहोर दिवस दिन मास।
मास वरस दिम जेवडो वरस युगातर तास ।। ६ ।।
राति दिवस राजीमती समरे छे तम तणो नेह।
जिम सरोवर हसलो, बापियडा मन मेह ।। ७ ।।

धर्मीनू मन जिम धर्मसु, गुणिनी संगति गुणवंत।
जिम चक्रवाक मनि रवि बसे, कोयल जिम रे बसंत ॥ ८ ॥

याचक जिम समरे दातार ने, दातार पात्र उदार।
जिम निज घरि समरे पथियो सती समरे भरतार ॥ ९ ॥

जिम तृषातुर नीरने, तिम तुह्म रायुल नारि।
क्षणि-क्षणि वाट नीहालती, निज घर अगण बार ॥ १० ॥

पूछे पोपटने पाज रे, बोलो ने पोपट राज।
कहो क्यारि नेम जी आवस्यो, जम सरे अह्म तणा काज ॥ ११ ॥

वलिय पारेवाने वीनवे, साभल्यो तु तो सुजाण।
ताहरि गगन गति रूअडि, करि पिउ आव्यानु जाण ॥ १२ ॥

सकुन बधावो जोवती, पूछति पथि ने बात।
जे कहे नेमनी आवता, ते मोरो बाधवा वात ॥ १३ ॥

घर वन जाल सगू सहू, विरह दवानल झाल।
हु हिरणी तिहा एकली, केसरि काम कराल ॥ १४ ॥

मात पिता सहू वीसर्या, नही गये परिजन नाम।
वाहलो मने एक नेम जी, जेहो हमारो आतम राम ॥ १५ ॥

हेविहिणा मागु तुझ कह्नं, अह्मने तुमा सर जेस।
जो सरजे अह्मने वली, माणस जनम म देशि ॥ १६ ॥

जो भव दे मानव तणो, तोम करेस सयोग।
सजोग जो सर जे लेई, तोम करे सवियोग ॥ १७ ॥

इष्ट वियोग दुख दोहिला, ते दुख मुखे न कहवाय।
थोडा माहि समझो घणू तम विना मे न रहे वाय ॥ १८ ॥

भोजन तो भावे नही, भूषण करे रे सताप।
जोहु मरिस्य विलखि थई, तो तह्म लागस्ये पाप ॥ १९ ॥

पशु देखी पाछा वल्या, मनस्यु थयारे दयाल।
मुझ उपरि माया नही, ते तह्मे स्या रे कृपाल ॥ २० ॥

तह्मे सयम लेवा साचर्या, जाण्यो पम्या हवे मर्म।
एकस्यु रुसो एकस्यु तुसो, अवलो तुम्हारो धर्म ॥ २१ ॥

हिन्दोलना गीत का परिचय '' पृष्ट पर देखिये।

राज रडु अण्य लोकनू , रुडो हमारो योवन वेश ।
जो सरगे जस्यो तप करी, तिहा तो एहवू न लेहसि ॥ २२ ॥
हवे प्रभु पाछा वलो, करिये छे विनय अनेक ।
अति ताण्यु त्रूटे नेम जी, मन माहि करो रे विवेक ॥ २३ ॥
त्यारि दिवस हुइ पाधरा, त्यारि सगू सहु कोय ।
ज्यारि वांका थाये दीहडा, त्याहारि सज्जन बेरी होय ॥ २४ ॥
अथवा करम फर्यु अह्म तणू, तो तह्मस्यु कर्यो रोस ।
जेहवू दीधू तेहवू पामीये, कोहे दीजे नही दोस ॥ २५ ॥
रायुल अमीने इम कहीउ वलि-वलि जोडिने हाथ ।
प्रीछवो जो पाछा वले, जिम अह्म थाउ सनाथ ॥ २६ ॥
लेई सदेसो चालो सहु सखी जइ चढी गिरिवर शृ ग ।
धणीय जुगति करी प्रीछव्या, मन दीठु तेहनू अभग ॥ २७ ॥
आवी ते सखि पाछी वली, बात कही तिणिवर ।
ते तो बोले-चाले नही, मनस्यु निठोर अपार ॥ २८ ॥
त्यारि राजुल उठी सचरी, तजिय सपति ततकाल ।
सयम लेई तप आचर्यो जिम न पडे मोह जाल ॥ २९ ॥
व्रत रडा पाली करी पामी ते अमर विमान ।
कर्म तजी केवल लही, नेमि पाम्या निरवाण ॥ ३० ॥
ए भणता सुख पामीइ, विघन जाये सहु दूरि ।
रतनकीरति पट मडणो, बोले कुमुदचन्द्र सूरि ॥ ३१ ॥

(३३) अण्य रति गीत

दश दिशा बादल उनया दम्पति मनि उल्हास ।
दीसे ते दिन रलिया मणा, घन बरसे रे लवे बीज आकाश के ॥

वर्षा ऋतु ,

वरषा रति आदि आवी, आदि वरषा रति वाधे बहु रतिराज ।
न आव्यो रे पीउडो घरि आज, न आणी रे मनि निज कुल लाज ॥
स्यु कीजे रे नही पीउ सुख साज के, वरषा रति आज आवी ॥ १ ॥
पथीयडा झूरे घणू सामली दादुर सोर ।
बापीयडो पिउ-पीउ लवे पापीयडोरे बोले कलरव मोर के ॥ २ ॥

पखीयडे माला बस्या मनि धरी पावस प्रेम।
'काली ते मेहूण रातडी, बालूयडा विण सुने घरि रहीये केम के ॥ ३ ॥
गगन अति गडगडे बाजते भभावात।
कु ज विहगम मडली गीरि कन्दर रे, गु जे हरि कपि जात के ॥ ४ ॥
गाजे ते अम्बर छाहिउ, भड बादल बहु भाति।
अगियो अधार ते तग तगें बोले तिमिरा रे मरिमा भिम राति के ॥ ५ ॥
सुख समे प्रीउडो नावियो मनि थयो अतिहि नीठोर।
कोई भाभिनीह भोलव्यो, करि कामण रे मार चितडानो चोर के ॥ ६ ॥

शीत ऋतु

सोहमणा दिन शीतना गाये ते गोरी गीत।
शीतनो भय मनिधरी हवे मानिनि रे मु के मन तणा मान के ॥ ७ ॥
हिम रित रे बीजी आवी बीजी हिम रति रे सखि हरष निधान।
ना होलियो रे वसे गिरि गुहरान, वियोगे रे वणसे देह वान ॥ ८ ॥
योवन जाये रे प्रीउने नही सान के ॥
हिमरतें हिम पडे हे सवी दाभे ते धन वन राय।
तुभ बिना ए दिन दोहिला ह्मारी दाभेरे अति कोमल कायरे ॥ ९ ॥
वाजे ते शीतल वायरो, बाभे ते वाहिर ठार।
धूजे ते बनना पखिया किम रहस्ये ते वनि प्रियसुकुमार के ॥ १० ॥
बन छाडि दव भय कमलिनी, जले रहे मनि धरीनातेष।
तिहा थकी पणि हीमे दही नही, छुटियेरे वह्लि रातिरा लेख के ॥ ११ ॥
तेल तापन तुला तरुणी ताम्र पट तबोल।
तप्ततोयते सातमू सुखिया नेरे हिम रति सुख मल के ॥ १२ ॥
शीयालो सघलो गयो, पणि नावियो यदुराय।
तेह बिना मुभने भू रता एह दीहडारे वरसा सो थाय के ॥ १३ ॥
कोयल करे रे टहुकडा लहे केते अबा डाल।
बेलि ते पोपट पाढुउ तेह साभली रे स्ये न आव्या लाल के ॥ १४ ॥

ग्रीष्म ऋतु

ग्रीसम रितु त्रीजी आवी, त्रीजी ग्रीसम रति किम जास्ये एह ॥
घरे नाव्योरे नाहोलो धरी नेह, सामलिया रे मनि समरो गेह ॥ १५ ॥

नही तर रे प्राणत जस्ये देह के प्रीसम रति ।।
फूल्या ते चपक केवडा फूल्यु ले वन सहु कोय ।
पानडा पणि नही केरने, पुण्य पाखि किम रुडी सम्पति होय के ।। १६ ।।
तडको पडे अति दोहिलो, रवि तपे पर्वत शृ ग ।
अति झाल लागे लु तणी हवे आवो रे मुझ कज मृ गाक ।। १७ ।।
कर्पू र वाशित वारिस्यु चन्दने चरचु अग ।
केसर घसी करु छ टणा,
जो तु राखे रे हमारा मन तणो रग के ।। १८ ।।
कामिनी करि शृ गार, सरसी करे वन जल केलि ।
मामला मू को आयला मुझ सरिसोरे प्रिय मनडू मेलिके ।। १६ ।।
इम झूरती राजीमती, जई चढी गिरिनारि ।
सूरी कुमुदचन्द्र प्रभु नेमि ने धन्यासी रे आयो हु बलिहार के ।। २० ।।

(३४) वणजारा गीत

वण जारा रे एह ससार विदेस भयीय भमीतु उसनो ।
तेरी घणी घणी बार ज्यारे गीत पुर जोइया ।। १ ।।
लख्य चोराशी योनि गाम माहि तु रडवम्यो ।
मनस्यु विमासी जोय खोटे वणजे रगियो थयो ।। २ ।।
मूल गयु तिणि वार खोटि आवी दुखियो थयो ।।
जीब तु चतुर सुजाण मोह ठगा रे भोलव्यो ।। ३ ।।
कीधा कुसगति प्रीति सात व्यसन ते सेवीया ।।
पाप कर्‌या ते अनन्त जीव दया पाली नही ।। ४ ।।
साचो न बोलियो बोल मरम मोसाबहु बोलिया ।।
पर निंदा परतीति ते करी अण जाणते वणजारा रे ।। ५ ।।
आप बखाण्यु अपार, अवगुण ते सहु उलव्या ।।
कुड कपटनी खाणि, परधन ते चोरी लिया ।। ६ ।।
उलवी विसरी वस्तु, थापिज मू फी उलवी ।।
विषय विलूधो गमार, परनारी रगे रम्यो ।। ७ ।।
योवन मद थयो अध, हु हु हु करतो फिरयो ।।
रीस करी अण काज, गुण नवि जाण्यो क्षमा तणो ।। ८ ।।
इ द्रिया पोस्या पाच, पाप बिचार कर्‌यो नही ।।
पुत्र कलत्र ने काजि, हा हा हु तो हीडीयो ।। ९ ।।

सजन कुटब ने भिन्न आप सवारथ सहु मल्यु ।।
कीधा कुकर्म अनंत, धन धन रामा भख तो ।। १० ।।
घर परियण ने लोभ, वरणज घरणा तें के लव्या ।
तेह्वो न लाधो लाभ, जेणे लाभे सुख पामीये ।। ११ ।।
मरबु छे निरधार, तो फोकट फूले कस्यु ।।
कोई न आवेस्ये साथि हाथि दीघू साथे आवस्ये ।। १२ ।।
ते माटेस्यो रे जजाल, करतो हीडेतुकारिमृ ।।
साभल ये तु सीख, ममना मनोरथ जिम फले ।। १३ ।।
साज तु सुन्दर साध, मन रूपी रुडो पोठियो ।।
वारु बेराग पल्हारण, मुगति पटी तु भीडजे ।। १४ ।।
समकित रासडि बाधिजे, उवट जिम जाये नही ।।
सयम गुण पह्लारण धर्म वसाणे तु भरेव ।। १५ ।।
लीजे दया व्रत सार, शील तणो सग्रह करे ।।
अनुप्रेक्षा ते सभालि, त्रण्य रतन नु जतन करे ।। १६ ।।
पच महाव्रत भार, समित गुपति ते राख जे ।।
साधु तणो गुणवीर, जीव तणी परिजालवे ।। १७ ।।
सभारये नवकार, जिन जी तणा गुण मनिधरे ।।
ग्रन्थ पुराण विचार, धर्म शुकल ध्यान चिन्तवे ।। १८ ।।
सहे गोरनो उपदेश, एक घडी नवि विसरे ।।
तपनी तुम करेसि कारिण, जेणे कर्ममल सहु टले ।। १९ ।।
मधुर मोदक उपवास, गांठि सुखडली बाध जे ।।
निर्मल शीतल नीर ज्ञान घूटडला तु भरे ।। २० ।।
सत्य वचन पच खांण, ते सुखवास तु बावरे ।।
म करेसि तु परमाद, वाटे जालव तो जजे ।। २१ ।।
खडग क्षमा करे हाथ, चोर परिग्रह नास से ।।
सार्धामि ने साथ, मुगति तुरी वहेलो पुहचस्यो ।। २२ ।।
सिद्ध तणा गुण आठ, मुगति वधू तेंणे राचस्ये ।।
जम्म जराना त्रास, मरण वली–वली नही न हे ।। २३ ।।
काल अनतानत सौख्य सरोवरि झीलस्यो ।।
ए वणजारा नू गीत, जे गास्ये हरषे सही ।। २४ ।।
ते तरस्ये ससार अजर अमर थई महा लसे ।।
रतनकीरति पद धार, कुमुदचन्द्र सूरी इम कहे ।। २५ ।।

(३५) शील गीत

सुणो सुणो कता रे सीख सोहामणी ।
प्रीति न कीजे रे परनारी तणी ॥

त्रोटक .

परनारि साथि प्रीतडी, प्रीउडा कहो किम कीजिये ।
उघ आपी आपणी उजागरो किम लीजीइ ॥
काछडी छुटो कहे, लपट लोक माहि लीजीइ ।
कुल विषय खपण न खार लागे, सगामा किम गाजिये ॥ १ ॥

ढाल

प्रीति करता रे पहिलू बीभीये ।
रखे कोई जाणे रे मन मा धुजिये ॥

त्रोटक

ध्रुजीये मनस्यु भूरिये पण जोग मिल वोछे नहीं ।
ए राति दिन पलपता जाये, आवटी मरवु सही ॥
निज नारी थी सतोष न वल्यो, परनारी थी तोस्यु हस्ये ।
जो भरे भाणे नृपति न वली, एठ चाटेस्यु थस्ये ॥ २ ॥

ढाल

मृग तृष्णा थी तरस्य नही टले ।
वालू केसू पीले रे तेल न नीसरे ॥

त्रोटक

नवि नीकले पाणी विलोवता लेस माखण नो वली ।
छूडता वाचक भरा फाणे, तस्या बात न साभली ॥
ते म नारी रमता पर तणी, सतोष तो न वले धडी ।
चटपटी ने उचाट चागे, आँखि नावे निध्दडी ॥ ३ ॥

ढाल

जेहवो खोटो रे रग पतग नो ।
तेहवो चटको रे पर त्रिय सग नो ॥

त्रोटक

परत्रिया केरो प्रेम प्रिउडा रखे को जाणो खरो ।
दिन च्यार रग सुरग रुग्रडो, पछे न रहे निरधरो ॥
जे घणा साथे नहे माडे, छाडि तेहस्यु वातडी ।
इम जाणी मम करि नाहला, परनारि साथें प्रीतडा ॥ ४ ॥

ढाल

जे पतिवाह तोरे वचे पापिरा ।

परस्यु प्रीते रे राचे सापिरणी ॥

त्रोटक :

सापिणी सरखी वेरिण निरखी, रखे शील थकी चले ।
आखिने म'टके अगि लटके देव दानवने छले ॥
माडकालि अति रसाली, वारिण मीठी सेलडी ।
साभली भोला रखे भूले जाण जे विष बेलडी ॥ ५ ॥

ढाल

सग निवारो रे पर रामा तणो ।

शोक न कीजे रे मन मलवा घणो ॥

त्रोटक

शोक स्याह ने करो फोकट, देखा छू परिण दोहिलू ।
क्षरण सेरीइ क्षण मेडीइ, भमता न लागे सोहिलो ॥
उसास नइ नीसास आवे, अग भाजे मन भमे ।
वलि काम तापे देह दाझे अन्न दीठु नवि गमे ॥ ६ ॥

ढाल

जाय कलामी रे मनस्यु कल मने ।

उदमादो थइ रे अलल फसल लवे ॥

त्रोटक

तेलवे अलल फलल अजाणो मोह गहेलो मनि डरे ।
मह्रा मदन बेदन कठिन जाणी मरण वारु त्रेवडे ॥
ए दश अवस्या काम केरडी कत काया ने दहे ।
इम चित जाणी तजो राणी पारकी जिम सुख लहै ॥ ७ ॥

ढाल

परनारी ना पर भय साभलो ।

कता कीजे रे भाव ते निरमलो ॥

त्रोटक

निरमले भावे नोह समझो, परवधू रस परिहारो ।
चापियो कीचक भमिसेने, शिला हेठलि साभलो ॥
रण पडयां रावण दशे मस्तक रड वड्या ग्रन्थे कह्यु ।
ते मुजपति दुख पुज पाम्यो, अजस जग माहि रह्यो ॥ ८ ॥

ढाल ·

शील सलूणारे माणस सोहिये ।
विण आभरणें रे मन मोहीये ॥

त्रोटक

मोहिये सुरवर करे सेवा, विष अमीसायर थल ।
केसरीसिंह सीयाल थाये अनल अति शीतल जल ॥
सापथ ये फूलमाला लच्छि घरि पाणी भरे ।
परनारि परिहरि शील मनि धरि मुगति बहु हेलावरे ॥ ६ ॥

ढाल ।

ते माटइ हुरे वालि भवीनवू ।
पागि लागी नेरे मधुर वचने चवू ।

त्रोटक

वचन माहरुं मानिये परिनारी थी रहो वेगला ।
अपवाद माथे चढे मोटा, रक थइये दोहिला ॥
धन धान्य ते नर नारि जे दृढ शील पाले जगतिलो ।
ते पामसे जस जगत माहि, कुमुदचन्द्र समुज्जलो ॥ १० ॥

गीत राग धन्यासी (३६)

आरती गीत

करो जिन तणी आरती, अण सुख बारती ।
विघन उसारती भविक तणा ॥ १ ॥

थाल वर सोहती, सकल मन मोहती ।
प्रभु भव्य मोहती, तेज पूजा करो ॥ २ ॥

पुण्य अजू आलती, पापतिमर टालती ।
अमर पद आलती, अण प्रयासे ॥ ३ ॥

भव भय भजती, भाव रिंगजती ।
सुरमन रजती, राज्य मानती ॥ ४ ॥

वाजित्र बाजता, अ बर गाजता ।
नरवधू नाचता, मनह रगे ।। ५ ।।
जिन गुण गावता, शुभ मन भावता ।
सुगति फल पावता, चतुर चगि ।। ६ ।।
सुगन्ध सारग दहे, पाप ते नवि रहे ।
मनह वाछित लह, कुमुदचन्द्र करो जिन आरती ।। ७ ।।

(३७) चिन्तामरिण पार्श्वनाथ गीत

चालो चन्द्रमुखी सखी टोली, पहेरो पटोलि चोलि रे ।
पूजिये पावन पास जिणसर, पोमीये सपति बहोली रे ।। १ ।।
सन्दर बासव रास कपूरे, वासित जलें जिन पूजीई ।
जनम जराने जापन कीजे मरण थकी नवि बीहीजीए ।। २ ।।
चन्दन केशर ने रसि चरचो, अण्य भुवन केरो राय रे ।
पाप तणो सताप टले सहू, जिम मनि वछित थायेरे ।। ३ ।।
अक्षत पूज करो प्रभु आगलि, पच परम गुरु नामि रे ।
नव निधि चउदह रतन अति रुवडा, जिम लहीइ निजधामे रे ।। ४ ।।
जाई जूइ सरवर सेवत्रे, कुद कमल मचकुदे रे ।
चम्पक तरणी चम्पक लिइ, चरचो चरण आनद रे ।। ५ ।।
कूरदालि बडावर व्यजन, पोलिय घीइ झबोली रे ।
पातलडी पकवान चढावो, रची रचना वर उली रे ।। ६ ।।
दीवडलो अजू वालो रे आली, आरतडी उतारो रे ।
आरतडी भाजे जिम मननी पाप तिमिर सहू वारो रे ।। ७ ।।
सुन्दरी ससिबदनी प्रभु चरणे, कृष्णागरउ खेवोरे ।
पावन धूम शिखा परिमलना छूटिये करमनि खेवोरे ।। ८ ।।
कमरख कदली फल मोगागी, सखिय चढावो सारो रे ।
रायण करमदा बदाम बीजोरा दाडिम अति मनोहारी रे ।। ९ ।।
जल चन्दन अक्षत वर कुसुमे, चरु दीवडली धूपे रे ।
फल रचना सू अरघ करो सखी जिम न पडो भव कूपे रे ।। १० ।।
इस अनूपम भाव धरीने, पूजता पास जिणंद रे ।
रोग शोग नवि ते अगे, न हुई कोइस्यु देव रे ।। ११ ।।

भूत प्रेत पिशाचर पीडा, वाध वरु नवि अडके रे।
पास प्रभू तणू नाम जपता, नवि हेडे दुख खडके रे ॥ १२ ॥
सघन विघन वेगलडा जाये, नवि तारी बहु पाणी रे।
कुमुदचन्द्र कहे पास पसाइ, राखे मुगति महाराणी रे ॥ १३ ॥

(३८) दीपावली गीत

आज दीवालि रे बाई दीवाली, तह्मे पहेरो नव रग फालि।
धन-धन मगल तेरसि नो दिन पूज्य धार्या चाली रे ॥ १ ॥
गाऊ गी तब धावो गोरने, मोतीयडे भरी थाली।
चरचो अग चतुर सोहामणी, चरण कमल सु पखाली रे ॥ २ ॥
वुद्धि सिद्धि आपी अति रुअडी, कालि चउदसि काली।
प प हरण लीजे ते पोसो मननामल सहु टालि रे ॥ ३ ॥
चउदशिनी पाछलडी राति, कर्म तणा मद गाली।
महावीर पहोता निर्वाणे, अजरामर सुख शाली रे ॥ ४ ॥
गोतम गुरु केवल दीवडलो, लोकालोक निहालि।
सुरनर किंनर कर्यो महोछव, जय-जय रव देता ताली रे ॥ ५ ॥
तेज अमास परब दीवाली, परठी झाक 'झमाली।
घरि-धरि दीवडला ने झलके, राति दीसे अजुवाली रे ॥ ६ ॥
पडवे राति जुहार पटोला, तिरुडी मम चाली।
श्री सदगुरुना चरण जुहारो, पामो रधि रद्धि आली रे ॥ ७ ॥
बीजे हेजे करे ते भाविज वेह्नडली अति व्हाली।
ए पाचे दीहा जपन्होता, आवो आवो हरखे चालि रे ॥ ८ ॥
हास विनोद करे मृग नयणी, शशि वयणी रूपाली।
कुमुदचन्द्र नी वाणि मनोहर, मीठा अमिय रसाली रे ॥
आज दीवाली बाई दीवाली ॥ ९ ॥

राग धन्यासी गीत

(३९)

म करस्यो प्रीति ज एक रूखि।
एक कठिन वेदन नवि जाणे, एक मरे विलखी ॥ १ ॥
जल विन मीन मरे टल बलि ने, जलने काई नही।
बापियडा ने प्रिउ प्रिउ रटता, जलधर जाय वही ॥ २ ॥

तरस्यो ते मन जल जल झखे, जल जड थईज रहे ।
दीवे पडेय पतग मरे पणि दीवो ते न लहे ॥ ३ ।
प्रेम भरी जोतां चन्दनि हरषे मनस्यु चकोर ।
ते चादलडो चितन जाणे, धिग-धिग नेह निठोर ॥ ४ ॥
विकसे कमल दिवाकर देखी, ते तो मने न धरे ।
मोर करे अतिसोर सनेहे मेह न नेह करे ॥ ५ ॥
काया मन माया प्राणी ने, जीवें रही वलगी ।
जीव जतें सटके झटकीने, ते नाखी अलगी ॥ ६ ॥
नाद निमित्त मरे मृग गहेलो, नाद निगुण निगरोल ।
ते माटह मन राखो रुयडा, कुमुदचन्द्र ना बोल ॥ ७ ॥

राग वन्यासी गीत (४०)

सखि किम करिये मन धीर रे,
नेमि उज्जल गिरि जई रह्या हा रे हा ॥ १ ॥
जूउ नाथ नीउरनी पेर रे,
विण वाके किम परहरी हा रे हा ॥ २ ॥
मन हु ती मोटी आस रे, नाथ निरास करी गयो ॥ ३ ॥
सखि कहे ज्यो साची वात रे, मोह राखयु मा बोलस्यो ॥ ४ ॥
कुणे कीधू एह बू काम रे, तोरण जई पाछा वल्या ॥ ५ ॥
इणे किम न करी मन लाज रे, छोकर वादी सीकरी ॥ ६ ॥
जेणे रडती मूकी मात रे, वचन न मान्यु तात नु ॥ ७ ॥
तो कुण अहमारी पात रे, फोकट झाझू झूरीये ॥ ८ ॥
हवे धरीये सयम भार रे, जिम मन वाछित पामीये ॥ ९ ॥
जय जिनवर तु आसीस रे, कुमुदचन्द्र ना नाथ हा रे हा ॥ १० ॥

(४१) नेमि जिन गीत

बचन विवेक वीनवे वर राजुल राणी ।
साभलिये प्रिय प्रेमस्यु कहु मधुरी वाणी ॥ १ ॥
किम परणेवा आवीया सहु यादव मेली ।
तोरण थी किम चालियो रथ पाछो वेली ॥ २ ॥

विण वांके किम छाड़ियो, अबला निरधारी ।
बोल्या बोल न चूकीए, जिन जी मनोहारी ॥ ३ ॥

पशु अवाडि देखी फर्या ए मसि सहु खोटु ।
विगर सभारे आपणू ये जगमा मोटु ॥ ४ ॥

दीन दयाल दया करो, रथ पाछो वालो ।
समुद्रविजयनी आंण तले जो आघा चालो ॥ ५ ॥

मन मोहन पाछा चलो गृह पावन कीजे ।
योवन वय अति रूअडू तेहनो रस लीजे ॥ ६ ॥

हास विलास करो घणा, रमणीस्यु रमता ।
सुख भोगवीइ सामला सुन्दर मनि रमता ॥ ७ ॥

प्रिय पाखि दुर्जन हसे घरि किम करी रहीये ।
बिरह तणा दुख दोहिला कहु किम सहीये ॥ ८ ॥

अन्न उदक भावे नही, विष सरिखु लागे ।
मडन मनि-मनि नही, कामानल जागे ॥ ९ ॥

इम कहेनी रडति थकी राजुल ते थाकी ।
नेम निठुर माने नही गयो गिरिरथ हाकी ॥ १० ॥

कुमुदचन्द्र प्रभु शामलो जेणे सयम धरीयो ।
मुगति वधू अति रूबडी तेहने जई वरियो ॥ ११ ॥

गीत

(४२)

करो तम्हे जीव दया मनोहारी, हिसा नो मत जोरे प्राणी ।
जिम पामो भव पार ॥ १ ॥

पिण्ट शिखडिक नीहि साथी, लागु पाय अपार ।
जूउ यशोधर चन्द्रमति बेहु, भमीया भवत्रण च्यार ॥ २ ॥
भव पहेले भुपति के कीमा, स्वान तणो अवतार ।
बीजें भवे वन माहि सेहलो, श्याम भुजगम स्फार ॥ ३ ॥
मीन थयो त्रीजे चचल, सिन्धू विषय शिशुमार ।
जाल बन्ध अति छेदन भेदन दुक्खा तणो भण्डार ॥ ४ ॥
भव चोथे अज अजा पणे न हुउ सुक्ख लगार ।
जनम पाच मे अज भेसो थई, वह्यो अलेख भार ॥ ५ ॥
भव छट्ठे चरणायुध पक्षि जेहने जीव प्रहार ।
सातमे भवें कुसुमावलि गर्भ, युगल हवा ते उदार ॥ ७ ॥

एह ससार जाहि रड वडतां, दोहिलो कर्म बिचार ।
जेहवां दुख लहे छे प्राणी ते जाणे कीरतार ॥ ७ ॥
कृत्रीम जीव तणी हिंसा थी लागु पाप अपार ।
हिंसा नवि कीजे रे, प्राणी कुमुदचन्द्र कहे सार ॥ ८ ॥

(४३) गुरु गीत

सकल सजन मली रे, पूजो कुमुदचद ना पाय रे ।
पाट अद्योत कर्‌यो रे, जाणे ऋषिवर केरो राय ॥
गरुउ गोर अवतर्‌यो रे, दीठे दालिद्र पातिक जाय ।
उपदेशें उछवे रे सघ प्रतिष्ठा बहु विध पाय ॥
मत्र जपे रे यतीयचार पचाचार ॥ १ ॥
सुमति गुपति आदि ए पाले चारित्र तेर प्रकार ।
क्रोध कषाय तजी रे वेगे, जीत्यो रति भरतार ।
शील श्रृ गार सोहे रे, बुद्धि उदयो अभय कुमार ॥ २ ॥
सखी मे दीठडो रे, मीठडो सोल कला अस्यो चद ।
जीव रख्या करे रे, अनोपम दया तरुवर कद ॥
विद्याबलि करी रे, आंण मनाव्या वादि वृ द ।
जस बहु विस्तरयो रे, चरण कमल सेवे नरेन्द्र ॥ ३ ॥
आखडी कज पाखडी रे, अधर रग रह्यो परवाल ।
वाणी साभली रे, लाजी गई कोयल वन अतराल ॥
शरीर सोहामणू रे, गमने जीव्यो गज गुणमाल ।
को कहे गुरु अवतारे देउ, दान मान मोती माल ॥ ४ ॥
गोपुर गाय भलू रे, वसूधा मध्ये छे विख्यात ।
मोढ वशमा रे, साह सदाफल गोरवो तात ॥
शील सोभागवती रे, सु दरी पदमाबाई जेहनी मात ।
पुत्रम योरे लक्षण सहित पवित्र सुजात ॥ ५ ॥
सघपति कहान जी रे सघ वेण जीवादे नो कत ।
सहेसकरण सोहे रे तरुणी तेजल दे जयवत ॥
मलदास मनहरु रे मारी मोहन दे अति सत ।
रमा दे वीर भाई रे गोपाल वेजलदे मन मोहत ॥ ६ ॥

बारडोली मध्ये रे, पाट प्रतिष्ठा कीध मनोहार।
एक शत आठ कुंभ रे ढाल्या निर्मल जल अतिसार ॥
सूर मंत्र आपयो रे सकल संघ सानिध्य जयकार।
कुमुदचन्द्र नाम कहयू रे, संघवि कुटंब प्रतपो उदार ॥ ७ ॥

गीत (४४)

चालि—मोटो मुनि जी मोहन रूपे जाणिए।
॥
मुखमंडल जी पूरण शशि सोहामणो।
रूप रंग जी करुणावंत कोडामणो ॥

त्रोटक—कोडामणो ए रूप रंगि रतनकीरत सूरीराय जी।
एकें ते चिंते अनुभव्यो, पूजो ते ए गोर पाय जी ॥
पाय पूजो गुरु तणा जिम पामो सुख भंडार जी।
सूंदर-दीसे सोभतो भवियण नो आधार जी ॥

चालि—कीया पतिपाले भलो।
अभिनंदह जी पाटि, उदयो गुण निलो ॥
विद्यावंत जी शास्त्र सिद्धान्त सहू लह्यू।
संगीत सार जी पिंगल सहु पाठे कहे ॥

त्रोटक—पिंगल सहू पाठइ कहेने वाणी विबुध विशाल जी।
पर उपकारी पुण्यवंत भलो जीव दया प्रतिपाल जी ॥
जीव दया प्रतिपाल सूरिए गोर गच्छपति सार जी।
मूलसंघ माहिं महिमा घणो सरस्वती गच्छ सिणगार जी ॥

चालि—गिरुउ गोर जी क्षमावंत माधुगु जाणीए।
माया मोह जी मच्छर मनमानाणीए ॥
एहवो गोर जी तप तेजे सो जीपतो।
अवनि माहि जी दिन दिन दीसे दीपतो ॥

त्रोटक—दिन दिन दीसे दीपतो ने हुंबड वंशे आज जी।
सिंहासण सोहे भलो लीला लावण्य लाज जी ॥
लील लावण्य लाज सोहि रतनकीरति सूरीराज जी।
कर जोडी ने कुमुदचन्द्र सेवक सार्‌या काज जी ॥

(४५) दशलक्षरिण धर्म व्रत गीत

धर्म करो ते चित उजले रे, जे दस लक्षरण सार ।
स्वर्गतणा ते सुख पामीइ, जिम तरीये ससार ।। १ ।।
क्रोध न कीजे प्राणिया रे, क्रोध करे दुख थाय ।
धारु क्षमा गुण आणिया रे, जग सचलो जस गाय ।। २ ।।
कोमलता ते गुण आणिए रे, कठिन तजो परिणाम ।
तप जप सयम सहू फले रे, पामो अविचल ठांम ।। ३ ।।
सरल पणा थी सुख उपजे रे, मूंको मन नो मान ।
मन नो मेल न रखीइ रे, पामीय केवल ज्ञान ।। ४ ।।
जूठु वचन नवि बोलिये रे, बोलियो साचो बोल ।
मुख मडन रुअडू रे, सु करिये तबोल ।। ५ ।।
शोच पणू ते वली पामीए रे, बाह्य अभ्यतर भेद ।
भ्रष्ट पणा थी दुख पामीइ रे, जीणे धर्म उछेद ।। ६ ।।
सुन्दर सयम पालीइ रे, टालिये सर्व विकार ।
इद्रीय ग्राम उजाडिये रे, ताडिये दुर्द्धर मार ।। ६ ।।
बार प्रकारे तप कीजीइ रे, निर्मल थये रे देह ।
मुगति तणा ते सुख पामीइ रे, जेह तणो नहीं छेह ।। ८ ।।
दान मनोहर दीजीये रे, कीजिये निर्मल चित ।
जन्म जरा ना दुख सहु टले रे, पामीय सौख्य अनत ।। ९ ।।
ममता मोह न कीजीये रे, चितवीइ वेराग ।
साथे कोई न आवसरे, मूकीये मन नो राग ।। १० ।।
प्रेम करीने पालीये रे, ब्रह्मचर्य गुण खाणि ।
साभलना सुख पामीइरे, कुमुदचन्द्रनी वाणि ।। ११ ।।

(४६) व्यसन सातनू गीत

साते व्यसने वलूधो प्राणी, कीधा कर्म कुकर्म ।
लक्ष चोरासी योनि भमता, न लह्यो धर्म नो मर्म रे ।।
जीव मूके व्यसन असार, जीव छुटे तू ससार ।।जीव७। आचली ।।
व्यसन पहेलू जू वटु रमता, धन सघलू हारी जे ।
नाम जआरी कहि बालावे, लोक माहिलाजी जे ।।जीव०।। २ ।।

बीजे व्यसनें जीव हणी ने. मास भक्षन थई खायो।
तेहनें नरक माहि रड बडतां, दुख घणी परिखाये ।।जीव०।। ३ ।।

त्रीजे व्यसने सुरा जे पीये, तेहनी मति सहु जाये।
भखे आम्ल पखाल असुद्ध, जाति माहि न समाये ।।जीव०।। ४ ।।

वेश्या व्यसन तजो सहु चोथु, जे छे दुख भण्डार।
धन जाये लपट कहवाये, नासे कुल आचार ।।जीव०।। ५ ।।

व्यसन पांचमू जीव आखेटक, रमता जीव सताये।
मारे जीव अनाथ अवाचक, ते बूडे भव पाये ।।जीव०।। ६ ।।

साभलि सीख अह्मारडी छट्ठू म करिस्य केहनी चोरी।
ते सघला मलीने खासे, पडसे तुझ उपरि जमदोरी ।।जीव०।। ७ ।।

म करिस्य मूरख व्यसन सातमे परनारी नो सग।
हाव भाव करस्ये ते खोटो, जे हवो रग पतग ।।जीव०।। ८ ।।

जूआ रमता पाडव सीदाये सास थकी बक भूप।
मद्यपान थी यादव खीज्या, वणास्या तेहना काज ।।जीव०।। ९ ।।

चारुदत्त दुख अति घणु पाम्यो, राज्यो वेश्या रूप।
ब्रह्मदत्त चक्री आहेडे, ते पडियो भव कूप ।।जीव०।। १० ।।

चोरी थकी शिवभूति विडब्यो, जी शीके चढी रहे तो।
परनारी रस लपट रावण, ते जग माहि विगूतो ।।जीव०।। ११ ।।

व्यसन एक ने कारण प्राणी, पाम्या दुक्ख समूह।
जे नर सघला व्यसन विलूधा, टेहनी सी कहू बात ।। जीव०।। १२ ।।

इम जाणी जे विसर्जे, मनि धरी सार विचार।
श्री कुमुदचद्र गुरु ने उपदेशे ते पामे भव पार ।।
जीव मूके व्यसन असार, जेम छूटे तु ससार ।।जीव०।। १३ ।।

(४७) अठाई गीत

गौतम गणधर पाय नमीने, कहेस्यु मुझ मति सारुगी।
सांभलियो भवियण ते भावी, अष्टाह्निका विधि वारु जी ।। १ ।।

मास असाढ मनोहर सोहे, कार्तिक फागुण मासि जी।
आठमी धरी उपवास जी कीजे, मनुस्यु अति उल्लास जी ।। २ ।।

नाम भलू नदीश्वर तेहनू, टाले भवना फद जी।
एक लक्ष उपवास तणू फल, बोले वीर जिणंद जी ।। ३ ।।

नवमी दिन एकासन कीजे महा विभव तप नाम जी ।
दश हजार उपवास तणू, फल पामे शिव पद ठाम जी ॥ ४ ॥

दशमीने दीहाडे ते कीजइ, काजि कनो अहार जी ।
त्रैलोक्य सार शुभ नाम मनोहर, आपे त्रैलोक्य सार जी ॥ ५ ॥

साठि हजार उपवास फलेते, टाले मन ना दोष जी ।
एकादशीइ एकल ठाणू चोमुखे तप सतोष जी ॥ ६ ॥

पाच लक्ष दश गुण उपवासह जे छे पुण्य भण्डार जी ।
बारसिनें दिवसे ते कीजे, अणागार सुखकार जी ॥ ७ ॥

पाच लाख तप नाम चोरासी, लाख उपवास सफल कहीइ जी ।
तेरसि षट्रस अशन करी जे, स्वर्ग सोपानें रहीये जी ॥ ८ ॥

च्यालिस लक्ष उपवास तणू फल, आपे अति अभिराम जी ।
एक अन्न त्रिण व्यजन जमीइ, चउदिश दिन सुख धाम जी ॥ ९ ॥

सर्व सम्पदा नाम महातप, कहिये कलिमल नासे जी ।
एक लक्ष उपवास तणू फल, गौतम गणधर भासे जी ॥ १० ॥

पूनिम नो उपवास ज करिये इद्रकेतु तप भणीइ जी ।
त्रिण्य कोडि शिर लाख प्रमाणे, उपवासह फल गणिइ जी ॥ ११ ॥

सर्व मिलीने पाच कोडि एकतालिस, लक्ष दश सहस्र जी ।
वर उपवास तणू फल तहीये, अष्टाह्निका व्रत करेसि जी ॥ १२ ॥

मदन सुन्दरीइ मनने रगे, श्रीपाले व्रत कीधू जी ।
मन माहि अति भाव धरीने, मन बाछित तस सीधू जी ॥ १३ ॥

जे नरनारी व्रत करीस्य, तेहने घरि आणद जी ।
रत्नकीरति गोर पाट पटोधर, कुमुदचद्र सुरिंद्र जी ॥ १४ ॥

(४८) भरतेश्वर गीत

श्री भरतेश्वर रायस्या शुभ कीधला रे ।
कोण पुण्य कीधला रे ।
जिणे तात आदीश्वर पाम्या ।
सुरनर सेवित पाय ॥ १ ॥

समोसरणजी रचना जेहने, त्रण्य शालि तिहा भासइ ।
मानस्तभ च्यारे निसि सुन्दर, जेहथी मन उल्हासे ॥

वृक्ष अशोक अनोपम पुष्पित, शोभे श्री जिन पासे ।
जन्म जन्मना रोग शोक दुख, जे दीठे सहु नासे ॥ २ ॥
परिमल भार अपार गगन थी, कुसुम वृष्टि महिथाये ।
उहरि भ्रमर करे गुंजारव, जाणे जिन गुण गाये ।
सर्व जीवनी भासा माहि, संशय सघला जाये ।
साभलता दिव्य ध्वनि, जिननी मन मा हर्ष न माये ॥ ३ ॥
चचच्चन्द्र मरीचि मनोहर, उपरि चमर ढलाये ।
जे नर नमे जिनेश्वर चरणे, तेहना पाप पुलाये ॥
हेम सिंहासन उपरि बेठा, जिन शोभा न कलाये ।
च्यारे पासेइ चतुर्मुख दीसे, जोता तृप्ति न पाये ॥ ४ ॥
दीन दयाल प्रभु नी पाछलि, भामडल अति राजे ।
तेज पुंज देखीने जेहनू, रवि रजनीकर लाजे ॥
अतिगम्भीर तार तरलस्वन देव दुंदभि वाजे ।
जाणे मोह विजय वाजित्रज नादे अंबर गाजे ॥ ५ ॥
मंजुल मुक्ता जाल विराजित, छाजे छत्र अनूप ।
जेहनो इंद्रादिक जस गावे त्रण्य जगत नो भूप ॥
प्रातिहार्य वसु सख्य विभूषित, राजे रम्य सरूप ।
केवलज्ञान कलित भुवनत्रिक ते तारे भव कूप ॥ ६ ॥
भव्य जीव ने जे संबोधे, चोबीस अतिशयवंत ।
युगला धर्म निवारण स्वामी महिमंडल विचरंत ॥
शेष कर्म ने जीते जिनवर थया मुक्ति श्रीवंत ।
कुमुदचन्द्र कहे श्री जिन गाता, लहिये सुक्ख अनंत ॥ ७ ॥

(५०) पार्श्वनाथ गीत

हासोट नगर सोहामणो जिन सुन्दर वामानंद ।
गर्भ महोछव जेहनें सहू, आव्या इंद्र आणंद ॥
पासजी भपति पूहोजी, संकटहर संकट चूरो जी ॥ १ ॥
बादल नही वरसा नही, नही गाजनं बीज प्रचण्ड ।
अड्छ कोडि वररत्ननी, नित वरसे धार अखण्ड ॥ २ ॥
नयणदीठो नही साभल्यो, कही रयण तणो वलि मेह ।
ते तुझ मात गृह आंगणे, दठो दिन दिन अतिशय येह ॥ ३ ॥

जन्म जाण्यो जिन जी तणो, त्यारि मिलिया अमर सु जाण।
मेरु शिखर लेई जाई सिहा, कीधू जनम विधान ॥ ४ ॥

सजल घनाघन सामली, अतिकाय कला मनोहर।
रूप अनोपम जोवता, काम कोटि कीजे बलिहार ॥ ५ ॥

मन वेराग धरी करी, तह्मे मूक्यु महीपति साज।
बाल तप आदर्‌यो, तह्मे कीधू आतम काज ॥ ६ ॥

पछे योग जुगुति तीणें करी, धारी निर्मल आतम ध्यान।
घाति कर्मनो क्षय करी, उपनू वर केवल ज्ञान ॥ ७ ॥

लोक अलोक विषय करी, हरे पाप तिमिर जिनराज।
रवि छवि नवि शोभा लहे, चालि चन्द्र कला करी लाज ॥ ८ ॥

जीतिय घातिय चौकडी, तहमे पाम्या परम पद स्थान।
अकल स्वरूप कला तोरी, तु तो अमिन अमेरु समान ॥ ९ ॥

श्रीरतनकीरति गुरुने नमी, कीधा पावन पचकल्याण।
सूरी कुमुदचद्र कहे जे भणे, ते पामे अमर विमान ॥ १० ॥

(५१) अ घोलडो गीत

रमति करी घरि आवीया, कहे मरुदेवी माय।
आवो वच्छ अघोलवा, रुडा त्रिभुवन केरडा राय ॥

ऋषभ जी अघोलियो अघोलडी अगि सोहाय।
अघोलिये प्रथम जिनेद्र अघोलिये त्रिभुवन चद्र ॥ १ ॥

अगि लगाडू अति भलू, मघ मघ तु मोगरेल।
सखर सूये मुख चोपडु घालू माथे सारु केवडेल ॥ २ ॥

केसर चदन बावना भलू माहि व रास।
अगर तणो रग जो करी, अगे उगटणू सुवास ॥ ३ ॥

सुन्दर खल चोली करी, नह्नरावे सुरनारि।
सुवर्ण कु डी जले भरी, नेमि खल-खल निर्मल वारि ॥ ४ ॥

जव अघोलि उठिया अगोछि जिन अग।
रग सुरग विराजितु पहेर्‌या नाहना पीताबर चग ॥ ५ ॥

आजि आखि सोहामणी, त्रिभुवन जन मोहत।
अति सुन्दर केसर तणु, रुडु निलवट तिलक सोहत ॥ ६ ॥

उठ्या कुंभर कोडामणा, करो सुखडली सार ।
वेसी सुवर्ण वेसणे, मेहलू मेवा मीठा मनोहार ॥ ७ ॥
खारिक खहू लेलानवां दाख बदाम प्रखोड ।
पिस्ता चारोली भली, खाता मनस्यु थाये घणू कोड ॥ ८ ॥
घेवर फीणी खाजली, सखर जलेबी जाणि ।
मोदकने तल साकली चण्या साकरिया रस खाणि ॥ ९ ॥
एम नाना विध सूखडी, करी उठ्या नाभि मल्हार ।
खाधा पान सुरगस्यु, मरुदेवी करे सिणगार ॥ १० ॥
भिणो भगो विराजतो बाधी घटी ग्राणद ।
नवल पछेडी सोभती मोह्य मोलियो सुरनर वृंद ॥ ११ ॥
कांने कुंडल लहकता, हार हैए झलकत ।
कडिदोरो कडि उपतो, पगे धुघरडी घमकत ॥ १२ ॥
बाजू बध सोहामणी, राखडली मनोहार ।
रूपे रतिपति जीतीयो जाये कुमुदचन्द्र वलिहार ॥ १३ ॥

(५२) चौबीस तीर्थंकर देह प्रमाण चौपई

आदि जिनेश्वर प्रणमो पाय ।
युगला धर्म निवारण राय ॥
धनुष पचसे उंच शरीर ।
कनक कांति शोभित गभीर ॥ १ ॥
अजित नाथ आये सुर लोक ।
जनम मरण ना टाले शोक ॥
धनुष आए लेने पचास ।
उंच पणे हाटक सम भास ॥ २ ॥
संभव जिन सुख आये बहु ।
अहि निश सेव करे ते सहू ॥
धनुष च्यारसे दे प्रमाण ।
हेम वरण शोभे वरणाय ॥ ३ ॥
अभिनंदन नमतां दुख टले ।
मन ना वछित सघ ' '' ' ॥
.... उठते मडित काय ।
हेम काति दीठा सुख थाय ॥ ४ ॥

सुमतिनाथ वर मति दातार ।
उतारे भव सागरनो पार ॥
धनुष त्रिणसे सोहे देह ।
जत रोचि पूजो जिन एह ॥ ॥ ५ ॥

पमकांति करुणा कर क्षैव ।
सुर नर किन्नर सारे सेव ॥
चाप अढीसे मूरति मान ।
अरुण अनूपम दीये बानि ॥ ६ ॥

सेवो सु दर देव सुपास ।
जि पूरे वर मननी आस ॥
उ च पणे तनु शत युग चाप ।
नील वरण टाले सताप ॥ ७ ॥

चन्द्रप्रास चद्रानन भलो ।
शत मुख सेव करे जगतिलो ॥
धनुष डौढ मो मान जिणद ।
गोर काति टाले भव फद ॥ ८ ॥

पुष्पदंत सेवो मन शुद्धि ।
जे आये अति निर्मल बुद्धि ॥
सोज सराशन तनु उत्त ग ।
ऊजलडू सोभे जसु अ ग ॥ ९ ॥

शीतलनाथ सुशीतल वाणि ।
जे जिनवर गुण गणनी खाणि ॥
नेऊ चाप शरीर अनूज ।
हेम वरण सेवे जस भूप ॥ १० ॥

सेवो देव भलो श्रेयान ।
जे आपे मन वछित दान ॥
ऊच पणे विमऊ ।
धनुष हेम सम तनु जगदीश ॥ ११ ॥

वासुपूज्ये पूजो मन रग ।
जे पहिरे नवि भूषण अ ग ॥
सित्यर चाप अरूणस्यु रूप ।
तेहने नित्य उवेषो धूप ॥ १२ ॥

दोहा—पुण्य करो रे प्राणिया, पुण्य भलू ससार ।
पुण्ये मन वंछित मिले, रूप रगीली नारि ॥ १३ ॥

पाप न कीजे पाड्या, पाप थकी दुख थाय ।
पापी भार्यो प्राणियो, च्यारे गति मे जाय ॥ १४ ॥

चौपाई—वदो विमल विमल गुणवत ।
जेहना चरण नमे नित संत ॥
साठि शराशन देहज कर्यो ।
हेम वरण मुगति जइ रह्यो ॥ १५ ॥
समरो देव दयाल अनंत ।
अवर न कीजे खोटा तंत ॥
देह शराशन बे पच बीस ।
हाटक सरखी छवि नवि रीस ॥ १६ ॥
धर्मनाथ ने मन मां धरो ।
जिन शिवरमणी हेला वरो ॥
त्रीस पनर धनुष सोहंत ।
हेमवरण सुर नर मोहत ॥ १७ ॥
शांतिनाथ नू समरो नाम ।
जिन अघात टाले से ठाम ॥
विगुणा बीस शरासन बेर ।
हेम वरण जाणे नवि फेर ॥ १८ ॥
कुथु जिनेश्वर करूणा कद ।
जेहना चरण नमे सुर वृद ॥
धनुष बीस पनर तन काय
'हेम' वरण सुर नर जस गाय ॥ १९ ॥
समर्या सिद्धि करे अरनाथ ।
मुगति पुरी नो जे जिन साथ ॥
धनुष त्रीस ऊचा अति भला ।
शात कुभ नरषी तनु कला ॥ २० ॥
मल्लि जिनेश्वर महिमा घणो ।
जेह टाले फेरो भवतणो ॥
ऊचू अग धनुष पच बीस ।
हेम वरण सेवो निश दीश ॥ २१ ॥

पूजो जिन मुनिसुव्रत सदा।
रोग सोग नव आवे कदा॥
धनुष बीस तनु कलि काति।
जेह नामे नासे भव भ्रांति॥ २२॥
सेवो नमि नमि तस चरण।
सेवक जन नें शिव सुख करन॥
पन्नर चाप शरीर सु हेम।
वरण भस्म लो जमना क्षेम॥ २३॥
पूजो पद नेमीश्वर तणा।
जि पहोचे मननी सहु मणा।
उ च पणे दश धनुष सुस्याम।
काय कला दीसे अभिराम॥ २४॥
भवियण सहू समरो जिन पास।
जिम पहोचे सहू मननी आस॥
उ च पणें दीसे नव हाथ।
हरीत वरण दीसे जगनाथ॥ २५॥
महावीर वदू त्रिण काल।
जिम मेटे भव जग जजाल॥
सात हाथ सोहे जस तनू।
हेम वरण शोभे अति घणू॥ २६॥
ए चोबीसे जिनवर नमो।
जिम ससार विषे नवि भमो॥
पामो अविचल सुखनी खाणि।
कुमुदचन्द्र कहे मीठी वाणि॥ २७॥

(५३) श्री गौतम स्वामी चौपई

प्रेह ऊठी लियो गौतम नाम।
जिम मन वछित सीझे काम॥
गौतम नामि पाप पलाय।
गौतम नामि भावठिजाय॥ १॥
गौतम नामे नासे रोग।
गौतम नामे सुन्दर भोग॥

गौतम नामे गुण संपजे ।
गौतम नामे भूपति भजे ॥ २ ॥
गौतम नामे पुहचे आस ।
गौतम नामि लब्धि विलास ॥
गौतम नामे सब अघ टले ।
गौतम नामे सज्जन मिले ॥ ३ ॥
गौतम नामे बाधे बुद्धि ।
गौतम नामि नव निधि सिद्धि ॥
गौतम नामे रूप अपार ।
गौतम नामे हय गयै सार ॥ ४ ॥
गौतम नामि मंदिर धरणा ।
गौतम नामि सुख सहु तरणा ॥
गौतम नामि गमती नारि ।
गौतम नामे मोहे · · ॥ ५ ॥
गौतम नामि बहुदी करा ।
गौतम नामि नावे जरा ॥
गौतम नामि विष उतरे ।
गौतम नामे जलनिधि तरे ॥ ६ ॥
गौतम नामे विद्या धरणी ।
गौतम नामे निर्विष फरणी ॥
गौतम नामि हरी नवि नडे ।
गौतम नामें नवि आखडे ॥ ७ ॥
गौतम नामे नोहे शोक ।
गौतम नामे माने लोक ॥
सेवो गौतम गणधर पाय ।
कुमुदचन्द्र कहे शिव सुख थाय ॥ ८ ॥

(५४) संकटहर पार्श्वनाथनी विनती

गौतम गणधर प्रणमू पाय, जेह नामे निरमल मति थाय ।
गासु पास जीनेन्द्र ॥ १ ॥
अश्वसेन कुल कमल नभोमणी, जग जीवन जिनवर त्रीभोवन धणी ।
वामा राणी नंदो ॥ २ ॥

कमठ महा मदकरी पचानन, भवीक कुमुद वन हिमकर आनन ।
भव भय कानन दावो ॥ ३ ॥

नील वरण अति सुन्दर सोहे, निरखता सुर नर मन मोहे ।
मनु मगल भावो ॥ ४ ॥

नगर वराणसी जनम ज कहीये दरशन दीठे सिव सुख लहीये ।
महीयले महिमावत ॥ ५ ॥

बाल पणे जर सीधो, मोह महाभटनो क्षय कीधो ।
लीधु पद अरिहत ॥ ६ ॥

समोहसरण जीनवरनु राजे, केवल ज्ञान कला अति छाजे ।
भाजे भव सदेह ॥ ७ ॥

वाणी मधुरी मनोहर गाजे, अण वाजा वाजित्र ज वाजे ।
लाजे पावस मेह ॥ ८ ॥

देस विदेस वीहार करीने, कर्म पलोल सहु दूर हरीने ।
पाम्या परमानदो ॥ ९ ॥

तुम नामे सहु भावेठ भाजे, तुम नामे सुख सपति छाजे ।
छूटे भवना फद ॥ १० ॥

रोग सोग चिता सहु नासे, तुम नामे रुडी मत भाजे ।
आणद अग अपार ॥ ११ ॥

तुम नामे मेधल मद जलभर, रोस चढो केशरी अति दुद्धर ।
तेन करे कन थार ॥ १२ ॥

तुम नामे शीतल दावानल, तुम नामे फणपति अति चचल ।
नेह न करे मन सोस ॥ १३ ॥

उद्धति अरियण थलम कलाकर . टले दुष्ट जलधर ।
न हो बधन सोख ॥ १४ ॥

मात पिता तुम सज्जन स्वामि, तह्म बाधव तह्म अतर जामि ।
तमे जग गुरु मने ध्याउ ॥ १५ ॥

सकटहर श्री पाश जिनेश्वर, हासोट नयरे अतिसय सोभाकर ।
नित नित श्री जीन गाउ ॥ १६ ॥

जे नर नारि मनसु भणसे, तेहने घर नव निध सपसे ।
लहसे अविचल ठाम ॥ १७ ॥

श्री रत्नकीर्ति सुरिवर जतिराय, तेह परसादे जिन गुण गाय।
कुमुदचंद्र सुर नामि ॥ १८ ॥

(५५) लोडण पार्श्वनाथनी विनती

समरू सारदा देवि माय, अहनिशि सुर नर सेवे पाय।
आये वचन विलास ॥ १ ॥

लाड देस दीसे अभिराम, नगर डभोई सुन्दर ठाम।
जाहा छे लोडण पाश ॥ २ ॥

आवे सघमली मनरगे, नर नारि वादे* सहु सगे।
पूजे परमानदो ॥ ३ ॥

जय जयकार करे मन हरखे, जिन उपर कुसुमाजलि बरषे।
स्तवन करे बहु छदे ॥ ४ ॥

गाये गीत मनोहर सादे, पच सबद बाजे करि नादे।
.. नारि वृ द ॥ ५ ॥

वेलुनी प्रतिमा विख्यात, जाणे देस विदेसे बात।
सोहे शीस फणेंद ॥ ६ ॥

सागरदत्त हतो वणजारो, पाले नियम भलो एक सारो।
जिन वदी जय वानी ॥ ७ ॥

एक समय वाटे उतरीये, जम वावेला जित्त साभरीयो।
सच करे प्रतिमानो ॥ ८ ॥

वेलुनी प्रतिमा आलेखी, वादी पूजीने मन हरखी।
ते पधरावि कुपे ॥ ९ ॥

त्यारे ते वलुनी मूरत, जल माहि थई सुन्दर सूरत।
अग अनोपम रूपे ॥ १० ॥

वणजारो ते वेहेलो आव्यो, बलतो लाभ घणो एक लाव्यो।
उतरीयो तेणे ठामे ॥ ११ ॥

सागरदत्त करे सु विचार, वाटे कुशल न लागी वार।
ते स्वामिने नामे ॥ १२ ॥

राते सुपन हवू ते त्यारे, केम नाखी कूप मझारे।
काढ ईहा थी मझने ॥ १३ ॥

तु काचे तातणवे साडे, काढे हु न वलागुं भामारे ।
तुझने ॥ १४ ॥

वणजारो जाग्यो बेलक सु, उठो उल्टकर वरीयो मनसु ।
गयो ताहा परभाते ॥ १५ ॥

सज्जन साथे बात करीने, मुक्यो तातण जिन समरीने ।
सागरदत्तो जाते ॥ १६ ॥

काचे तातण जिनवर बेठा, लेहे कता सहु लोके दीठा ।
हलवा फूल समान ॥ १७ ॥

बाहेर पधारावि वे सार्या,जे जे जन सहु कोणे जुहार्या ।
आप्या उलट दान ॥ १८ ॥

जोतां हइडे हरष न भाय, वचने रूप कहु नवि जाय ।
चित असभम थाय ॥ १९ ॥

नाना विध वाजित्र व जाडे' आगल थी खेला न चाडे ।
माननी मगल गाये ॥ २० ॥

आएया अधीक दीवाजा साथे, वणजारे लीधा जिन हाथे
रम्य डभोई गाम ॥ २१ ॥

रुडे दीन मूरत जोइने, वारु पूजा नमण करीने ।
पधराव्या जिन धामे ॥ २२ ॥

नाम धरु ते लोडण पास, पचम काले पूरे आस ।
वाका विघन निवार ॥ २३ ॥

नामे चोर नडे नही वाटे, ऊजड अटवी डूगर घाटे ।
नदीयो पार उतारे ॥ २४ ॥

भूत पिशाच तणो भय टाले, चेडा मत्र न सश्रन ।
डाकीणी दूरे त्रासे ॥ २५ ॥

व्यतर वा पग्णी थई जाये, जस नामे विषहर नवि खाये ।
बाघ न आवे पासे ॥ २६ ॥

भव भवनी भावेठ जे मजे, रण माहि वेरी नवि गजे ।
रोग न जावे अ गे ॥ २७ ॥

जेहने नामे नासे सोक, सकट सघला थाये फोक ।
लक्ष्मी रहे नित सगे ॥ २७ ॥

नाम जपता न रहे पास. जनम मरण टाले संताप।
प्रापे मुगति नीवास ॥ २६ ॥

जे नर समरे लोडण नाम, ते पामे मन वाछित काम।
कुमुदचन्द्र कहे भाषा ॥ ३० ॥

(५६) जिनवर विनती

प्रभु पाय लागु करू सेव ताहारी।
तमे साभलो श्री जिनराव माहारी ॥

मन्हे मोह वेरी पराभव करे छे।
चौगति तणा दुक्ख नही वीसरे छे ॥ १ ॥

हू तो लक्ष चोरासिय योन माहि।
भम्यो जनम ने मरण करे मभाहे ॥

पूरा मे कर्या कर्म जे धर्म छाडी।
कबहु ते सहु साभलो स्वामी माडी ॥ २ ॥

हू तो लोभ लपट थयो कपट कीधा।
घणू मोलवी परतणा द्रव्य लीधा ॥

वली पड पोस्यो करी जीव हसा।
करी पारकी कुतली निज प्रसस्या ॥ ३ ॥

मे तो बालीया पार का मर्म मोसा।
नही भासीया आपणा पाप दोसा ॥

सदा सग कीधो परनारी केरो।
नही पालीयो धर्म जिन राज तेरो ॥ ४ ॥

पद्मोधर तणे पास ॰ ॰ ।
नही सभल्यो जिन उपदेस सुधो ॥

हू तो पुत्र परिवार ने मोह मातो।
नही जाणीयो जिनवर काल जातो ॥ ५ ॥

ग्रहरिंभनु पाप करी पड मार्यो।
माहा मुरखे नरभव फोक हार्यो ॥

गयो काल ससार आले ममता।
सह्या ते प्रति दुर्गति दुख अनता ॥ ६ ॥

घणे कष्ट जिनराज नु देव पाम्यो ।
हवे सर्व ससारना दुक्ल वाम्यो ॥
जारे श्री जिनराज नु रूप दीठू ।
त्यारे लाचने रूयडलु अमीय वूठू ॥ ७ ॥

आवी कामधेनु घर माहे चाली ।
भरी रत्नचिंतामणी हेम थाली ॥
जाणू घर तणो आगणे कल्पवृक्ष ।
फलो आलव वाछित दान सौक्ष ॥ ८ ॥

गयो रोग सताप ते सर्व माठो ।
जरा जन्मने मरण नो त्रासना हाठो ॥
हवे सरणे आप्या तणी लाज कीजे ।
कर्या जे अपराध सहु खमीजे ॥ ९ ॥

घणु विनवू, नवू छु जगनाथ देवो ।
मने आप जो भव भज स्वामि सेवो ॥
एह वीनती भावसु जे भणसे ।
कुमुदचद्र नो स्वामि शिव सौख्य देमे ॥ १० ॥

(५७) राग प्रभाती

जाग रे भवियण उ ध नवि कीजे ।
थयु सु प्रभावित नोकार गणीजे ॥ आवली ॥

प्रथम अरहतनू लीजिये नाम ।
जेम सरेरु अडला वछित काम ॥ जागो० ॥ १ ॥

सिद्ध समरता आलस मूको ।
माणस जनम ते फोकम चूको ॥ जा० ॥ २ ॥

पच आचार पाले यतिराय ।
तेहने वदता पाप पलाय ॥ जा० ॥ ३ ॥

जे उवझाय साहे श्रुतवत ।
तेहनू ध्यान धरिये एक चित ॥ जा० ॥ ४ ॥

साधु समरीई जे व्रत पाले ।
निर्मल ताप करी कर्ममल टाले ॥ जा० ॥ ६ ॥

पच परमेष्ठि जे ए नितु ध्याई ।
कहे कुमुद्रचद्र ते नर सुखी थाये ॥ जा० ॥ ७ ॥

(५८) राग प्रभाती

जागि हो भवियण सफल विहाणु ।
नाम जिनराज नूत्योतले भाण ।। १ ।आंचली ।।
वृषभ जिन अजित संभव सुखकारी ।
देव अभिनदन प्रगट्यो भवहारी ।। जा० ।। २ ।।
सुमिति पद्मप्रभ सागर गुण गाउ ।
जिनकी सुपासना गुण गण घ्याये ।। ला० ।। ३ ।।
चितवो चद्रप्रभ देव जिनराज
पुष्पदत्त नमों जिन सरे काज ।। जा० ।। ४ ।।
सकल सुख खाणी सीतल जिनदेव ।
समरो श्रेयास सुर नर करे सेव ।। जा० ।। ५ ।।
पूजतां वासुपूज्य गुण सार ।
विमल अनत भवसागर तार ।। जा० ।। ६ ।।
धर्म जिन शाति कुथ अर मल्लि ।
भग कीधी जेणे कामनी मल्ल ।। जा० ।। ७ ।।
नमो मुनिसुव्रत नमि दुख चरण ।
नेमि जिनवर मन वाछित पूरण ।। जा० ।। ८ ।।
पास जिन आस पूरे महावीर ।
एह चोबीस जिन मेरु समधीर ।। जा० ।। ९ ।।
जे नर नारी ए बीनती गास्ये ।
कहे कुमुदचन्द्र ते नर सुखी थास्ये ।। जा० ।। १० ।।

राग प्रभाती . (५९)

जागि हो भवियण उघीये नही घणू ।
थयुासु प्रभाति तू नाम ले जिन तणू ।।आचली।। १ ।।
उठी जिनराजने देहरे जइए ।
देव मुखि देखता जिम सुख लहीये ।।जागि०।। २ ।।
वंदे पद वदीई श्री गोर केरा ।
छुटीइ जिम वली भवतणा फेरा ।।जागि०।। ३ ।।
देव गूरु साख्य समायक कीजे ।
पच परमेष्टी नाम जपीजे ।।जागि०।। ४ ।।

ने पछी गुरु वचनामृत पीजे ।
जिम भव दुख जलाजलि दीजे ॥जागि०॥ ५ ॥
कीजीये सगति साधुनी रुडी ।
जेहथी उपजे नही मतिमूडी ॥जागि०॥ ६ ॥
क्रोध माया मद लोभ मूकीजे ।
हसीय सुपामने दानजदीजे ॥जागि०॥ ७ ॥
बोलिये वचनते सर्व सोहातु ।
जेहथी उपजे नही दुख जातु ॥जागि०॥ ८ ॥
मूकीय मोह जजाल सहू खोटु ।
जोडस्ये को नही आयुष त्रूटे ॥जागि०॥ ६ ॥
जायछे योवन थाप तु डार्यो ।
तप जप करीस्ये ने लीजीये लाहो ॥ जागि० ॥ १० ॥
कहे कुमुदचन्द्र जे एह चितवस्ये ।
तेहने घरि नितु मगल विलस्ये ॥ जागि० ॥ ११ ॥

राग प्रभाती (६०)

आवो रे सहिय सहिलडी सग ।
विघन हरण पूजीये पास मनरगे ॥ आचली ॥
नीलबरण तनु सुन्दर सोहे ।
सुरनर किन्नरना मन मोहे ॥ आवो० ॥ १ ॥
जे जिन वदिता वाछित पूरे ।
नाम लेता सहु पातक चूरे ॥ आवो० ॥ २ ॥
जे सुप्रभाति उठी गुण गाये ।
तेहने घरि नव निधि सुख थाये ॥ आवो० ॥ ३ ॥
भय भय वारण त्रिभुवन नायक ।
दीन दयाल ए शिव सुख दायक ॥ आवो० ॥ ४ ॥
अतिशयवत ए जगमाहि गाजे ।
विघन हरण वारु विरुद विराजे ॥ आवो ॥ ५ ॥
जेहनी सेव करे धरणेंद्र ।
जय जिनराज तु कहे कुमुदचन्द्र ॥ आवो ॥ ६ ॥

राग प्रभाती (६१)

उदित दिन राज रुचि–राज सुविभात ।
भाथ भावच भावय सुभ जात ॥
मु चहे मदत्वं मचक नत सुर ।
भज भगवत मभि भूरि भाभासुर ॥ १ ॥
त्यक्त तारुण्य युत तरुणी वर भोग ।
योग युक्ता यति ध्यान धृत योग ॥ मु० ॥ २ ॥
धृतह सित वदन कज भविक शत शात ।
विसृत विस्तार तम उच सघात ॥ मु० ॥ ३ ॥
सुरवर स्तुति मुखर मुख भूरि सुखमा कर ।
विश्व सुख भूमिनो वधनत्व हर ॥ मु० ॥ ४ ॥
बिगत तारा वर विहृत घन तद्र ।
हस भासा प्रमुद कुमुदचन्द्र ॥
मु चहें मदत्व मचक नत सुर ॥ मु० ॥ ५ ॥

राग पचम प्रभाती (६२)

आवोरे साहेली जइए यादव यणी ।
पाउले लागीने कीजे वीनती घणी ॥
आवडो आडबर करी सेहने ते आव्या ।
तोरण थी पाछा वली जाता लोक हसाव्या ॥ आ० ॥ १ ॥
विण वांके किम मू की ने चाल्या रुडा सामला ।
मनुस्यु विमासी जुयो मु की आमला ॥ आ० ॥ २ ॥
पीउडा पाखिरे किम मदिर रहीइ ।
कुमुदचन्द्र नो स्वामी कृपाल कहीइ ॥ आ० ॥ ३ ॥

राग बेराख प्रभाती (६३)

जागि हो भोरु भयो कहा सोवत ॥
सुमिरहु श्री जगदीश कृपानिधि जनम बाधिक खोवत ॥जागि॥ १ ॥
गई रजनी रजनीस सिधारे, दिन निकसत दिनकर फुनि उवत ।
सकुचित कुमुद कमलवन विकसत,
सपति विपति नयननी दोउ जोवत ॥जागि०॥ २ ॥
सजन मिले सब आप सवारथ, तुहि बुराई आप शिर ढोवत ।
कहत कुमुदचन्द्र यान भयो तुहि,
निकसत घीउ न नीर विलोवत ॥जागि॥ ३ ॥

(६) चन्दा गीत

विनय करी रायुल कहे, चदा ! वीनतडी अवधारो रे।
उज्जल गिरि जई वीनवो, चदा ! जिहा छे प्राण आधार रे।

गगने गमन ताहरु रुवडू, चदा ! अमीय वरषे अनत रे।
पर उपगारी तू भलो, चदा ! वलि वलि वीनवु सत रे ॥ १ ॥

तोरण आवी पाछा वल्या, चदा ! कवण कारण मुझ नाथ रे।
अह्य तणो जीवन नेमजी, चदा ! खिण खिण जोउ छु पथ रे ॥ २ ॥

विरह तणा दुख दोहिला, चदा ! ते किम मे सहे वाय रे।
जल विना जेम माछली, चदा ! ते दुख मे न कहे वाय रे ॥ ३ ॥

मे जाण्यु प्रीउ आवस्ये, चदा ! करस्ये हाल विलास रे।
सप्त भूमि नेउरडे, चदा ! भोगवस्यु सुखराशी रे ॥ ४ ॥

सुन्दर मदिर जालिया, चदा ! झलके छे रत्ननी जालि रे।
रत्नखचित रुडी सेजडी, चदा ! मगमगे धूप रसाल रे ॥ ५ ॥

छत्र सुखासन पालखी, चदा ! गजरथ तुरग अपार रे।
वस्त्र विभूषण नित नवा, चदा ! अग विलेपन सार रे ॥ ६ ॥

षट रस भोजन नव नवा, चदा ? सूखडी नो नही पार रे।
राज ऋधि सहू परहरी, चदा ! जई चढ्यो गिरि मझारि रे ॥ ७ ॥

भूषण भार करे घणा चदा ! नग मे नेउर झमकार रे।
कटि तटि रसना नडे घनि, चदा ! न महे मोतीनो हार रे ॥ ८ ॥

झलकति झालिहु झवहु, चदा ! नाह विना किम रहीये रे।
खीटली गति करे मुझने, चदा ! नागला नाग सम कहीये ॥ ९ ॥

टिली मोर नलवट दह, चदा ! नाक फूली नडे नाकि रे।
फोकट फरके गोफणे, चदा ! चोट नेम्यु कीजे चाकरे ॥ १० ॥
सेस फुल सीसे नवि धरु, चदा ! लटकती लन सोहाव रे।
धम धम करता घू घरा, चदा ! वीछीया विछि सम भाव रे ॥ ११ ॥
जे सूतो चित्रित उरडे, चदा ! ते रहे आज अगासि रे।
उन्हाले रवि दोहिलो चदा ! ते किम सहे गिरि वासे रे ॥ १२ ॥
वरसाले वरसे मेहलो, चदा ! वीजलो नो झातकार रे।
झझावात ते वाज से, चदा ! किम सहे मुझ भरतार रे ॥ १३ ॥
हिम रते हिय अति पडे, चदा ! थर थर कपे काय रे।
ए दिन योग छे दोहिलो, चदा ! स्यु करस्ये यदुराय रे ॥ १४ ॥

पोपटडो बोले पाडवू, चदा ! मोर करे बहु सोर रे ।
बापीयडो पिउ पिउ लवे, चदा ! कोकिल करे दुख घोर रे ।। १५ ।।

कर जोडी लागू पाउले चदा ! एटलू करो मुझ काज रे ।
जाउ मनावो नेम ने, चदा ! आपू वधामणी आज रे ।। १६ के

अगुलि दश दते धरु, चदा ! जई कहो चतुर सुजाण रे ।
जे मनमथ जग भोलवे, चदा ! ते तुझ मनि छे आण रे ।। १७ ।।

ते माटे मनमथ मोकली, चदा ! कतने करो आधार रे ।
सोल कला करी दीपतो, चदा ! तु रहे हर शिर लीनो रे ।। १८ ।।

मुझ विरहणी ना दीहडा, चदा ! वरस समान ते थाय रे ।
जो तह्मे काम ए नवि करो, चदा ! जगह सारथ थाय रे ।। १९ ।।

सदेसो लेई सचर्यो चदा ! गयो ते नेमि जिन पासे रे ।
युगति करी घणू प्रीछव्या, चदा ! मनस्यु थयो ते निरास रे ।। २० ।।

पाछावली आवी कह्यू चदा ! ते तो न माने बोल रे ।
साभलि रायुल साचरी चदा ! मू की मोहनो जजाल रे ।। २१ ।।

सयम लेई व्रत आचरी चदा ! सोलवे स्वर्ग हवो देवरे ।
अष्ट महा ऋद्धि जेहनें चदा ! अमर अमरी करे सार रे ।। २२ ।।

श्री मूलसघे मडणो चदा ! सुरिवर लखमीचन्द रे ।
तेह पाटि जगि जाणिये, चदा ! अभयचन्द मुणिंद रे ।। २३ ।।

पाटि अभयनदी हवा चदा ! रत्नकीरति मुनिराय रे ।
कुमुदचन्द्र जस उजलो, चदा ! सकल वादी नमे पाय रे ।। २४ ।।

तेह पाटि गुरु गुणतिलो, चदा अभयचन्द्र कहे चादो रे ।
जे गास्ये एह चदलो, चदा ! ते जगमा घणु नदो रे ।। २५ ।।

।। भ० अभयचन्द्र कृत चदा गीत समाप्त ।।

राग मट

(७०)

पेखो सखी चन्द्रप्रभ मुखचन्द्र ।। टेक ।।

सहस किरण सम तनु की आभा, देखत परमानन्द ।।पेखो०।। १ ।।
समयसरण सूभभुति विभूषित, सेव करेत सत इन्द्र ।
महासेन कुल कज दिवाकर, जग गुरु जगदानन्द ।।पखो०।। २ ।।
मनमोहन मूरति प्रभु तेरी, मैं पायो परम मुनीद ।
श्री शुभचन्द्र कहे जिन जी मोकू, राखो चरन अरविंद ।।पेखो।। ३ ।।

राग कल्याण (३)

आदि पुरुष भजो आदि जिनेदा ।। टेक ।।
सकल सुरासुर शेख सु व्यतर, नर खग दिनपति सेवित चदा ।।
जुग आदि जिनपति भये पावन ।
पति उदारण नाभि के नदा ।। १ ।।
दीन दयाल कृपा निधि सागर ।
सार करो अघ तिमिर दिनेंदा ।।आदि०।। २ ।।
केवलग्यान थे सब कछू जानत ।
काह कहू प्रभु मो मति मदा ।।
देखत दिन दिन चरण सरण ते
विनती करत यो सूरि शुभचन्दा ।।आदि०।। ३ ।।

राग सारग (४)

कौन सखी सुध लावे श्याम की ।। कौन सखी० ।।
मधुरी धुनी मुखचन्द विराजित, राजमति गुणगावे ।। श्याम० ।। १ ।।
अग विभूषण मनोमय मेरे, मनोहर माननी पावे ।
करो कछू तत मत मेरी सजनी, मोहि प्राननाथ मीलावे ।।श्याम०।। २ ।।
गजगमनी गुण मदिर श्यामा मनमथ मान सतावे ।
कहा अवगुन अब दीनदयाल, छोरि मुगति मन भावे ।।श्याम०।। ३ ।।
सब सखी मिलि मन मोहन के ढिग, जाई कथा जु सुनावे ।
सुनो प्रभू श्री शुभचन्द्र के साहेब, कामिनी कुल क्यो लजावे ।। ४ ।।

(५) शुभचन्द्र हमची

पावन पास जिनेश्वर वदु अतरीक्ष जिनदेव ।
श्री शुभचन्द्र तणा गुण गाउ वागवादिनी करि सेव रे ।। १ ।।
शशि वयणी मृग नयणी आवो सुन्दरी सहू मलि सगे ।
गाऊ श्री शुभचन्द्र तणोवर पाट महोछव रगे ।। २ ।।
श्री गुजराते मनोहर देशे, जलसेन नयर सोहावे ।
गढ मठ मदिर पोलिपगार, सजल खातिका भावेरे ।। ३ ।।
'हुबड' वश हिरणी हीरा, सम सोहे मनजी धन्य ।
तस मन रजन माणिक दे शुभ, जायो सुन्दर तन्न रे ।। ४ ।।

बालपणे बुधिवत विचक्षण, विद्या चउद निधान।
जैनागम जिन भक्ति करे एह, जिन सासन बहु तांन रे ।। ५ ।।

व्याकरण तर्क वितर्क अनोपम, पुराण पिंगल भेद।
अष्ट सहस्री आदि गंथ अनेक जु, च्हो विद जाणो वेद रे ।। ६ ।।

लघु दीक्षा लीधी मनरगे, बाल पणे जयकारी।
नवल नाम सोहे अति सुन्दर, सहेज सागर ब्रह्मचारी रे ।। ७ ।।

छण रजनी कर वदन विलोकित, अर्द्ध ससी सम भाल।
पकज पत्र समान सुलोचन, ग्रीवा कबु विशाल रे ।। ८ ।

नाशा शुक चचीसम सुन्दर अधर प्रवाली वृंद।
रक्तवर्ण द्विज पक्ति विराजित, नीरखता आनन्द रे ।। ९ ।।

रूपे मदन समान मनोहर, बुद्धे अभयकुमार।
सीले सुदर्शन समान सोहे, गौतम सम अवतार रे ।। १० ।।

एकदा अति आनदे बोले, अभयचन्द्र जयकार।
सुणयो सहु सज्जन मन रगे, पाट तणो सुविचार रे ।। ११ ।।

सहेज सिन्धु सम नही को यतिवर, जगमा जाणो सार।
पाट योग छे सुन्दर एहने, आपयो गछ नो भार रे ।। १२ ।।

सघपति प्रेमजी हीरजी रे, सहेर वश शृंगार।
एकलमल्ल अखई अति उदयो, रत्नजी गुण भडार रे ।। १३ ।।

नेमीदास निरूपम नर साहे, अखई अबाई वीर।
हुबड वश शृंगार शिरोमणि, वाघजी सघजी धीर रे ।। १४ ।।

रामजीनन्दन गागजी रे, जीवधर वर्द्धमान।
इत्यादिक सघपति ए सात आवा श्रीपुर गाम रे ।। १५ ।।

पाट महोछव माड्यो रगे, सघ चतुर्विघ लाव्या।
सघपति श्री जगजीवन राणो, सघ सहित ते आव्या रे ।। १६ ।।

दक्षण देशनो गछपती रे, धर्मभूषण तेडाव्या।
अति आडबर साथे साहमो करीने तप धराव्या रे ।। १७ ।।

शुभ मुहूरत जोई जिन पूजा, शातिक होम विधान।
जमणवार युग ते जल जात्रा, आपे श्रीफल पान रे ।। १८ ।।

सवत् सत एकवीसेरे, जेठ वदी पडवे चंग।
जय जयकार करे नरनारी, ढाले कलश उत्तग रे ।। १९ ।।

धर्मभूषण सूरी मत्र ज आप्या, थाप्या श्री शुभचन्द्र ।
अभयचन्द्र ने पाटि विराजि, सेवे सज्जन वृंद रे ।। २० ।।
दिम दिम मद्दन तबलन फेरी, तत्ताथेई करत ।
पच शबद बाजित्र ते वाजे, नादे नभ गज्जंत रे ।। २१ ।।
मनोहर मानिनि मगल गावत, गद्रव करत सुगान ।
बदीजन बिरुदावली बोले, आपे अगणित दान रे ।। २२ ।।
श्री मूलसघ सरस्वती गछे, विद्यानन्दी मुनीद ।
मल्लिभूषण पद पकज दिनकर, उदयो लक्ष्मीचन्द्र रे ।। २३ ।।
सहेर वश मडण मुकटामणि, अभयचन्द्र माहत ।
अभयनन्दी मन मोहन मुनिवर, रत्नकीरति जयवत रे ।। २४ ।।
मोठ वश शर हस विचक्षण, कुमुदचन्द्र जयकारी ।
तस पद कमल दिवाकर प्रगट्यो, सेव करे नरनारी रे ।। २५ ।।
अभयचन्द्र गरुयो गछनायक सेवित नृप नर वृंद ।
तस पाटे गुरु श्री सघ सानिध थाप्या श्री शुभचन्द्र रे ।। २६ ।।
परवादी सिंधुर पचानन, वादी मा अकलक ।
अमर माहि जिम इंद्र विराजे, सरवरि माहि ससांक रे ।। २७ ।।
दिवस माहि जिम रवि दीपतो, गिरि मा मेरु कहत ।
तिम श्री अभयचन्द्र ने पाटि, श्री शुभचन्द्र सोहत र ।। २८ ।।
श्री शुभचन्द्र तणीए हमची, जे गाये जिन धामे ।
श्रीपाल विवुध वदे ए वाणी, ते मन वछित पाये रे ।। २९ ।।

।। इति श्री शुभचन्द्रनी हमची ममाप्त ।।

(६)

प्रभाति

सुप्रभाति उठी श्री गोर गायो ।
जेम मन वछित वेग ले पाउ ।
सूरी अभयचन्द्र ना पद प्रणमीजे ।
जमन जनम तणा दुख गमीजे ।। सु० ।। १ ।।
पच महाव्रत सुध ला धारी ।
पच समिति वरे अग उदारी ।। सु० ।। २ ।।

अण्य गुपति गुरु चारित्र पाले ।
क्रोध माया मद लोभ ने टाले ॥ सु० ॥ ३ ॥
जेहने शील आभूषण सोहे ।
दीठडे भविबयाना मन मोहे ॥ सु० ॥ ४ ॥
वयण सुधारस पा अति मीठा ।
निरखतां लोचने अमिय पईठा ॥ सु० ॥ ५ ॥
वचन कला करी विश्व ने रजे ।
वादी अनेक तणा मद भजे ॥ सु० ॥ ६ ॥
श्री मूलसघ मडण मुनिराज ।
प्रगट्यो सबोधवा काजि ॥ सु० ॥ ७ ॥
रत्नकीर्ति पद कुमुद शशि सोहे ।
अभयचन्द्र दीठे जगत मन मोहे ॥ सु० ॥ ८ ॥
तारण तरण गोयम अवतार ।
नित नित वदित विबुध श्रीपाल ॥ सु० ॥ ९ ॥

(७)

प्रभाति

सुप्रभाति नमो देव जिणद ।
रत्नकीर्ति सूरी सेवो आनद ॥ आचली ॥
सबल प्रबल जेणें काय हराव्यो ।
जालणा पोरमाहि यतीये वधाव्यो ॥ सु० ॥ १ ॥
वाग्वादिनी वदने वसे एहने ।
एहनी उपमा कहीसे केहनें ॥ सु० ॥ २ ॥
गछपती गिरवो गुण गम्भीर ।
शील सनाह घरे मनधीर ॥ सु० ॥ ३ ॥
जे नरनारी ए गोर गीत गासें ।
गणेश कहे ते शिव सुख पास्ये ॥ सु० ॥ ४ ॥

(८)

प्रभाति

आवो साहेलडी रे सहू मिलि सगे ।
वादो गुरु कुमूदचन्द्र ने मनि रगि ॥आवो०॥ १ ॥

छद आगम अलंकार नो जाण ।
बारु चिन्तामणि प्रमुख प्रमाण ।।आवो०।। २ ।।
तेर प्रकार ए चारित्र सोहे ।
दीठडे भवियण जन मन मोहे ।।आवो०।। ३ ।।
साह सदाफल जेहनो तात ।
धन जनम्यो पदमा वाई मात ।।आवो०।। ४ ।।
सरस्वती गच्छ तणो सिणगार ।
वेगस्यु जीतियो दुर्द्धर मार ।।आवो०।। ५ ।।
महीयले मोढ बशे उ विख्यात ।
हाथ जोडाविया वादी सघात ।।आवो।। ६ ।।
जे नरनारी ए गोर गुण गाये ।
सयमसागर कहे ते सुखी थाये ।।आवो०।। ७ ।।

गीत

ढाल मुक्ताफलनी (६)

श्री आदि जिन नमी पाय रे, प्रणमी भारती माय रे ।
गास्यु गच्छपति राय रे, गाता सुख बहु थाय रे ।।
आवो साहेली सघली नारि रे, वादो कुमुदचन्द्र सार रे ।
रतनकीर्ति पाटि उदार रे, लघु पणे जीत्यो जिणे मार रे ।।आचली।
गोमडल नयर विशाल रे, तिहा वसे मोढ वश गुणमाल रे ।
सदाफल साह गुणवत रे, घरि रामापदमा मत रे ।। आवो० ।।
ते बेहू कुखि उपनो वीर रे, बत्तीस लक्षण सहित शरीर रे ।
बुद्धि बहोत्तरि छे गभीर रे, वादी नग खडन वज्र समधीर रे ।।आवो०।।
श्री मूलसघे गोयम समान रे, सरस्वति गच्छ महिमा निधान रे ।
तनू कनक समवान रे, मोटा महीपति मान रे ।। आवो० ।।
पच महाव्रत पाले चग रे, त्रयोदश चारित्र छे अभग रे ।
बावीस परीसा सहे अगिरे, दरशन दीठे उपजे रग रे ।। आवो० ।।
रत्नकीर्ति बोले वाणी रे, अमृत मीठी अमीय समाणि रे ।
बात देशातरे जाणी रे, पाटि आप्यो सुख खाणी रे ।। आवो ।।
कहान जी सहसकरण मल्लिदास रे, वीर भाई गोपाल पूरे आसरे ।
पाट प्रतिष्ठा महोत्सव कीध रे, जग मा यश बहु लीघ रे ।। आवो० ।।

बारडोली नगरे मनोहार रे, आप्यो पदनो भार रे।
तव हुवो जय जयकार रे, कहे संयमसागर भवतार रे ॥ भावो० ॥

राग धन्यासी (१०)

श्री नेमिश्वर गीत

सखिय सहू मिलि वीनवे वर नेमिकुमार।
तोरण थी पाछा वल्या, करीस्यो रे विचार ॥ १ ॥
राजीमती अति सुन्दरी गुणनो नही पार।
इंद्राणी नही अनुसरे जेहनूं रूप लगार ॥ २ ॥
वेणी विशाल सोहामणी जीत्यो श्याम फणिंद।
भाल कला अति रूवडी, अरधो जस्योचन्द ॥ ३ ॥
आखडली कज पाखडी, काली अणियाली।
काम तणा शर हारिया जेहनू सु नीहाली ॥ ४ ॥
आनन हसित कमल जस्यु नाक सरल उतग।
घणू अ करीस्यु वखाणीये सुडा चच सुचग ॥ ५ ॥
अरुण अधर सम उपता जेहवी पर वाली।
वचन मधुर जाणी करी कोयल थई काली ॥ ६ ॥
कठे कबु हरावीयो हैयडे हरे चिन्त।
बाहुलता अति लेहकती कर मन मोहत ॥ ७ ॥
अधर अनोपम पातलू जेहनू पोयण पान।
हरी लकी कटि जाणिये उरु रभ समान ॥ ८ ॥
पान्हीस उची अति रातडी आगलडी तेहवी।
सर्व सुलक्षण सुन्दरी नही मलसे एहवी ॥ ९ ॥
रहो रहो लाल पाछा चलो कह्यू वचन ते मानो।
हास विलास करो तह्य अति घणू मानाणि ॥ १० ॥
एह वचन मान्यु नही लीधो सयम भार।
तप करीस्या सुख पामिया सज्जन सुखकार ॥ ११ ॥
कुमुदचन्द्र पद चादलो अभयचन्द उदार।
धर्मसागर कहे नेमजी सहू ने जय-जयकार ॥ १२ ॥
॥ इति श्री नेमिश्वर गीत ॥

गीत

राग सारंग (११)

आवो रे भामिनी गज वर गमनी ।
वादवा अभयचन्द्र मिली मृगनयणी ।। आंचली ।। १ ।।
मुगताफलनी थाल भरीजे ।
गछ नायक अभयचन्द्र वधावीजे ।। आ० ।। २ ।।
कुंकुम चन्दन भरीय कचोली ।
प्रेमे पद पूजो गोरना सहूमली ।। आ० ।। ३ ।।
हुबड वंशे श्रीपाल साह तात ।
जनम्यो रूडी रतन कोडम दे मात ।। आ० ।। ४ ।।
लघु पणें लीधो महाव्रत भार ।
मन वश करी जीत्यो दुर्द्धर मार ।। आ० ।। ५ ।।
तर्क नाटक आगम अलंकार ।
अनेक शास्त्र भण्या मनोहार ।। आ० ।। ६ ।।
भट्टारक पद एहने छाजे ।
जेहनो यश जगमा वारू गाजे ।। आ० ।। ७ ।।
श्री मूलसघे उदयो महीमा निधान ।
याचक जन करें गेह गुण गान ।। आ० ।। ८ ।।
कुमुदचन्द्र पाटि जयकारी ।
धर्मसागर कहे गाउ नरनारी ।। आ० ।। ९ ।।

(१२)

कुमुदचन्द्रनी हमची

सुन्दर नर एक निरुपम उदयो, अवनी अधिक उदार।
मूलसंघ मुगटामणि दिनमणि सरसति गछ मझार रे ॥ १ ॥
हमचडी माहरी हेलि रे, गोरनी बडो मोहन वेलि।
रत्नकीरति पाटई कुमुदचन्द्र सोहे, सेवो सजन साहेल रे ॥ २ ॥
सकल रयण गुणे करी मडित, गोमण्डल घन गाय।
सदाफल सा तस नयरि, सुन्दर पदमाबाई भ्रन धाय रे ॥ ३ ॥
एवेहू कूले नर निपनो पावन पुरुष पवित्र।
बाल ब्रह्मचारी सग नही नारी, समकित चित सोहें विवरे ॥ ४ ॥
सामुद्रिक शुभ लक्षण सोहे, कला बहोत्तरि अग।
चतुर चउरत्नहे पंच प्रेमै वहे त्रण्य रयणहुरे दग रे ॥ ५ ॥
सील सोहागी ज्ञान गुणेकरी, कदर्प दर्प हराव्यो।
भाग्य आपणे सोहे गोर सजनी, उत्तरथी आहां आवो रे ॥ ६ ॥
सघपति काहानजी सेहेस करण धनवीर भाई गुणे मल्लिदास।
गुण मडित गोपाल सहुमली, आव्यो पट्टोधर पास ॥ ७ ॥
कल्याणकीरति आचार अनोपम, उपम अवनी अपार।
महिमावत महीमा मुनिवर, माने मोटा मांहल रे ॥ ८ ॥
संवत् सोल छपन्ने सवत्सर प्रगट पटोधर थाप्या।
बारडोली नयरे रत्नकीरति गोरे सुर मत्र शुभ आप्या ॥ ९ ॥
दिन–दिन दीपे परमत जीये जति जिन शासनचन्द्र।
श्रीसंघ सानिध नाम कहे, गोर कुमुदचन्द्र मुनेन्द्र रे ॥ १० ॥
पडित पणे प्रसिद्ध प्राकमो वागवादिनी वर एहने।
सेवो सुरतरु चिरयो चिन्तामणि उपमा नहीं केहने रे ॥ ११ ॥
परम पावन गोर पुजनां प्रेमे अल जो करे मझ मन्न।
नयणें नीरखी सजनी सहे गोर ते दिन कहिस्ये धन्य रे ॥ १२ ॥
साध पुरुस जेम श्रीजिन वाचे मधुकर मालति संग।
मान सरोवर मराल वांछे, चतुरनें चतुर सुरंग रे ॥ १३ ॥
चकवी जिम दिन करने वांछे, चातुक मेह मन थाय।
तिम वछुं हुं कुमुदचन्द्र गोर, पूजता पाय पलाय रे ॥ १४ ॥
सघाष्टके सोभतो सेहे गोर, वादी ए कही हे सजनी।

मनोरथ पहोचसे मन तणा रे, सफल फलस्ये दिन रजनी रे ।। १५ ।।
विद्यानंदि पाट मल्लिभूषण भन लखमीचन्द्र अभेचन्द्र ।
अभेनदी पाट पटोधर सोहे रत्नकीरति मुनीद्र रे ।। १६ ।।
कुमुदचन्द्र तस पाटइ दिन मणि घडी ख्यात जगि जेह ।
वदन तो सुन्दर वाणी जलधर श्री सब साथे नेह रे ।। १७ ।।
हरषे हमची कुमुदचन्द्रनी गाये सुणे नर नार ।
सकट हर मन वछित पूरे, गणेस कहे जयकार रे ।। १८ ।।

।। इति श्री कुमुदचन्द्रनी हमची समाप्त ।।

अवशिष्ट

ब्रह्म जयराज (४५)

ये भट्टारक सुमतिकीर्ति के शिष्य थे। इनके द्वारा लिखा हुआ एक गुरु छन्द प्राप्त हुआ है जिसमे भट्टारक सुमतिकीर्ति के पट्ट शिष्य भट्टारक गुणकीर्ति के पट्टाभिषेक का वर्णन दिया हुआ है। पूरे गुरु छन्द मे २९ पद्य है जो विविध छन्दो वाले है। ब्रह्म जयराज ने और कितनी रचनाए लिखी इसकी गिनती अभी नही की जा सकी है। उक्त रचना मे सवत् १६३२ मे होने वाले पद्मकीर्ति के पाट महोत्सव का वर्णन आया है। गुरु छन्द का सार निम्न प्रकार है—

भट्टारक गुणकीर्ति सुमति कीर्ति के शिष्य थे। राय देश मे चतुरपुर नगर था। वहा हूबड जातीय श्रेष्ठी सहजो अपार वैभाव के स्वामी थे। पत्नी का नाम सरियादे था। सहजो जाति के शिरोमणि थे और चारो ओर उनका अत्यधिक समादर था। उनके पुत्र का नाम गणपति था जिसके जन्म पर विविध प्रकार के उत्सव आयोजित किये गये थे। युवावस्था के पूर्व ही उमने कितने ही शास्त्रो का अध्ययन कर लिया। वे अत्यधिक सुन्दर थे। उनका शरीर अत्यधिक कोमल एव आंखे कमल के समान थी। लेकिन गणपति चिन्तनशील थे इसलिये विवाह के पूर्व ही वे सुमतिकीर्ति के शिष्य बन गये। उनका नाम गुणकीर्ति रखा गया।

साधु बनने के पश्चात् उन्होने बागड देश के विविध गांवो मे विहार करना प्रारम्भ किया। डूगरपुर मे सघपति लखराज द्वारा आयोजित महोत्सव में इन्हे पाँच महाव्रत पालन का नियम दिया गया। इसके पश्चात् शान्तिनाथ जिन चैत्यालय मे इन्हे उपाध्याय पद से विभूषित किया गया। उपाध्याय जीवन मे इन्होने गोम्मटसार आदि ग्रन्थो का पठन पाठन किया। कुछ समय पश्चात् इन्हें

---

१ इसका विवरण पहिले नही दिया जा सका।

आचार्य बना दिया। गुणकीर्ति अत्यधिक प्रतिभाशाली एवं चतुर सन्त थे। ज्ञान एवं विज्ञान के वे पारगामी विद्वान थे। सघ व्यवस्था मे वे कुशल थे। उनके गुरु भट्टारक सुमतिकीर्ति उनसे अतीव प्रसन्न थे और अपने योग्यतम शिष्य को पाकर अत्यधिक आशान्वित थे। इसलिये उन्होने उन्हे अपना उत्तराधिकारी घोषित कर दिया। बागड़ देश में उन्होंने अपना पूरा प्रभुत्व स्थापित कर दिया।

डूगरपुर के उस समय रावल आसकरण शासक थे। वे नीति कुशल न्यायप्रिय शासक थे। उनके शासनकाल में जैनधर्म का चारों ओर प्रभाव था। नगर में अनेक सघपति थे जिनमें कान्हो, धर्मदास, रामो, भीम, शंकर, दिडो, कचरो, रायम आदि के नाम विशेषतः उल्लेखनीय हैं। इन्होने नगर के बाहर महाराजा आसकरण से क्षत्रक्षेत्रीय बावड़ी के लिये स्थान मांगा और एक महोत्सव के मध्य उसकी स्थापना की गयी। इस समय जो जलयात्रा का सुन्दर जलूस निकाला गया था उसका वर्णन भी अतीव सजीव एव सुन्दर हुआ है।

सवत् १६३२ मे इन्होने भी एक विशेष महोत्सव मे अपने ही शिष्य को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया और उसका नाम पदमकीर्ति रखा। गुणकीर्ति ने इस समारोह को बडी धूमधाम से आयोजित किया। युवतियों ने मगल गीत गाये। विविध प्रकार के बाजा बजे। देश के विभिन्न भागो से उस समारोह में भाग लेने के लिये सैकड़ो व्यक्ति आये।

शान्तिदास (४६)

ये कल्याणकीर्ति के शिष्य थे। बहुबलीवेलि इनकी प्रमुख रचना है जिसको लघु बाहुबली बेलि के नाम से लिखा गया है। इसमे २६ पद्य है। उक्त बेलि के अतिरिक्त इनकी अनन्तव्रत विधान, अनन्तनाथपूजा, क्षेत्र पूजा, भैरवमानभद्र पूजा आदि और भी लघु रचनायें मिलती है। हिन्दी के अतिरिक्त, सस्कृत मे भी कुछ पूजा कृतिया मिलती है। लघु बाहुबली बेलि में इन्होने अपना निम्न प्रकार परिचय दिया है—

भरतनरेश्वर आवीया नाम्यु निजवर शीस जी।
स्तवन करी इस जपरा हू किंकर तू ईस जी।
ईस तुमनि छाडीराज मझानि आपीउ।
इम कही मन्दिर गया सुन्दर ज्ञान भुवने व्यापीउ।
श्री कल्याणकीरति सोम मूरति, चरणदेव मिनाणि कइ।
शांतिदास स्वामी बाहुबलि सरण राखु प्रभु तुम्हतणी।

नामानुक्रमणिका

ग्राम एवं नगर